ज्ञानपीठ-लोकोदय-ग्रन्थमाला सम्पादक और नियामक
लक्ष्मीचन्द्र जैन, एम० ए०

प्रकाशक
अयोध्याप्रसाद गोयलीय,
मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ,
दुर्गाकुण्ड रोड, बनारस

प्रथम संस्करण
१९५६
मूल्य ढाई रुपया

मुद्रक
विद्यामन्दिर प्रेस (प्राइवेट) लि०,
डी० १५।२४, मानमन्दिर,
बनारस

भूमिका

वैयक्तिक निवन्ध (Personal Essays) की शैलीके इन शृङ्खलावद्ध लेखोंका मेरे व्यक्तिगत जीवन और चिन्तनसे निकटका सम्बन्ध है। मानवीय सह-अनुभूतिके व्यापक नियम के अनुसार इनका दूसरोंके लिए भी रोचक और उपयोगी होना स्वाभाविक है—इसीमे इस लेखमालाके प्रकाशनकी सार्थकता है। 'मुझे आपसे कुछ कहना है' के पश्चात् ऐसी निवन्धमाला की यह मेरी दूसरी पुस्तक है।

कैलास,
सिकन्दरा–आगरा
मई १९५६

अनुक्रम

प्रथम खण्ड

द्वितीय खण्ड

[प्रथम खण्ड]

मुझे भी कहना है

एक आदमीने एक रात एक सपना देखा।

उसने देखा कि वह नगरकी चौड़ी सडक पर अकेला चला जा रहा है। सड़क सुनसान पड़ी है—कोई दूसरा उस पर चलनेवाला नही है। चलते-चलते अचानक पास ही, पीछेकी ओरसे एक अति कोमल, मीठे रमणी-कण्ठकी आवाज आई—"सुनिये।"

उसने गर्दन घुमाकर पीछेकी ओर देखा, पर वहाँ कोई न था। विस्मय पूर्वक चारो ओर उसने दृष्टि दौडाकर देखा पर कही कोई भी न दीख पडा। उस स्वरको अपने कानोका कोई भ्रम मानकर वह आगे बढ चला।

कुछ दूर चलनेपर फिर पीछेकी ओरसे ही उसके कानोमे आवाज आई—"ठहरिये!"

उसने उसी प्रकार चौंककर देखा, इस बार भी वहाँ कोई न था। आश्चर्य-चकित और कुछ भयभीत-सा वह कुछ और आगे बढ गया। दूसरी बारका यह स्वर विशेष गम्भीर, सुदृढ और स्निग्ध, किसी पुरुषका था।

तीसरी बार फिर उसके कानोमे उसी प्रकार एक तीसरी आवाज़ आई। अबकी बार किसीने उसका नाम लेकर पुकारा और इसके साथ ही उसकी आँख खुल गई। उसने अनुमान किया, यह तीसरी गम्भीर और अत्यन्त कोमल आवाज़ भी किसी पुरुष की ही थी।

जागकर वह अपनी कल्पनाके कानोमे इन तीनो आवाजोको दुहराने लगा। वह अपने मस्तिष्कका पूरा वल लगाकर सोचने लगा कि आखिर ये आवाजे उससे क्या कहना चाहती थी? इन तीनो स्वरोमे उसके लिए सचमुच वडा रस और साथ ही सुखद आश्चर्यका सामान था। जिनकी ये आवाजे थी वे उसे स्वप्नमे दीख जाते तो वह स्वप्न कितना सुन्दर हो जाता!

यही सब सोचते और पछतावा-सा करते हुए उसे फिर नीद आ गई। रात उस समय तक पूरी नही हुई थी।

आँख झपते ही उसे दुबारा फिर वही स्वप्नका दृश्य दिखाई दिया—वह उसी सड़कपर चला जा रहा है। "सुनिये"! उसने पहले वाली आवाज फिर सुनी। गर्दन घुमाकर उसने देखा, एक अत्यन्त रूपवती तरुणी, जो सम्भवत. नगरकी सबसे अधिक सुन्दर नवयुवती थी और जिसके साथ दो-एकबार उसकी सतृष्ण आँखे चार हो चुकी थी, उसके पीछे मानो तेज़ीसे चलकर उसके समीप आ गई थी। उसकी आँखोमे एक अनिवार्य आकर्षण और कोई गहरा निवेदन भी था। इस आदमीने ज्योही उसकी ओर घूमकर उससे कुछ कहना या उसकी अगली बातको सुनना चाहा, वह एकदम अदृश्य हो गई। उसे फिर देख पानेके अपने प्रयत्नोंमे विफल होकर वह हताश अपनी राह पर बढ चला।

"ठहरिये!" पिछले स्वप्नकी दूसरी आवाज़ उसके कानोमे दुबारा आई। घूमकर उसने पहचाना, नगरका सबसे बडा शासन-अधिकारी, जो नगरका सबसे बडा धनिक भी था उसे हाथसे रुकनेका संकेत कर रहा था। उसके स्वर और दृष्टिमे प्रसन्नता और स्नेहकी भावना छलक रही थी। पीछेकी ओर पग लौटाते ही यह मूर्ति भी अदृश्य हो गई।

वह स्वप्न-द्रष्टा खोया-हारा-सा आगे बढा।

तीसरी आवाज, अपने नामकी पुकार—इस पुकारमे पिछले स्वप्नकी वही दृढता और मिठास अब भी ज्योकी त्यो थी—उसने फिर सुनी।

फिरकर उसने देखा, नगरका सर्वाधिक प्रिय लोकनायक—जिसकी सहृदयता और बुद्धिमत्तापर सारा नगर मुग्ध था और जिसे नगर-शासक अपना सबसे वड़ा मित्र और पथ-प्रदर्शक मानता था—अपना हाथ मानो उसका हाथ लेनेके लिए वढाये हुए उसे पुकार रहा था। नगरका ही नही, सारे राज्यका वह सबसे अधिक सुन्दर, सौम्य और प्रभावशाली पुरुष था। लेकिन आगे कुछ कहने-सुननेसे पूर्व ही वह मूर्ति भी अदृश्य हो गई और स्वप्न देखनेवाला व्यक्ति दुबारा जाग उठा।

इस स्वप्नका अर्थ क्या था ? स्वप्नोंका क्या कुछ अर्थ भी हुआ करता है ?

स्वप्नोका कुछ अर्थ होता हो या न होता हो, इतना अवश्य है कि कुछ स्वप्न सुन्दर होते है—उन स्वप्नोको देखते समय सुख मिलता है और उनकी यादकी मिठास भी कुछ समय तक बनी रहती है। कुछ स्वप्नोसे देखनेवालेको कभी-कभी सोचनेके लिए कुछ कामका मसाला भी मिल जाता है।

जिन तीन व्यक्तियोको इस आदमीने दूसरे स्वप्नमे देखा उन्हे वह पहलेसे ही जानता था, उनके कृपा-पूर्ण सम्पर्कमे आनेकी कभी-कभी उसने कुछ कामना भी की थी और उनके सम्पर्कको अपना सबसे बडा सुख और सौभाग्य मान सकता था। इनके निकट सम्पर्कको यह अति दुर्लभ भी मानता था। उन तीनो मूर्तियोकी याद करते-करते वह कुछ देरके लिए बिछौनेपर पड़ा हुआ एक गहरे सुखमे नहा उठा।

और तब उसे ध्यान आया कि वह केवल एक सपना ही था। वह केवल एक झूठा दृश्य ही था, इस बातकी उसके मनमे एक टीस भी कसक उठी। निस्सदेह, इससे उसके मनको एक पीडा भी हुई।

वह सोचने लगा—क्या यह बिलकुल असम्भव है कि वह सुन्दरी सचमुच उससे कुछ प्रेम करती हो या आगे कर सके, उस राज्याधिकारीकी कृपा-दृष्टि और उस सर्वमान्य लोकनायककी सहृदय मित्रता उसे कभी प्राप्त हो सकती हो ! सोचते-सोचते उसके हृदयमे इन तीनोके सम्पर्ककी कामना स्पष्ट रूपसे जाग उठी।

अचानक स्वप्नकी एक नई विशेपता उसकी स्मृतिमे कौध उठी। पहले स्वप्नमे उसने केवल आवाजे सुनी थी और जागकर उन आवाजोका अर्थ जानने और उनके बोलनेवालोका रूप देखनेकी कामना भी की थी। स्वप्नकी इस विशेषताका ध्यान आते ही हर्ष और आश्चर्यकी एक भावना उसके हृदयमे उबल पडी। स्वप्नकी सार्थकतामे उसकी कुछ आशा-सी बँध गई।

किसी सुन्दर स्वप्नको इच्छा करनेपर दुबारा देख सकना और इच्छानुसार ही उसकी कुछ गहराइयोमे भी जा सकना एक अत्यन्त सुखद अनुभव

है। इस प्रकारका अनुभव स्वप्नकी सार्थकताको सिद्ध नहीं तो कुछ न कुछ पुष्ट अवश्य करता है। स्वप्नकी सार्थकताको नहीं तो, उस स्वप्न देखनेवालेकी इच्छाकी सार्थकताको तो वह अवश्य ही कुछ न कुछ सिद्ध कर देता है।

क्या आपको कभी इस प्रकारका—किसी इच्छित स्वप्नको अधिक विस्तारके साथ दुबारा देखनेका अनुभव हुआ है ?

मेरे कुछ मित्रोको, और एक-आधवार सम्भवत. मुझे भी ऐसा अनुभव हुआ है। लेकिन इस लेखमे या इस मालाके अगले लेखोमे मुझे स्वप्नो और इच्छाओकी सार्थकताकी वाते नही कहनी हैं। स्वप्नो और इच्छाओका मेरे और आपके जीवनमे कैसा स्थान है, मैं स्वय अच्छी तरह नही जानता[1] और जिन वातोका मेरे और आपके दैनिक जीवनसे सीधा, महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध नही है, उनमे मेरी रुचि भी नही है।

उस आदमीने पहली वार जो सपना देखा वह स्वप्न न होकर सच्ची घटना होती तो उससे यह अभिप्राय तो निकाला ही जा सकता था कि ये तीनो व्यक्ति उस आदमीसे कुछ कहना चाहते थे।

और दूसरी वारके दर्शनसे यह भी थोड़ा-बहुत अनुमान लगाया जा सकता है कि ये सभी किस प्रकारकी वात कहना चाहते थे। उनके शब्द पहले जितने ही होते हुए भी उनकी मुखाकृति और दृष्टि से वह आदमी अनुमान लगा सकता था कि वे स्नेह और अनुकम्पा की ही कोई वात उससे कहना चाहते थे।

---

१. वैसे, मैंने कही पढ़ा है कि हमारे आर्य पूर्वजोको मध्य एशिया से भारतकी ओर बढ़नेकी पहली प्रेरणा एक स्वप्न-द्वारा ही प्राप्त हुई थी। सम्राट् अशोकको, एक गहरी निराशाके समय स्वप्न-जैसी अवस्था में ही अपने कार्यक्रमके उज्ज्वल भविष्यका दर्शन हुआ था। स्वतन्त्र भारतकी राष्ट्रिय पताकामें अशोकके धर्म-चक्रका स्थान सम्भवतः उस सम्बन्धमें भी कुछ सार्थकता रखता है। अस्तु, यह केवल प्रसंगवश है।—लेखक।

उन तीनोंके बोले हुए तीन विभिन्न शब्दोका एक सर्व-निष्ठ अर्थ अवश्य था; और वह था, 'मुझे आपसे कुछ कहना है, और कोई प्रिय बात कहनी है।'

और इन पक्तियोके लेखक, मुझको भी इनके पाठक, आपसे कुछ कहना है।

उस आदमीकी दृष्टिमे उन तीनो व्यक्तियोका जो मूल्य था, वह आपकी दृष्टिमे मेरा नही हो सकता। उस तरुणीका निमत्रण-भरा सौन्दर्य, उस शासकका कृपा-पूर्ण सामर्थ्य और उस जन-नायककी आकर्षणशील बुद्धिमत्ता मुझमे ससारके किसी भी व्यक्तिके लिए नही हो सकती, फिर भी उन तीनों मूर्तियोके और मेरे कथनोमें एक सजातीय वस्तु आपको मिलेगी।

उन मूर्तियोंने उस आदमीसे केवल एक-एक शब्द कहा, और उसे सोचना पडा—'उन्हे मुझसे कुछ कहना था, कोई प्रिय-सी बात! लेकिन वे कह नही पाये।'

मैं आपसे अगले लेखोमे हजारो शब्द—सम्भवत. पच्चीस हजारके लगभग शब्द कहूँगा, और उन्हे सुनकर आपको भी सोचना पडेगा,—'इस लेखकको कुछ कहना था, सम्भवत कुछ अच्छी-सी बाते ही, लेकिन यह कह नही पाया!'

इस 'कहनेकी' और कहकर भी 'कह न पानेकी' सार्थकता उस स्वप्न-दर्शीकी तरह सम्भवतः आप भी देखेगे।

इस लेखमालाकी अगली पक्तियोंको पढकर उनके शब्दोसे बाहर आपको स्वय ही कुछ सोचना पडेगा।

यह सोचना आपके लिए प्रिय भी होगा और अच्छा भी!



सवाल बनाम सिगरेट

"साहब, इस समय एक सवाल है ।"

"सवाल क्यो ? सिगरेट क्यो नही ? मै सवाल नही चाहता, मुझे सिगरेट दो ।" बिछौनेपर पड़े हुए घायल कप्तानने अपने नौकरकी बातका उत्तर दिया ।

नौकरने सफेद दवाके सफूफमे लपेटकर एक सिगरेट कप्तानके पाइपमे खोसकर सुलगा दी । वह सिगरेट पीने लगा । नौकर दूसरे काममें लग गया । सिगरेटका धुआँ गलेमे उतरते ही उसके सीनेके घावका दर्द एकदम हलका हो गया ।

कप्तानको लड़ाईके मोर्चेपर गहरी चोट आई थी और उसका स्वामिभक्त नौकर किसी प्रकार उसे मैदानसे उठाकर उसके घर ले आया था । फौजकी वह टुकड़ी दुश्मनकी गोलियोसे लगभग भून ही दी गई थी, जो घायल सिपाही मैदानमे गिरकर जीवित भी बचे थे उन्हे भी वही पड़े-पडे कुछ समय बाद दम तोडना पड़ा था । दुर्भाग्यवश घायलोको उठाने और उनकी चिकित्साका कोई प्रबन्ध नही हो पाया था । इन कप्तान साहबके अपने घर जीवित पहुँच जानेका ऊँचे फौजी अधिकारियोको पता तक न था और वे इनकी गिनती मरे हुए सिपाहियोमे ही कर चुके थे ।

कप्तानके पास एक दवा थी जिसका धुआँ सिगरेटमे लपेटकर पीनेसे शरीरका कोई भी दर्द कुछ घंटोके लिए तुरन्त दूर हो जाता था । इसी दवाके सहारे वह निश्चिन्त भावसे अपने गाँवके घरमे आराम कर रहा था ।

हर दूसरे-तीसरे घंटे कप्तानको सिगरेट देनेकी उस नौकरको आज्ञा थी । अगली बार जब वह सिगरेट देने आया तब फिर उसने कहा—

"साहब, एक बात—"

"वात कुछ नही। सिगरेट लाओ और मौज करो। तुम्हे कोई चीज चाहिए ?"

"नही साहव, लेकिन—"

"तव फिर लेकिन वेकिन कुछ नही। सिगरेट लाओ और अपना काम करो।",

नौकर जानता था कि साहवको जरा भी अधिक वोलनेके लिए प्रेरित करना उनके लिए हानिकारक होगा। विवश होकर वह चुप हो जाता था।

सिगरेटकी दवा कई दिनसे चलते-चलते अव समाप्त हो आई थी, और गाँवके जिस डाक्टरने वह दवा वनाई थी वह मर चुका था। वह दवा अव कहाँसे आये, और दवा न आ सके तो कप्तानको शहरके अस्पतालमे स्थायी रूपसे रोग-निवारणके लिए किस तरह पहुँचाया जाय, ये ही प्रश्न नौकरके मनमे चक्कर लगा रहे थे, और इन्हे ही वह कप्तानके सामने रखना चाहता था। लेकिन कप्तानके कठिन स्वभाव और हठधर्मी के कारण वह अभी तक अपनी वात उसके सामने नही रख पाया था।

अगली वार कप्तानको सिगरेट देते हुए नौकरने कहा—

"साहव, यह आखिरी सिगरेट है।"

"लाओ आखिरी सिगरेट, यह पहली जैसी ही अच्छी है।" कप्तानने उसके हाथसे सिगरेट लेते हुए कहा और धुआँ उगलने लगा।

तीन घटे वाद उस कप्तान, और उसके नौकरपर जो कुछ वीती उसका अनुमान आप भी कर सकते है।

चिकित्सा विज्ञानका एक अग है जिसे तात्कालिक चिकित्सा या पहला सहारा First Aid कहते है।

इस पहले सहारेमे वीमारी या चोट थोडी देरके लिए प्राय दव जाती है और पीडितको कुछ आराम मिल जाता है, लेकिन यह पहला सहारा रोगको दूर नही कर पाता। इस पहले सहारेका दीर्घ काल तक सहारा लिया जाता रहे और कष्टके स्थायी निवारणका प्रयत्न न किया जाय तो यह पहला सहारा वहुत हानिकारक भी हो सकता है। रोग वाहरसे दवकर

भीतर ही भीतर और तेजीसे फैलकर शरीरको, और भी घातक हानि पहुँचा सकता है।

लेकिन आजकी दुनिया अपने सामाजिक, व्यापक जीवनसम्बन्धी रोगोके मामलेमे ऐसे पहले सहारोंके ही पीछे पडी हुई है।

दुनियाके लोग आमतौरपर अपनी समस्याओंको सोचते नही, उनके सम्बन्धमे कुछ सुनते तक नही, केवल उनसे एकदम स्वतन्त्र और निर्बन्ध हो जाना चाहते हैं। उन समस्याओसे एकदम बच जाना चाहते हैं।

वे कहते है 'हमे रोटी चाहिए, जमीन चाहिए, दूसरोंपर इतना-इतना अधिकार चाहिए।'

वे इन चीजोके लिए आपसमे सघर्प करते है। इन्हे पाते है और खोते है। फिर पाते है, फिर खोते है। उनके सघर्पोंका अन्त नही होता।

"तुम्हारी समस्याओका हल रोटी, जमीन और अधिकारोके लिए पारस्परिक सघर्षमे नही, सस्कृति, धर्म, ज्ञान और कलाके विकासमें है।" कोई उनसे कहता है।

"सस्कृति, धर्म, ज्ञान और कला फुर्सतके समयकी बाते है। इन चीजो-का भी हम थोडा-बहुत विकास कर ही रहे है। लेकिन यह सघर्षका युग है। इस समय तो हमारा मुख्य काम सिर पर आई हुई लडाईको जीतना है; रोटी, जमीन और अधिकारको ही पहले अपने हाथमे सुरक्षित करना है।" वे कहते है।

और फुर्सतका समय कभी नही आता। उनका सघर्प और सघर्षका उद्देश्य कभी पूरा नही होता।

जितने समयसे वे गिर-गिर पड़ती बालूकी दीवारको उठानेका प्रयत्न करते आये है, उतनेमे शरीफ मिट्टीके दस घर बना सकते थे। लेकिन हर बार जब उस दीवारका कोई हिस्सा गिर जाता है तब वे कहते है, "बस इतना ही हिस्सा तो गिरा है। दूसरी मिट्टीकी पूरी दीवार बनानेकी अपेक्षा इसे सुधार देनेमे कम समय लगेगा।"

जब उनसे कोई कहता है! "साहब, कला—"

तो वे कहते हैं, "कला क्यो ? व्यवसाय क्यो नही !"

जब उनसे कोई कहता है ! "साहब, धर्म—"

तो वे कहते है, 'धर्म क्यो ? आधुनिक राजनीति क्यो नही ?"

जब उनसे कोई कहता है, "साहब, सास्कृतिक शिक्षा—"

तो वे कहते है, "सास्कृतिक शिक्षा क्यो ? उद्योग क्यो नही !"

जब उनसे कोई कहता है, "साहब, प्रेम—"

तो वे कहते है, "प्रेम क्यो ? स्त्री क्यो नही ! (या कोई कोई : "पुरुप क्यो नही !")

जब उनसे कोई कहता है। "साहब, शान्ति—"

तो वे कहते है, "शान्ति क्यों ? विजय क्यो नही !"

जब उनसे कोई कहता है, "साहब, एक सवाल—"

तो वे कहते है, "सवाल क्यो ? सिगरेट क्यो नही ?"



मैं मार्ग बनाता हूँ

पिछले लेखमे मै कुछ 'सामूहिक'-सा हो गया हूँ, लेकिन मेरा अभिप्राय सामूहिकसे कही अधिक ऐकिक या व्यक्तिगत है। जो बात समूहपर लागू होती है वह केवल इसलिए कि वह पहले एक-एकपर लागू होती है।

आपकी कुछ समस्याएँ है—पैसा सम्बन्धी, प्रभाव-सम्बन्धी और प्रेम-सम्बन्धी। प्रभावसे मेरा मतलब समाजके साथ आपके प्रिय या अप्रिय सम्बन्धोसे है, प्रेमसे मतलब यहाँपर केवल विपरीत जाति—पुरुषके लिए स्त्री और स्त्रीके लिए पुरुष—के प्रति आकर्षणसे है।

निस्सदेह ये हमारे समाजकी, और इनमेसे कोई न कोई व्यक्तिगत रूपमे आपकी निजी भी समस्याएँ अवश्य है।

इस लेखमालामे मैं पहले लेखके परम बुद्धिमान्, लोक-प्रिय मित्रका अभिनय स्वयं करना चाहता हूँ।

मैं मानता हूँ और आपको भी मानना चाहिए कि स्वप्नकी उन तीनों मूर्तियोमे सबसे ऊँचा पद उसीका था—मैत्री-पूर्ण बुद्धिमत्ता शक्ति और सौन्दर्यसे ऊपरकी वस्तु है।

मैं आपको अत्यन्त सहृदयता और सहानुभूतिके साथ ऊँची बुद्धिमत्तासे भरी कुछ बाते इस लेखमालामे बताना चाहता हूँ।

तब फिर मैं ससारका एक अत्यन्त सहृदय और बुद्धिमान् व्यक्ति हूँ। निस्सदेह मैं हूँ, और आपको अभी बताता हूँ।

अगर भारतकी सबसे ऊँची पार्लमेटके विचारक अपनी किसी अत्यन्त जटिल राष्ट्रिय या अन्तर्राष्ट्रिय समस्याको सुलझानेके लिए मेरे पास मेरे कैलास आश्रममे आना चाहे तो मैं उन्हे यह नही लिखूँगा, "नही, नही साहब, इस मामलेके लिए आप मेरे पास न आइए। मैं कोई राजनीतिज्ञ

या विशेष बुद्धिमान् नही हूँ ।" बल्कि पूरे हर्षके साथ उन्हे पूरी आशा दिलाते हुए अपने आश्रममे आनेका निमंत्रण दूँगा ।

उस सिलसिलेमे मैं परिचय और समीपताके नाते तीन और व्यक्तियोको निमन्त्रित करूँगा । एक तो आगरेके अपने किसी धनिक मित्र, सम्भवत: सेठ मीतल या भार्गव साहबको, दूसरे टीकमगढसे चतुर्वेदीजीको और तीसरे एक और सज्जनको, जो इन पक्तियोको लिखते समय शायद बनारसमे होगे और जिनका नाम मैं, अगले लेखकी रोचकताके विचारसे, यहाँ न बताकर आगे किसी लेखमे बताऊँगा ।

सेठजी या भार्गव साहब अभ्यागतोकी मेहमानदारीका खर्च उठा लेगे । चतुर्वेदीजी, जो अखिल भारतीय पत्रकार सघके अध्यक्ष भी है, प्रेसो, पत्रो और व्यक्तियोके साथ आवश्यक लिखा-पढीका पूरा काम सम्हाल लेंगे, और वह तीसरे सज्जन सभाकी मुख्य कार्यवाहीका सुन्दरता और सफलतापूर्वक सचालन कर लेगे । इस सबमे खर्चकी रकम अगर सेठजी या भार्गव साहबकी समाईसे किसी कारण बढ जायगी तो वे अपनेसे बडे धनपतियोसे जितनी भी चाहे रकम वसूल कर लेगे क्योकि क्षेत्रके नाते उनकी उनतक पहुँच है । मामला दूसरे पत्रकारोकी सहायताका पड जायगा तो चतुर्वेदीजी देश-विदेशके अनेक बडे पत्रकारोका सहयोग भी ले सकेगे । और मेरे निमन्त्रित तीसरे सज्जनको अपनेसे बड़े किसी विचारकके सहारेकी आवश्यकता नही पड़ेगी, यह मेरा पूरा विश्वास है । उनकी बुद्धिमत्ताकी विशेषता यह है कि दूसरोकी समस्याओका हल निकालनेमे कभी भी अपनी बुद्धिको दूसरोकी बुद्धिके आगे या ऊपर नही रखते । वह दूसरोकी समस्याका हल अपनी ओरसे कभी नही बताते, बल्कि उनकी ही बुद्धिको उनकी समस्याकी ओर एकाग्र और नुकीली होनेके लिए विवश कर देते हैं । दूसरोके मामलेमे स्वय उन्हे ही बुद्धिमान् बना देनेकी कला उन्हे बहुत अच्छी तरह आती है ।

भारतकी सबसे ऊँची पार्लामेंटके विचारकोकी समस्या उन विचारकोके अतिरिक्त दूसरा कोई—ससारका कोई भी राजनीतिज्ञ, महात्मा, देवता

या ईश्वर—नही हल कर सकता और वे स्वयं उसे अवश्य ही हल कर सकते है, मेरा यह पूरा विश्वास है। इस बातको उन विचारकोंके सामने स्पष्ट रूपमे दिखा सकनेका यथेष्ट अभ्यास मुझे नही है लेकिन मेरे उन तीसरे अतिथिको है।

पार्लमिंटके उस अवैधानिक अधिवेशनमे मेरा व्यक्तिगत कार्यभाग यह होगा—

१—जगलसे प्रतिदिन सदैवकी अपेक्षा कुछ अधिक लकड़ी खोजकर लाना। (यह अधिक लकडी मुझे प्रतिदिन उन दो-एक नये मेहमानोके कारण लानी पड़ेगी जिनकी मैं प्रति शाम अपनी रसोईमे दावत किया करूँगा।)

२—वायु-सेवनके समय विचारकोको आस-पासके रमणीक वनकी सैर कराना।

३—अभ्यागतोमे जो तैरना न जानते होगे और तैरना सीखनेके लिए राजी किये जा सकेगे उन्हे यमुनामे तैरनेके लिए ले जाना।

४—विचारकोके साथ आये हुए उनके युवक लड़को और वैसी ही लड़कियोको (कुछ न कुछ तो इस तरहके 'दूसरी पीढी'के लोग उन प्रौढ़ विचारकोके साथ आयेगे ही) हर शाम मेहमानोकी दावतके बाद अपनी लिखी हुई कोई सुन्दर-सी प्रेम-कहानी सुनाना।

ये चार काम मैं अपने जिम्मे लूगा, क्योकि इनके लिए सबसे अधिक उपयुक्त मैं ही हूँगा और मेरे उपयुक्त केवल ये ही काम होगे।

इस प्रकार आप कुछ न कुछ देख सकते है कि उन विचारकोका बड़ीसे बड़ी समस्याको लेकर मेरे स्थानपर आना विफल नही होगा, उन्हे कोई असुविधा भी नही होगी।

मेरे भरपूर बुद्धिमान् होनेमे क्या अब भी आपको कुछ सन्देह है ?

भरपूर बुद्धिमान् वह नही है जो बहुत जानता है, (सब कुछ तो शायद कोई भी आदमी नही जानता) भरपूर बुद्धिमान् वह भी नही है जिसका मस्तिष्क हर मामलेकी गहराईमे तेजीके साथ घुस सकता है; बल्कि भरपूर बुद्धिमान् वह है जो ठीक वस्तुको ठीक जगह रखना जानता है।

पैसेका काम पैसेवालेके हाथ, विद्या और प्रभावका काम विद्या और प्रभाववालेके हाथ, मानसिक तीक्ष्णताका काम तीक्ष्ण मन वालेके हाथ !, आप मेरा मतलब देख रहे हैं ?

मेरे पड़ोस और परिचयमे बहुत-से ऐसे लोग हैं जो ज्ञानमे, बलमे, कौशलमे, विद्यामे, प्रभावमे, रूपमे, स्वभावमे, चरित्रकी दृढता और सुन्दरतामे मुझसे आगे और बहुत आगे भी हैं। जब जिस विषयका मामला मेरे सामने आता है, मैं उसी विषयके अपनेसे बढे हुए पडोसी या परिचितके हाथो वह काम डाल देता हूँ, उस मामलेमे आगे अपना दिमाग नही अडाता, उसके हलका श्रेय भी अपने ऊपर नही लादना चाहता। यह कला मुझे आती है। इस कलाके प्रयोगमे जो व्यावहारिक कमियाँ और कठिनाइयाँ है उनकी चर्चा मै किसीके सामने नही करता और स्वय भी उनसे विचलित नही होता, मेरी बुद्धिमत्ताका रहस्य यही है।

मेरी बुद्धिमत्ताका थोड़ा-सा रहस्य यह भी है कि मै अलग-अलग मामलों-मे बढे हुए व्यक्तियोकी ओर और अपनी दृष्टिकी सीमामे आई हुई वस्तुओकी उपयोगिताकी ओर अपनी समाईभर पूरी आँखे खुली रखता हूँ और सचमुच मेरी आश्चर्य-जनक बुद्धिमत्ताका बडा भडार उन असाधारण व्यक्तियो और उन अमूल्य वस्तुओमे ही है। उन असाधारण व्यक्तियोमे कोई-कोई[1] व्यक्ति तो ऐसे है जिनके सम्बन्धमे ससारके बडे-बड़े कोश-ग्रन्थो—'इनसाइक्लोपीडिया'-ओ ने हास्यास्पद गलतबयानियाँ की है और मै उन्हे उन कोश-ग्रन्थोके मुकाबले कुछ अधिक ठीक जानता हूँ। अधिक ठीक जानता हूँ, क्योकि उन कोशग्रन्थकारोकी अपेक्षा मै उन असाधारण व्यक्तियोके कुछ अधिक समीप हूँ और इन दिनो भी हर महीने एकवार घटे-डेढ घंटे उनमेंसे किसी-किसीका कुछ निश्चित काम कर देता हूँ।

---

१. उदाहरणार्थ, काउण्ट सेंट जरमेंन, जिन्हें अनेक पाश्चात्य इनसाइक्लोपीडिआओंने महान् साहसिक और भेदियाके रूपमें चित्रित किया है और जिनसे योरुप के अधिकांश राजदरबार पिछली शताब्दीमें चकित रहते थे और जिन्हें कभी न मरने वाला और सब कुछ जानने वाला कहा जाता था।

यह सब सुननेमे आपको कुछ विचित्र, अनहोना, अविश्वसनीय-सा लगता है। है न ? या फिर इससे जान पड़ता है कि मै कोई बड़ा रहस्यपूर्ण और महान् आदमी हूँ।

मै वैसा आदमी हूँ या न हूँ, जिन कुछ व्यक्तियो और वस्तुओके बारेमे जानता हूँ वे निस्सन्देह रहस्यपूर्ण और महान् है।

अब आप देख सकते है, किस बूतेपर मैने इस पूरी लेखमालामे उस स्वप्नके तीसरे व्यक्ति, परम बुद्धिमान् मित्र का अभिनय करने—अधिक ठीक शब्दोमे, आपके समीप तक उसके पहुँचनेका मार्ग साफ करने—का निश्चय किया है।

और इसके लिए जो थोड़ी-बहुत सहृदय मित्रताकी आवश्यकता है वह मेरे-आपके घरोकी ही चीज़ है।

शिकन भी और जवानी भी !

इस लेखमालाके दूसरे, 'सवाल बनाम सिगरेट' शीर्षक लेखमे मैने एक वाक्य लिखा है जो 'दुनियाके लोग'से प्रारम्भ होकर 'समस्याओसे बच जाना चाहते है' पर समाप्त होता है ।

उस वाक्यका विचार मुझे अपना सात दिनका समय और सात दिनकी आमदनी खर्च करनेपर प्राप्त हुआ है ।

वह विचार मुझे पिछले दिनो दिल्ली जाकर वहाँ आये हुए एक प्रसिद्ध वक्ताका व्याख्यान सुनकर प्राप्त हुआ है ।

यह वक्ता महोदय विश्व-दर्शी और विश्वविख्यात वक्ता है ।

एक समय था जब बहुत-से लोग उन्हे कृष्णका अवतार मानते थे; सम्भव है, अभी तक कुछ लोग ऐसे विद्यमान् हो ।

यह कोई आश्चर्यकी बात नही है । ससारमे, और विशेषकर भारतमे, ऐसे लोगोकी संख्या लाखोसे कम नही है जो कृष्णके, या कृष्णसे भी ऊँचे किसी अन्य अवतारके साथ अब भी रहते है, और कुछ वर्ष पहले तक मै स्वय एक ऐसे अवतारकी छत्र-छायामे रहा था जिसे मै कृष्णसे बहुत ऊपरका अवतार मानता था । मेरा वह विश्वास मेरा अकेला ही नही, एक लाखसे ऊपर व्यक्तियोका विश्वास था ।

उस अवतारका शरीर अब इस ससारमे नही है । उस अवतारकी उतनी महानताके पक्ष या विपक्षमे मै अब कोई निर्णय नही दे सकता । इतना अवश्य जानता हूँ कि मेरा वह विश्वास बहुत कच्ची नीवपर स्थित था । फिर भी यह स्पष्ट है कि भक्ति और भावनाका जितना विकास मुझे अपने उस आराध्यके हाथो मिला उतना आजतक किसी भी प्रत्यक्ष, सदेह व्यक्तिके हाथो नही मिला ।

तो जिन वक्ता महोदयकी बात मैं कह रहा हूँ, उन्होंने, जहाँ तक मैं जानता हूँ, अपने आपको कृष्णका अवतार कभी नही कहा। वह कृष्णके अवतार हो या न हो, कृष्णका जैसा कहा-सुना आकर्षण उनमे कुछ न कुछ अवश्य है।

एक सुशिक्षिता, सम्भ्रान्त महिलाने, जो मुझसे पहले उन्हें दिल्लीमें देख-सुन चुकी थी, उनकी बात चलाते हुए मुझसे कहा था, "उनमे वैसी ही मोहनी शक्ति है जैसी पुराने समयमे गोपियोके प्रति कृष्णमें कही जाती है।"

और इससे भी पहले मैंने इटलीकी भूमिका पर लिखा हुआ एक अंगरेजी का उपन्यास पढा था, जिसकी एक महिला पात्रीने अपनी किसी संगिनीको सचेत करते हुए, इन्ही वक्ता महोदयका नाम लेते हुए कहा था, "तुम उनकी सभामें जा तो रही हो लेकिन सावधान! उनपर मोहित न हो जाना!"

इस प्रकार आप देख सकते हैं कि उनके सम्बन्धमे मोहित होने-होआने-की इतनी गहराई तक धँसी चर्चाएँ निराधार नही हो सकती।

इस समय उनकी आयु सम्भवतः ५२ वर्षकी है।

मेरा मुख्य काम लेखनका है और मैं ध्यान-पूर्वक देखता आया हूँ कि मेरे लेखनकी प्रवृत्ति केवल सौन्दर्य और यौवनकी ओर ही है। इसलिए स्वभावतया अपने पासके नगर दिल्लीमे इन वक्ता महोदयके आगमनका समाचार पाकर मैंने सोचा, "यौवन और सौन्दर्यकी दिशाओमे लिखते रहनेके लिए यह आवश्यक है कि मैं स्वय आजीवन सुन्दर और युवा बना रहूँ। यहाँ एक ऐसा व्यक्ति है जो बावन वर्षकी अवस्थामे इतना सुन्दर और आकर्षक बना हुआ है कि लोग, विशेषकर महिलाएँ ('और उससे भी अधिक विशेषकर पुरुष' मेरे एक मनोविज्ञानशास्त्री मित्रका कहना है) उसे देखते ही उसपर इतनी असहाय-सी मुग्ध हो जाती है। उसका चेहरा रूप और यौवनका आकर्षणो-भरा आकार ही होगा। ठीक ऐसे ही आकर्षक चेहरेकी आवश्यकता मुझे भी है, जिसमे ढलती आयुकी कभी एक शिकन भी न आने पाये, जिसके होठोमे कभी भी जीवनके किसी कटु रसकी असुन्दर

रेखा न खिचने पाये। यह मेरी एक मनमे समाई हुई समस्या है। उस आकर्षक व्यक्तित्वको देख-सुनकर मुझे अपने लिए उसके अनिवार्य रूप और यौवनका भेद लेना चाहिए।'

और तदनुसार दिल्ली जाकर मैंने उन्हे देखा-सुना।

लेकिन उनकी वक्तृता-सभामे पहुँचकर, सभा भवनमे उनके प्रवेश करते ही मैंने देखा, उनके चेहरेपर ढलती आयुकी शिकने भी थी और होठोमे जीवनके कटु-रसो—श्रम, थकान, और पिछले सप्ताहकी अस्वस्थता—की रेखा भी थी।

मुझे निराशा हुई। उनसे अधिक सुन्दर, स्वस्थ, प्रसन्न और बावन वर्षकी अवस्थामे भी चिकने चेहरेवाले व्यक्ति तो मै पहले ही अनेक देख चुका था।

लेकिन दूसरे ही क्षण, अपने आसनपर बैठते ही, उनके होठोमे फूटकर मुसकानकी एक रेखा सारे सभा-भवनमे छा गई। उपस्थित जनोमे शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जिसके हृदय और आँखोमे वह रेखा प्रतिबिम्बित न हो उठी हो।

उस मुसकानके बाद उनके मुखसे शब्द निकले, विचार निकले, और बीच-बीचमे वक्ता-सुलभ भाव भगियो और मुस्कराहटोका दौर चलता रहा।

मैंने उनकी पूरी बातचीत ध्यान और सावधानीके साथ सुनी और जो कुछ और जैसे कुछ उन्होने कहा उसका विस्तृत विवरण मैं यहाँ दे सकता हूँ। लेकिन उसकी चर्चा मेरी इस समयकी बातके प्रसग से बाहर, और बहुत कम महत्त्वकी होगी।

उल्लेखनीय और अधिक महत्त्वकी बात तो वह प्रश्नात्मक सँदेसा था जो मुझे उनकी पहली होठोवाली स्वागत-रेखामे मिला। उसने मेरी समस्या को मोडकर उसका रूप ही बदल दिया। मै सोचने लगा

'मैं चेहरेकी शिकनोसे क्यो बचना चाहता हूँ? सुन्दर और युवा रहनेके लिए ही न? लेकिन मेरे सामने यह एक व्यक्तित्व है जो अपने चेहरेपर वैसी शिकने लिये हुए भी रूप और यौवनके आकर्षणोका सबल

केन्द्र बना हुआ है। उसका-सा आकर्षण दुर्लभ है। यहाँ यह एक व्यक्तित्व है जिसकी मुसकराहटमे तीन वर्षके शिशुका स्निग्ध माधुर्य है, जिसके शब्दो और चेष्टाओमे तीस वर्षके युवकका यौवन भरा आकर्षण है और जिसके अभिप्रायोमे तीन सौ वर्षके सिद्धका ज्ञान-गर्भित सदेश है।

मै सोचने लगा। यौवन और सौन्दर्य चेहरेकी शिकनोके अधीन नही है। उनका एक-दूसरेसे कोई अनिवार्य विरोध नही है। एकको मौजूदगीमे दूसरा भी मौजूद रह सकता है, एककी अनुपस्थितिमे दूसरा भी अनुपस्थित रह सकता है।

मेरी समस्याका रुख पलट गया। मैंने देखा, मैंने उसके पहले अपनी समस्याको पूरे तौरपर पहचाना ही नही था। मै सुन्दर और युवा रहना चाहता था और उसके लिए केवल चेहरेकी शिकनोंसे बचना चाहता था।

बावन सालकी आयुपर पहुँचनेमे मुझे उतनी ही देर है जितनी देरमे एक लडकी जन्म लेकर अपने पूरे यौवनके द्वारपर पहुँच सकती है। फिर भी चूकि मै जरा दूरदर्शी व्यक्ति हूँ, इसलिए अभीसे मै उन शिकनोकी चिन्ता कर रहा था!

लेकिन चेहरेकी शिकनोसे बचकर भी मै आगे रूप और यौवनसे वचित हो सकता हूँ, यह मैंने कभी नही सोचा था, यद्यपि सैकडो ऐसे व्यक्तियोपर मेरी दृष्टि पड चुकी थी जो चेहरेपर शिकनोके न होते हुए भी रूप और यौवनसे एकदम खाली थे।

मै सोचने लगा! मैंने अपनी समस्याओको कभी पूरे तौरपर नही सोचा था। दुनियाके लोग आमतौरपर अपनी समस्याओको सोचते नही, उनके सम्बन्धमे कुछ सुनते तक नही, केवल उनसे एकदम स्वतन्त्र और निर्बन्ध हो जाना चाहते है, उन समस्याओंसे एक दम बच जाना चाहते है।

लोग मथुरा पहुँचना चाहते है और द्वारिकाकी सड़कपर दौड़ लगानेके लिए उतावले हो जाते है।

उन वक्ता महोदयने मेरी उस दौडकी उतावलीके आगे एक बड़ा-सा 'क्यो ?' लाकर खडा कर दिया। मै रुक गया। उन्होने मेरी पूछताछका

कोई उत्तर नहीं दिया, लेकिन अपना उत्तर अपने आप निकालनेके लिए उन्होंने मुझे कुछ विवश कर दिया।

वह निस्सन्देह एक बुद्धिमान् व्यक्ति हैं। शक्ति और सौन्दर्य बुद्धिमत्ताके पीछे-पीछे अवश्य चलते हैं। उन्होंने मुझे अपनी बुद्धिमत्ता नहीं दी, मुझे मेरी ही बुद्धिमत्ता दिखा दी। उनकी बुद्धिमत्ताकी विशेषता यही है।

उनका नाम है, मिस्टर जे. कृष्णमूर्ति।

और यही वह तीसरे व्यक्ति हैं जिन्हें निमंत्रित करनेकी बात मैंने पिछले लेखमें कही है।



अपनी कहूँ या आपकी ?

तो फिर आपकी समस्याएँ !

आपके हाथमे आनेवाला प्रत्येक लेख और प्रत्येक पुस्तक व्यर्थ जवतक कि वह आपकी किसी-न-किसी समस्याको किसी-न-किसी ह तक हल न करे। प्रत्येक छपे हुए पृष्ठसे, जिसे आप हाथमे लेकर अपन कुछ समय भी देनेका निश्चय करते है, आप कुछ न कुछ सलाह, सूचना या मनोरंजनकी आशा करते ही है। और यदि उससे आपकी यह आशा पूरी नहीं होती तो आपकी एक समस्या विना हल हुई रह जाती है।

समस्याका प्रयोग मै यहाँपर जिस व्यापक अर्थमे कर रहा हूँ, उसे कुछ और स्पष्ट करूँगा। सम्भवत. आप उस अर्थसे सहमत ही होगे।

मेरी चटाईपर इस समय नौ समस्याएँ है।

इनमेंसे एक मेरी पत्नीके हाथका लिखा हुआ परचा है, जिसमे इक्कीस चीज़ोके नाम लिखे है। ये इक्कीसों चीजे मुझे अगले रविवारको शहर जाकर लानी है। अगर ये सव चीजे लाई जायँ तो इनके लिए मुझे करीव वीस रुपयोकी आवश्यकता है और मेरे घरमे इस समय केवल सात रुपये है। यह परचा मेरी पहली समस्या है।

दूसरा, आजकी डाकसे आया हुआ मेरे एक मित्रका पत्र है, जिसमे उन्होने लिखा है, "वर्माजी आपके मित्र है। आपकी वातका उन्हे पूरा विश्वास है। अगर आप जोर डालकर उनसे सिफारिश कर देगे तो वह अपनी छोटी वहिनका विवाह मेरे वडे भाई साहवसे करनेके लिए राजी हो जायँगे। उनके सतोपके लिए कुछ वाते आपको जरा घुमाफिराकर भी कहनी पडे तो उसमे कोई हर्ज नही है। भाई साहवकी उम्र उन्हे छत्तीस सालकी वताई गई है। उनका स्वास्थ्य पहलेसे वहुत कुछ ठीक है।.... . पुनश्च :

मनोहरको हमने लिखा है कि वह हमारे पिछले पॉच सौ रुपये आपके पास जमा कर दे। इन रुपयोको आप अपने खर्चमे ला सकते है। आपकी दयासे हम यहाँ वहुत कमा रहे हैं।" इस पत्रका सक्षिप्त अर्थ यह है कि मै पॉच सौ रुपयेकी रिश्वत लूँ और एक अठारह सालकी स्वस्थ, सुशील, परम रूपवती, पितृहीन, निर्दोप कन्याका विवाह एक पेंतालिस सालके रोगी, आचरण-हीन और कुरूप किन्तु धनवान विधुरसे करा दूँ। यह पत्र मेरी दूसरी समस्या है।

तीसरा भी आजकी ही डाकका एक पत्र है। इस पत्रकी लेखिका हिन्दीकी एक उदीयमती लेखिका और निस्सदेह सौन्दर्यवती तरुणी हैं। मुझे ध्यान है, मैंने इनका चित्र किसी पत्रिकामे देखा है। इस पत्रमे इन्होने मेरे एक लेखकी देखनेमे कडी आलोचना की है, किन्तु उस आलोचनामे कडाईके वहाने ढेर-सी प्रशसा, और प्रशसाकी ओटमे और उससे भी अधिक मुग्धता ही पिरोई हुई है। मेरी इन कृपालु, व्यक्तिगत रूपमे अप-रिचिता पत्र-प्रेपिकाका सम्भवत अनुमान है कि मै वहुत अच्छे प्रेम-पत्र लिख सकता हूँ। कुछ भी हो इनके लिए मेरे हृदयमे एक अत्यन्त कोमल भावना जाग उठी है और इनका पत्र भी मेरी एक विशेप समस्या है।

चौथी समस्या भी एक पत्र ही है जो एक लडका मुझे अभी-अभी दे गया है। इस पत्रमे लिखा है, "महाशयजी, पिछले मगलवारकी शामको आपने मोतीवाजारमे मेरी जेब काटकर सौ रुपये निकाले है। आपको अच्छी तरह पहचान लिया गया है। तीन दिनके भीतर अगर आप रुपये लौटा देंगे, या रात-विरात मेरी दुकानके किवाडोके छेदमेसे डाल देंगे तो आपको कोई कुछ न कहेगा। आपके पडोसी आपको शरीफ आदमी वताते है। हमे भी आपकी इज्जतका खयाल है। रुपया न आया तो आपको पुलिसके हवाले करनेका हमारे पास पूरा सवूत है, और पुलिससे भी पहले हमारे नौकर-चाकर वीच वाजारमे आपपर कोई चोट-चपेट करे तो हम उसके जिम्मेदार नही हैं।" मेरा पूरा विश्वास है—जैसा कि आपका और इस लेखके सभी पाठकोका भी होगा—कि मैंने इन पत्र-प्रेपक सज्जनकी जेव नही

काटी है और बहुत सम्भव है कि शकलोंके भ्रमके कारण ही इन्हे मुझपर यह सन्देह हुआ है। फिर भी यह पत्र मेरी एक अभ्यागता समस्या है।

मेरी पाँचवी समस्या एक छपी हुई छोटी-सी अँगरेज़ीकी पुस्तिका है। ऐसी पुस्तिकाएँ कभी-कभी मेरे अध्यापकके पाससे आती हैं और इनमे मेरे तथा सारे मानव-समाजके जीवन पर अत्यन्त प्रेरणा-प्रद प्रकाश डालने वाली कुछ बाते लिखी होती हैं। इन पुस्तिकाओंसे मुझे बहुत बल और सम्बल मिलता है और इन्हे पढ़नेके लिए मैं बहुत उत्सुक रहता हूँ। इस बार आई हुई यह पुस्तिका मैंने पढी नही है। इसे पढनेके लिए मैं सबसे अधिक उत्सुक हूँ, पर चटाई पर बिखरी हुई दूसरी समस्याओंसे निवृत होकर ,शांत चित्तसे ही उसे पढनेका मेरा निश्चय है। इससे मुझे कुछ नई प्रेरणाओंकी प्रतीक्षा है और निस्सदेह यह पुस्तिका भी मेरी एक प्रमुख समस्या है।

मेरी छठी समस्या अखरोटके चार छिलकेदार फल; सातवी समस्या, एक केला, आठवी एक अमरूद और नवी एक नीबू है। इन चार समस्याओ मे सबसे अधिक आसान अमरूद और सबसे कठिन समस्या अखरोटकी है। अखरोट मुझे बहुत कुछ बल लगाकर तोडने पडेगे तब मैं उनकी गिरीका अभीष्ट स्वाद ले सकूगा। नीबूको तराशकर, उसकी दो फॉके करके उसके भीतरका रस जो निकलेगा, वही मेरी उस समस्याका अभीष्ट हल होगा। केलेका छिलका और भी आसानीसे दूर करके उसके स्वादिष्ट भागका स्वाद मै ले सकूगा, और अमरूदकी समस्याको हल करना इतना सुगम होगा कि उसे समस्याका नाम देते भी सकोच होगा। बिना चाकूसे तराशे केवल दॉतोंके प्रयोगसे ही मैं उसका स्वाद ले सकूगा।

अपनी चटाई पर आये हुए अखरोट, नीबू, केला और अमरूदको भी मैं समस्याएँ कहता हूँ। निस्सदेह, ये भी समस्याएँ ही है और इनका रस, स्वाद या उपयोग ही इन समस्याओंका हल है। मैं समस्याका हल चाहता हूँ, समस्या नही। अखरोट और अमरूद जैसी छोटी-छोटी समस्याओं को मैं केवल उनके प्रत्याशित हलके कारण ही अपने समीप आने देता हूँ। उनका हल—स्वाद और रस —मुझे प्राप्य न हो तो वे मेरे लिए

जटिल और निराशाप्रद मात्र-समस्याएँ हो और उनमे मेरी कोई रुचि नही हो। लेकिन इन अखरोट-अमरूद आदिके सामने मेरा बल, बुद्धिमत्ता और सौभाग्य इतने प्रवल है कि मै इन समस्याओको समस्या ही नही मानता और इनका हल अपनी एक हलकी-सी चेष्टासे ही निकाला हुआ देखता हूँ। फिर भी ये चारो मेरी समस्याएँ है, जिस प्रकार पूर्वोक्त पॉच मेरी समस्याएँ है। ये चार मेरी प्रिय और वहुत छोटी समस्याएँ है, वे पॉच मेरी कुछ वडी समस्याएँ है, उनमे से कुछ प्रिय है और कुछ अप्रिय। प्रिय समस्याओसे मै स्वादिष्ट रस और लाभ प्राप्त करना चाहता हूँ। अप्रिय समस्याओको निचोड़कर उनका कडवा रस बाहर फेक देना चाहता हूँ। ये नवो मेरी छोटी या वडी, प्रिय या अप्रिय समस्याएँ है। निस्सदेह ये सभी समस्याएँ है।

और इन सवसे अधिक व्यापक और देर तक ठहरने वाली मेरी दसवी समस्या इस लेखकी पूर्तिकी है, जिसका प्रभाव दूसरी नवो समस्याओके प्रभावोके शात हो जानेपर भी आपपर और कुछ औरोपर भी थोडा-बहुत किसी-न-किसी रूपमे वना रहेगा।

इस प्रकार मेरे जीवनकी प्रत्येक छोटी या वडी, प्रिय या अप्रिय परिस्थिति और उससे सम्वन्धित प्रत्येक वस्तु, जिससे मै किसी-न-किसी परिणामकी आशा करता हूँ, मेरी एक समस्या है।

और आपके भी जीवनकी प्रत्येक परिस्थिति—छोटी या बडी, प्रिय या अप्रिय, जिससे आप किसी न किसी रस या परिणामकी आशा करते है—आपकी एक समस्या है।

समस्याकी इस परिभाषाको आप पूर्णतया नही तो किसी आशिक रूपमे अवश्य ही स्वीकार करेगे।

यह हो सकता है कि छोटी समस्याओपर कुछ सोचने-कहनेकी ओर आपका ध्यान न हो और उसके लिए फुर्सत भी न हो। इसलिए आप अपनी सभी परिस्थितियोको अपनी समस्याएँ स्वीकार करते हुए भी केवल कुछ वडी और व्यापक समस्याओपर ही—वे प्रिय और अप्रिय दोनो प्रकार की समस्याएँ होगी—विचार करना पसद करेगे।

तो फिर आपकी वे समस्याएँ क्या हो सकती है ?

पैसेकी समस्या, प्रभावकी समस्या, प्रेमकी समस्या। इन्हीको कुछ अलग अलग शब्दोमे जीवन-निर्वाहकी, स्वास्थ्यकी, समाज द्वारा आदर-सत्कार और सहयोगकी, यशकी, विकासकी, परिवारकी, और स्वीकृत तथा पुरस्कृत प्रेमकी समस्याएँ कह सकते है।

मेरे एक युवक मित्र लडकियोके एक स्कूलमे सगीतके अध्यापक है। एक बार ऊपर लिखी-जैसी बात मेरे मुँहसे निकलनेपर उन्होने कहा थाः 'इधर देखिए, आप सभी आदमियोको चरित्रके एक ही धरातल पर नही रख सकते। आपने मनुष्यकी जो समस्याएँ गिनाई है उनमेसे प्रेम-सम्बन्धी मेरी कतई कोई भी समस्या नही है। जो बात कुछ लोगोपर लागू होती है, उसे सभी पर लागू करनेकी भूल आपको न करनी चाहिए।' मेरे यह मित्र कट्टर वेदपाठी आर्यसमाजी है। सम्भव है, इनकी प्रेम-सम्बन्धी कोई समस्या न हो, सम्भव है आपकी भी वैसी कोई समस्या न रह गई हो। लेकिन मोटे तौरपर इन्हीमे से कुछ-न-कुछ समस्याएँ लोगोकी हुआ करती है, यह मानने मे आपको विशेष अडचन न होगी।

मैं अपने ज्ञान और अनुभवके आधारपर आपकी समस्याओपर कुछ उपदेशपूर्ण एव पथप्रदर्शक प्रकाश डालना चाहता हूँ।

लेकिन क्या मेरा उस दिशामे कुछ कहना बुद्धिमत्तापूर्ण होगा ? क्या मैं आपकी समस्याओको ठीक-ठीक जानता हूँ ?

उन्हे मैं नही जानता। लेकिन अपनी समस्याओको मैं जानता हूँ। मैं एक मनुष्य हूँ, मेरी समस्याएँ एक मनुष्यकी समस्याएँ है।

आप भी एक मनुष्य है। एक मनुष्यकी समस्याएँ आपकी भी समस्याएँ हो सकती है। इस प्रकार मेरी समस्याएँ आपकी भी समस्याएँ हो सकती है। आपकी समस्याओपर नही, अपनी ही समस्याओपर प्रकाश डालनेकी स्थितिमें मैं हूँ। मैं या ससार भरमे कोई भी दूसरा व्यक्ति आपकी ऐन समस्याओको जानकर उनपर प्रकाश नही डाल सकता, यह मेरा विश्वास है।

तो फिर लिखने और कहनेमे अधिकसे अधिक अच्छी बात जो मैं

कर सकता हूँ वह यही है कि अपनी व्यक्तिगत समस्याओपर आपके सामने कुछ प्रकाश डालूँ । ऐसा करनेसे सम्भव है कि आपकी कुछ समस्याओ पर भी कुछ प्रकाश पड़ जाय ।

अपनी समस्याओपर प्रकाश डालनेका मेरा स्पष्ट तात्पर्य यह है कि मै जो कुछ कहूँ आपके या किसी अन्यके बारेमे न कहकर अपने बारे मे ही कहूँ ।

यही बात मुझे बेहद पसद है । मै केवल अपने बारेमे ही लिखना चाहता हूँ । लेकिन मेरे एक साहित्यिक मित्रका कहना है कि यदि मै अपने बारेमे लिखूगा तो लोग उसे पसद नही करेगे, पढना भी पसद नही करेगे । उनका यह कहना अनुभवसे ठीक ही दीख पडता है । अपनी ही कहनेवाले की बात सुनना लोग पसद नही करते । कुछ बड़े आदमियोको छोडकर जो विशेष प्रसिद्धि पाकर आत्म-कथा लिखनेके पदपर पहुँच गये है, अन्य सभी लोगोके मुखसे आत्म-चर्चाकी बाते सुनते हुए लोग ऊब उठते है । ऐसे लोगोकी आत्म-चर्चाओमे स्वभावतया आत्म-प्रशसा और अपने निर्णयोका मूल्याकन उचित मात्रासे कही अधिक होता है । इसी तथ्यको दृष्टिमे रखकर आमतौर पर प्रसिद्धिके 'आत्म-कथा-लेखन-पद' तक पहुँचनेके पहले विचारशील लेखक अपने सम्बन्धमे चुप रहकर ही अपने विनय-भावका परिचय देते है ।

लेकिन मैंने इस प्रचलित नियमका एक अपवाद बनकर केवल अपने बारेमे ही और यथासम्भव अपनी समस्याओके सिलसिलेमे अपनी अच्छाइयो के पहलूपर ही लिखनेका निश्चय किया है । मेरा विश्वास है कि मेरी अच्छाइयोसे ही आपकी समस्याओपर भी सम्भवत कुछ प्रकाश पड सकता है, और मेरी बुराइयो या कमियोका आपके सामने आना व्यर्थ है ।

लेखनकी मेरी यह दिशा और शैली ही, सम्भव है, मेरी विशिष्ट मौलिकता सिद्ध हो और आगे चलकर मुझे कुछ प्रसिद्धि भी दे जाय । मेरी यह दिशा और शैली आपको अप्रिय या उबाने वाली होगी, ऐसी कोई विशेष आशका मेरे मनमे नही है ।

आप रावियन बनेंगे ?

पिछली शताब्दीमे अमरीकामें एक सज्जन हुए जिनका नाम था डेविड ग्रेसन ।

उन्होने अपनी समस्याओंको कुछ विशेष तरीकेसे हल कर लिया और ऐसा करनेमे स्वभावतया उनके भीतर कुछ विशेष अच्छाइयां आ गई ।

जब किसी आदमीमें कुछ विशेष अच्छाइयां आने लगती है तो वह अनायास ही एक अच्छा लेखक बनने लगता है—यदि लेखकीके भी आगे किसी अन्य काममे वह न लग जाय । निस्सन्देह अच्छा लेखक बननेका सबसे सीधा नुस्खा है अच्छा बनना और फिर अपने सम्बन्धमें लिखने लगना । आप यह बात लिखकर रख ले सकते है ।

डेविड ग्रेसनने अपनी समस्याओंको हल करनेके सिलसिलेमें सादे, स्वतंत्र, ग्रामीण जीवनको अपनाया और अपनी समस्याओंको जिस प्रकार हल किया उसकी चर्चा वर्णनात्मक, कथात्मक, कल्पनात्मक, रूपकात्मक हर एक ढगसे अपने लेखोंमें की ।

उन्होने केवल अपनी और अपनोंकीही समस्याओंपर प्रकाश डाला और सन्तोष, मित्रता और समझदारीकी खोज और प्राप्तिके लिए नम्र किन्तु महान् साहससे काम लिया । ठीक ही, उन्होने अपनी पुस्तकोंके "समझदारी के साहसिक प्रयोग," "सन्तोषके साहसिक प्रयोग", "मित्रता के साहसिक प्रयोग" जैसे ही कुछ नाम रखे ।[1]

उनके इन लेखोंसे स्वभावतया बहुत लोगोंकी व्यक्तिगत समस्याओं पर प्रकाश पडा । बहुतसे लोग डेविड ग्रेसनके प्रशसक और यहां तक कि अनुयायी भी हो गये । वे सादे, स्वतत्र और खुली वायुके जीवनके हामी

---

१ ग्रेसनकी तीन पुस्तकोंके नाम ये है—"ऐडवैंचर्स इन अंडरस्टैंडिंग", "ऐडवैंचर्स इन कन्टेन्टमेंट", "ऐडवैंचर्स इन फ्रेंडशिप" ।

बन गये । उन्होने ग्रेसनके सिद्धान्तोके समर्थनमे ग्रेसन क्लब, ग्रेसन पुस्तकालय और ग्रेसन सभाएँ खोल दी । वे अपने आपको ग्रेसनके नामपर ग्रेसोनियन कहने लगे ।

पिछले साल टीकमगढमे चतुर्वेदीजीने मुझे डेविड ग्रेसनसे परिचित कराया ।

ग्रेसनकी दो-तीन पुस्तकोका एक-एक अध्याय पढते ही मैंने भी ग्रेसोनियन होना स्वीकार कर लिया ।

ग्रेसोनियन बननेकी सुविधाएँ मुझे पहलेसे ही मिलने लगी थी । शहर छोड़कर डेढ साल पहलेसे ही मै एक रमणीक नदी-तटके छोटे-से गाँवमे आ बसा था । मै और मेरी पत्नी, यही मेरा अविभाजित और अगुणित परिवार था । मै हफ्तो बिना मिर्च-मसालेका खाना खाकर रह सकता था और मेरी पत्नीको विवाहमे आई हुई सुन्दर रेशमी साडियाँ प्राय बक्सके भीतर ही बन्द रखना पसन्द था ।

मै ग्रेसोनियन बन गया । इसके लिए कही नाम लिखानेकी या कोई फीस भेजनेकी आवश्यकता न थी ।

लेकिन मेरे ग्रेसोनियन बननेका यह अर्थ नही है कि मै ग्रेसनकी या किसीकी भी हर एक बातका अनुयायी हूँ । निस्सन्देह ग्रेसनकी या किसी की भी समस्याएँ बहुत कुछ सजातीय होते हुए भी मेरी व्यक्तिगत समस्याओ से भिन्न है और अपनी समस्याओका सविवरण हल मै ही अपनी स्वतत्र बुद्धि और योग्यताके सहारे निकाल सकता हूँ । उनसे या किसीसे भी मै हर बातमे सहमत भी नही हूँ । उदाहरणार्थ ग्रेसन महोदयकी मित्रता वाली पुस्तकके पहले अध्यायकी उस बातसे मेरा उदारतापूर्ण विरोध है, जिसमे उन्होने एक ऐसी सस्थाका कुछ कम आदर-सा किया है जिसका मै स्वय सदस्य हूँ । मेरा अनुमान है कि उस सस्थाके सम्बन्धमे मै उनसे अधिक जानता हूँ । लेकिन ऐसी बातोसे मेरे ग्रेसोनियन होनेमे कोई बाधा नही पडती ।

अब इस सारी चर्चाका अभिप्राय मेरा एक अत्यन्त विनम्र प्रश्न है।

प्रश्न है—क्या आप रावियन बनना स्वीकार करेंगे ? इस लेखको लिखनेसे पहले पिछली शाम मैंने अपने एक मित्रसे इस लेखके सोचे हुए विषय पर कुछ चर्चा चलायी थी। मेरा अभिप्राय सुनकर उन्होंने कुछ उपदेशपूर्ण स्वरमें कहा था—

"आप—आप चाहते हैं कि लोग ग्रेसनकी तरह आपके भी अनुयायी बनें और आप इस बातको लेख द्वारा जनताके सामने भी रख दें। आपके इस साहससे मुझे बड़ा आश्चर्य होता है। ग्रेसन एक महान् लेखक और साधक था। लोगोंका उसका अनुयायी बनना स्वाभाविक था। लेकिन ग्रेसन भी लोगोंके सामने यह प्रस्ताव रखनेका साहस नहीं कर सकता था कि वे ग्रेसोनियन बनें और उसके नामपर पुस्तकालय और सभाएँ खोलें। आपकी योग्यता और प्रसिद्धि ग्रेसनकी योग्यता और प्रसिद्धिका सौवाँ भाग भी नहीं है। अगर आप सचमुच इस तरहकी महत्त्वाकांक्षा रखते हैं और प्रहसनसे भिन्न किसी गंभीर लेखमें ऐसा प्रस्ताव रखनेका भी आपका निश्चय है तो मैं नहीं समझता लोग किन शब्दोंमें आपके इस महान् साहसका समर्थन करेंगे।"

मित्रके इस कथनपर मैंने विचार किया। मैंने देखा कि सचमुच लोग मेरे लेखमें इस प्रस्तावको पढकर मुझे बहुत नादान या बेहद अहंकारी समझेंगे। ग्रेसनके सामने मेरी योग्यता, और योग्यता नहीं तो कमसे कम प्रसिद्धि, तो निर्विवाद रूपसे सौवें भागसे अधिक नहीं है।

सोच-विचारके पश्चात् मैंने निश्चय किया कि मैं उस—लोगोंके रावियन बननेका प्रस्ताव रखने वाले—लेखको लिखूँगा ही और जैसा कि आप पढ आये हैं वह लेख मैं ऊपरकी पंक्तियोंमें लिख चुका हूँ।

इस प्रस्तावपूर्ण लेखको पढ़कर यदि आप या मेरे कोई अन्य पाठक मुझे अहंकारी, अपनी पात्रताके बाहर यशका लालची और एकदम 'छोटे मुँह बड़ी बात' कहने वाला समझेंगे तो मैं अपनी इस बड़ी बातको आपकी या उनकी इच्छानुसार सन्तोषजनक रूपसे छोटा कर दूँगा।

ऐसा करनेके लिए मुझे इस लेखकी किसी बात को काटने या वापस लेनेकी आवश्यकता न होगी, मैं केवल उस बुद्धिमान आदमीके उपायसे काम लूँगा जिसके सामने कागजपर एक लकीर खीचकर एक दूसरे बुद्धिमानने कहा था, 'इस लकीरको बिना काटे छोटा कर दो ।'

पहले बुद्धिमानने रवड या चाकूका सहारा नही लिया और उस लकीर को छोटा कर दिया । उसने केवल उस लकीरके पास उससे बडी एक दूसरी लकीर खीच दी, पहली लकीर छोटी हो गई ।

आप देख रहे है, अपने सम्बन्धमे कही हुई किसी भी बातको आप के सन्तोषके लिए छोटा करनेका मेरे पास यह उपाय है कि मै अपने सम्बन्ध में पहलेसे भी बडी कोई और बात कह दूँ । कहनेके लिए ऐसी बाते मेरे पास बहुत-सी है ।

लेकिन मेरा अनुमान है कि मुझे ऐसा नही करना पडेगा क्योकि मेरे इस लेखको पढ़कर मुझे सचमुच बहुत नादान अथवा अहकारी समझने वाले लोग कोई नही होगे । और अगर कोई होगे भी तो वे वही होगे जिन्हे शब्दोके अर्थ तो आते है किन्तु उनसे बने हुए वाक्योका अर्थ लगाना नही आता ।

पुनश्च .

यह लेख मैंने अपनी कापीपर पूरा करके रखा ही था कि मेरे एक मित्रने कमरेमे प्रवेश किया और बिना किसी लोकाचारके उसे उठाकर प्राइमरी क्लास रूमके स्वरमे पढ गये । पढकर उन्होने कहा—

"आपको घुमा-फिराकर बातोको पेच देनेकी कला आती है, और मै समझता हूँ कि इस लेखमे और कुछ नही, केवल आपका अहकार ही बोल रहा है ।"

मैंने कहा—"सम्भव है, मेरा अहकार ही इसमे बोल रहा हो, लेकिन 'कौन बोल रहा है' की खोज पडतालमे आप 'क्या बोल रहा है'को सुनने-समझनेके लिए अपने कान खुले रखना भूल जाते है । यह आजकल के कान-दारोके बहरेपनका एक बढता हुआ लक्षण है ।"

अब इस सारी चर्चाका अभिप्राय मेरा एक अत्यन्त विनम्र प्रश्न है।

प्रश्न है—क्या आप राबियन बनना स्वीकार करेंगे ? इस लेखको लिखनेसे पहले पिछली शाम मैंने अपने एक मित्रसे इस लेखके सोचे हुए विषय पर कुछ चर्चा चलायी थी। मेरा अभिप्राय सुनकर उन्होंने कुछ उपदेशपूर्ण स्वरमें कहा था—

"आप—आप चाहते हैं कि लोग ग्रेसनकी तरह आपके भी अनुयायी बनें और आप इस बातको लेख द्वारा जनताके सामने भी रख दें! आपके इस साहससे मुझे बड़ा आश्चर्य होता है। ग्रेसन एक महान् लेखक और साधक था। लोगोंका उसका अनुयायी बनना स्वाभाविक था। लेकिन ग्रेसन भी लोगोंके सामने यह प्रस्ताव रखनेका साहस नहीं कर सकता था कि वे ग्रेसोनियन बनें और उसके नामपर पुस्तकालय और सभाएँ खोलें। आपकी योग्यता और प्रसिद्धि ग्रेसनकी योग्यता और प्रसिद्धिका सौवाँ भाग भी नहीं है। अगर आप सचमुच इस तरहकी महत्त्वाकांक्षा रखते हैं और प्रहसनसे भिन्न किसी गंभीर लेखमें ऐसा प्रस्ताव रखनेका भी आपका निश्चय है तो मैं नहीं समझता लोग किन शब्दोंमें आपके इस महान् साहसका समर्थन करेंगे।"

मित्रके इस कथनपर मैंने विचार किया। मैंने देखा कि सचमुच लोग मेरे लेखमें इस प्रस्तावको पढ़कर मुझे बहुत नादान या बेहद अहंकारी समझेंगे। ग्रेसनके सामने मेरी योग्यता, और योग्यता नहीं तो कमसे कम प्रसिद्धि, तो निर्विवाद रूपमें सौवें भागसे अधिक नहीं है।

सोच-विचारके पश्चात् मैंने निश्चय किया कि मैं उस—लोगोंके राबियन बननेका प्रस्ताव रखने वाले—लेखको लिखूँगा ही और जैसा कि आप पढ़ आये हैं वह लेख मैं ऊपरकी पंक्तियोंमें लिख चुका हूँ।

इस प्रस्तावपूर्ण लेखको पढ़कर यदि आप या मेरे कोई अन्य पाठक मुझे अहंकारी, अपनी पात्रताके बाहर यशका लालची और एकदम 'छोटे मुँह बड़ी बात' कहने वाला समझेंगे तो मैं अपनी इस बड़ी बातको आपकी या उनकी इच्छानुसार सन्तोषजनक रूपमें छोटा कर दूंगा।

ऐसा करनेके लिए मुझे इस लेखकी किसी वात को काटने या वापस लेनेकी आवश्यकता न होगी, मैं केवल उस बुद्धिमान आदमीके उपायसे काम लूँगा जिसके सामने कागजपर एक लकीर खीचकर एक दूसरे बुद्धिमानने कहा था, 'इस लकीरको विना काटे छोटा कर दो।'

पहले बुद्धिमानने रवड या चाकूका सहारा नही लिया और उस लकीर को छोटा कर दिया। उसने केवल उस लकीरके पास उससे वडी एक दूसरी लकीर खीच दी, पहली लकीर छोटी हो गई।

आप देख रहे है, अपने सम्वन्धमे कही हुई किसी भी वातको आप के सन्तोपके लिए छोटा करनेका मेरे पास यह उपाय है कि मैं अपने सम्वन्ध मे पहलेसे भी वड़ी कोई और वात कह दूँ। कहनेके लिए ऐसी बाते मेरे पास वहुत-सी है।

लेकिन मेरा अनुमान है कि मुझे ऐसा नही करना पडेगा क्योकि मेरे इस लेखको पढकर मुझे सचमुच वहुत नादान अथवा अहकारी समझने वाले लोग कोई नही होगे। और अगर कोई होगे भी तो वे वही होगे जिन्हे शब्दोके अर्थ तो आते है किन्तु उनसे वने हुए वाक्योका अर्थ लगाना नही आता।

पुनश्च:

यह लेख मैंने अपनी कापीपर पूरा करके रखा ही था कि मेरे एक मित्रने कमरेमे प्रवेश किया और विना किसी लोकाचारके उसे उठाकर प्राइमरी क्लास रूमके स्वरमे पढ गये। पढकर उन्होने कहा—

"आपको घुमा-फिराकर वातोको पेच देनेकी कला आती है, और मैं समझता हूँ कि इस लेखमे और कुछ नही, केवल आपका अहकार ही बोल रहा है।"

मैंने कहा—"सम्भव है, मेरा अहकार ही इसमे बोल रहा हो, लेकिन 'कौन वोल रहा है' की खोज पडतालमे आप 'क्या बोल रहा है'को सुनने-समझनेके लिए अपने कान खुले रखना भूल जाते है। यह आजकल के कान-दारोके बहरेपनका एक बढता हुआ लक्षण है।"

उन्होंने कहा—"मैंने ध्यानपूर्वक आपका लेख पढा है। इसमें मेरे पल्ले कुछ पडा नही।"

मैंने कहा—"आपके, या किसी भी पाठकके पल्ले कुछ डालनेका काम मेरा, और मेरी रायमे किसी भी भलेमानस लेखकका, नही है मेरा काम तो इतना ही है कि मैं लोगोको अपने-अपने पल्लेकी चीज़ोको टोलने के लिए कुछ प्रेरित कर दूँ।"

इन मित्रका भतीजा अठारह वर्षका एक नवयुवक, जो मेरे लेखोंकी नकलमे मेरी मदद करनेके लिए पहलेसे ही बैठा था, और जो अपने चचा के मुखसे मेरे इस लेखको अभी सुन चुका था, उन्हींको लक्ष्यकर बोल उठा—

"इस लेखका मतलब मैं यह समझता हूँ कि संतोष, समझदारी और मित्रताके प्रयोगके लिए भी साहसकी आवश्यकता है और साहसपसंद लोगोको इनकी ओर भी ध्यान देना चाहिए। डेविड ग्रेसनकी उन तीनों पुस्तकोको पढनेका मुझे लालच हो आया है और मैं समझता हूँ कि अगर मैं अपने जीवनकी समस्याओको स्वय सुलझाने लग जाऊँ तो यह रॉजी स्वय ग्रेसोनियन बनने और दूसरोको राबियन बनानेके बराबर ही हरीआयन बनना भी पसद करेगे।"

और मैं चुप होकर सोचने लगा कि लेखोको समझनेके मामलेमेंमेरे हम-उम्र मित्रसे उनका भतीजा यह हरीश कितना अधिक बुद्धिमान है!

●

मैं सोचने लगा

पिछले कुछ दिनो मेरे कुछ समीपवर्ती मित्रोको मेरे सम्बन्धमे एक वडी चिन्ता रही।

उन्हे भय हुआ कि परलोक और अगले जन्ममे मेरी दिलचस्पी अगर इसी तेजीसे वढती जायगी तो मै इस दुनियामे अपने जन्मभरके लिए वेकार हो जाऊँगा ।

उनका यह भय निर्मूल नही था। सचमुच जन्म-जन्मान्तर और सूक्ष्म लोको, सूक्ष्म शरीरो और मनु-मन्वन्तरोके सम्वन्धमे मेरा अध्ययन और चिन्तन वढ चला था और अपने साहित्यिक तथा आर्थिक विकासकी ओर मेरा ध्यान घट चला था ।

जव आदमी परलोक और परजन्मकी खयाली दुनिया मे भटकने लगता है तव वह व्यावहारिक जीवनके लिए प्राय निकम्मा हो जाता है। यह एक आखों-देखी सचाई है। हमारा भारतवर्ष और हमारी हिन्दू जाति आज दुनियाकी दौडमे जो इतनी पिछडी हुई दिखाई देती है उसका वहुत कुछ कारण उसकी ऐसी खयाली, अव्यावहारिक, धार्मिक रुचि और प्रवृत्ति ही है—मेरे मित्रोने वताया।

यह एक सचाई है, लेकिन मेरा अनुमान है, एक गलत सचाई है। मेरे इस अनुमानकी सार्थकताको आप इस लेखमालाके—और कुछ-कुछ इस लेखके भी—अत तक पहुँचते-पहुँचते देख लेगे ।

मित्रोने कहा "तुम एक ऐसी चीजके पीछे पड रहे हो जिसका अस्तित्व सम्भव है हो, सम्भव है न हो। लेकिन इस धुनके पीछे उस चीजकी सम्हालकी ओरसे आखे फेर रहे हो जो वास्तवमें, प्रत्यक्ष तुम्हारे सामने है।"

मैने उत्तर दिया, "आप लोग ऐसी चीजके पीछे पड रहे है जो वास्तवमे

प्रत्यक्ष आपके सामनेसे खिसकी जा रही है और किसी तरह भी नहीं रुकेगी; और इस धुनमे उस चीजकी ओरसे आखे फेर रहे है जो सम्भव है न न हो, लेकिन सम्भव है, हो भी !"

मेरे मित्रगण हँस पड़े। उन्होने मेरे इस उत्तरकी प्रशसा करते हुए बताया कि यह एक सुन्दर, 'विटी'—हाजिर जवाबीवाला-कलात्मक, रसात्मक, और काव्यात्मक उत्तर है और इसमे थोड़ी बहुत 'ओरिएटल फिलासफी'—प्राच्य दार्शनिकता—भी है।

लेकिन ज्यो-ज्यो दिन बीतते गये मेरे मित्रोका मुझपर तरस बढता गया। इस 'तरस' का प्रधान कारण यह था कि मैं सौ रुपया महीना कमाता था, दो सौ रुपया कमा सकता था और अब केवल पचास ही कमाने लग गया था। लेखक मैं पहले-से ही था, लेकिन मेरे लेखनका स्तर गिर गया था और इस गिरावटका कारण मेरा आर्थिक अभाव ही माना जाता था। मेरी अधिकाश रचनाएँ- कहानियाँ ही मैं उन दिनो लिख रहा था—'अस्वाभाविक' 'अकलात्मक' 'निरर्थक' 'जटिल' 'भारी' 'बच्चोकी-सी' और 'ऐतिहासिक रूपसे गलत' कह-कह कर अनेक पत्र-सम्पादको द्वारा लौटाई जाने लगी थी। मेरे मित्र भी इन सम्मतियोसे प्राय सहमत थे। वास्तविकताकी दुनियामे रहकर अपनी साहित्यिक प्रवृत्ति और आर्थिक स्थितिको ठीक रखनेका उनका स्नेह-पूर्ण अनुरोध बढता गया।

विवश होकर मैंने अपनी 'परलोक-प्रवृत्ति' के समर्थनमे एक कहानी लिखकर उन्हे सुनाई। कहानी सुनकर मित्रोने मेरी पीठ ठोकी। उन्होने कहा कि यह कहानी सुन्दर, चुभती हुई, रोचक, व्यंग्यात्मक, सरल, प्रवाहपूर्ण, प्रसादमयी, सुबोध और बच्चोको भी समझमे आ सकनेवाली है। उन्होने बताया कि अब मैं कुछ ठीक पटरी पर आ गया हूँ।

इस कहानीसे मुझे मित्रोकी प्रशसा तो मिली, पर मेरा असल मतलब हल न हुआ, मेरे प्रति उनके दृष्टिकोणमे कोई परिवर्तन न हुआ।

अन्तमें मैंने एक कविता¹—कहना चाहिये शायरी—उन्हें सुनानेके लिए लिखी।

"कमाल है—प्रवाह है—हिन्दी वालेका उर्दू पर अधिकार है—अकबरका लहजा है—गिरामोफोनमें जान है—ऊँची उड़ान है—सचमुच तर्ज़-बयाँमें नजाकत है" मित्रोंने कहा।

"नजाकत ही नहीं, इस कवितामें कविकी जीवन-सम्बन्धी कुछ घटना भी है।" एक कुछ गहरी पैठके मित्रने मुसकराहट भरी दृष्टिसे मेरी ओर देखते हुए कहा।

मैं फिर भी असफल हुआ। मेरे अभिप्रायकी ओर उनकी आँख न उठी, मेरे निवेदनकी ओर उनका हृदय सावधान न हुआ। मुझे निराशा हुई।

मैं सोचने लगा।

अपनी परलोक और परजन्मकी रुचियोंमें मेरा पूरा विश्वास था, लेकिन मैं अपने कृपालु मित्रोंको अपना सहमत बनाकर उनकी चिन्ता मिटाना चाहता था। मैं अपनी प्रवृत्तिकी सार्थकता उनके सामने प्रमाणित करना चाहता था।

एक दिन बाजारमें मुझे एक अभीष्ट प्रमाण मिल गया।

दूसरे दिन मैं अपने कुछ मित्रोंको बाजारमें एक व्यवसायी चित्रकार की दूकान पर ले गया।

---

१. कहानी तो लम्बी थी इसलिए वह यहाँ उद्धृत नहीं की जा सकती, लेकिन यह कविता चार पंक्तियों की थी इसलिए यहाँ दी जा रही है। यह थी·

किया है अर्ज़ मैंने हालें-दिल अपना हसीनों से
मेरे तर्ज़-बयाँ पर अब वो अपनी राय कुछ देंगे।
न आँखें ही उठायेंगे न आँचल ही सँभालेंगे
गिरामोफोन समझेंगे सुई की नोक देखेंगे।

चित्रकार और उसका आठ सालका लडका दोनो ही अलग-अलग मेज़ो पर, कागजके एक-एक लम्बे तख्तेपर काम करनेमे व्यस्त थे।

लड़का अपने तख्तेपर धीमे हाथो किन्तु सफ़ाईके साथ, पटरी और पेंसिलके सहारे, कुछ फासलेपर खिची हुई दो समानान्तर रेखाओंके बीच, एक दी हुई नापके छोटे-छोटे त्रिभुज वनाता जा रहा था। ठीक वैसा ही काम उसका पिता अपने कागजपर कर रहा था।

"तुम इस कागजपर क्या वना रहे हो ?" मैंने वालकसे पूछा।

"त्रिभुज वना रहा हूँ। इस सारे कागज भरमे मुझे इसी नापके छत्तीस त्रिभुज वनाने है।" वालकने कहा।

"इन त्रिभुजोपर फिर तुम क्या बनाओगे ?" मैंने उससे पूछा।

"त्रिभुजोपर क्या वनाऊँगा !" वालकने आश्चर्यके स्वरमे दोहराया, "त्रिभुजोपर भला क्या वनाया जाता है ? इन कागजोपर तो सिर्फ त्रिभुज ही बनते है ! मै यही काम करता हूँ, मेरा दूसरा भाई भी यही काम करता है।"

हम लोग अव चित्रकारकी मेज़के सामने जा-पहुँचे।

वह भी अपने वेटेकी भाँति दो समानान्तर रेखाओके वीच उसी नापका एक त्रिभुज—यह त्रिभुज उस पक्तिका तीसरा त्रिभुज था—उसी इतमीनान और सफाईके साथ बना रहा था।

"आप यह क्या चीज वना रहे है ? " मैंने चित्रकारसे पूछा।

मेजके नीचे पडा हुआ एक रगीन चित्र उठाकर चित्रकारने हमे दिखाया। वह युद्ध-क्षेत्रमे टीलोपर सजी हुई तोपोका रग-विरगा चित्र था। इन टीलो और तोपोकी शकले—हमने स्पष्ट देखा—उन त्रिभुजोके सहारे ही वनाई गई थी। चित्र देशी ग्रामीण कलाका ही चित्र था। ऐसे छ. सौ चित्र उसे तैयार करने थे, उसने बताया।

हम लोग दुकानसे वाहर आये।

"लडका केवल त्रिभुज वनाना जानता है और उन्हे सफाईके साथ वनाता है। वापके मस्तिष्कमे पूरा चित्र है और वह पूरा चित्र वनाता है। लेकिन क्या पूरे चित्रका ज्ञान मस्तिष्कमे होनेके कारण वह चित्रके एक

अंग—एक त्रिभुज—को इतमीनान और सफाईसे बनानेमें असमर्थ या लापरवाह है?" मैंने मित्रोंसे पूछा।

"मैं समझा" एक मित्रने कहा, "आपका मतलब यह है कि आपके सामने पूरे जीवनका, जिसमें परलोक और परजन्म भी सम्मिलित है, चित्र है और हमलोगोंको इस जीवनके ही थोड़ेसे ऊपरी काम धन्धोंका, मानों चित्रकी कुछ प्रारम्भिक रेखाओंका ही पता है। आप बड़े दार्शनिक और तत्त्वदर्शी हैं और हम निपट अंधे मामूली दुनियादार हैं। लेकिन मित्रवर, ऐसे तर्कों और उदाहरणोंसे जीवनके व्यावहारिक सिद्धान्त नही निकाले जाते। आपका दिखाया हुआ यह उदाहरण आपके विरुद्ध ही जाता है। वह चित्रकार पूरे चित्रको जानता है, इसलिए उसकी प्रारम्भिक रेखाओं को भी इतमीनान और सफ़ाईसे बनानेमे समर्थ और सावधान है। लेकिन आप अपने जीवनकी छोटी-छोटी व्यावहारिक बातोमे असफल और असावधान दीख रहे हैं—अपनी आर्थिक और साहित्यिक स्थितिको सम्हाले रखनेमे डगमगा रहे हैं। क्या इससे यह सिद्ध नही होता कि आप पूरे चित्र को तो दूर, जीवनके ऊपरी अधूरे चित्रको भी बनानेके अयोग्य, और इसी-लिए समझनेमें असमर्थ, हो रहे हैं। हम तो आपकी दूरदर्शिता तब समझे जब आपकी व्यावहारिक और आर्थिक स्थिति सुखद और सुलझी हुई हो।"

मैं सोचने लगा। मित्रके कथनमे मुझे बहुत जान दीख पड़ी। यदि मैं अपनी दुनियावी स्थितिको ही ठीक नही सम्हाल पाया हूँ तो सम्भव है, मेरे परलोक और परजन्म सम्बन्धी विचारोंकी हैसियत हवाई महलो जैसी ही हो।

मित्रोंको सहमत करके उनकी चिन्ता मिटानेका विचार मैंने छोड़ दिया। मैं अपनी चिन्ता करने लगा। यदि आर्थिक सकीर्णता, और और साहित्यिक प्रतिभाका अभाव एव नगण्यता ही मेरे पास बढ़ती आती है तो सम्भव है, मैं ही गलती पर हूँ। निस्सदेह ऐसी कोई अप्रिय और और हीनता सूचक वस्तुएँ मेरे पास नही फटकनी चाहिएँ—मैंने सोचा।

मैं सोचने लगा।

रातोरात अमीर

उस रात हम—मै और मेरी पत्नी—पैसोकी गहरी चिन्तामे सोये।

तीन दिनसे मुझे एक ऐसा कुरता पहनकर बाहर निकलना पडता था, जिसकी गुँथी हुई सिलन पर हर मिलने वालेकी नजर पड जाती थी। मेरे पास केवल एक धोती रह गई थी, और वह भी इतनी घिस आई थी कि उसे पहनकर बाहर निकलना किसी समय भी धोखा दे सकता था। पत्नीके पास भी जो एक साडी मजबूत बची थी वह मोटी और भद्दे डिजाइन की थी। उस दिन हमारे घरमे घी नही था, गेहूँका एक छटाक आटा नही था और साग खरीदनेके लिए एक घिसा पैसा तक नही था। दूध वालेके, धोबीके और बरतन साफ करने वालीके दाम सिर पर चढ़ गये थे। दूसरे-तीसरे दिन वे अपने पैसे माँग भी बैठते थे। और सबसे बड़ी समस्या यह थी कि अगले ही दिन हमारे एक मित्र अपनी पत्नी और गोदके बच्चेके साथ हमारे मेहमान होने वाले थे। मेरी उलझन इसलिए और भी बढी हुई थी कि उनकी पत्नी विशेष सुन्दर और अमीर घरकी लडकी थी।

स्वभावतया उस रात हम पैसेकी गहरी चिन्तामे सोये।

दूसरे दिन जब मै सोकर जागा तो मेरा हृदय एकदम हलका और बहुत प्रसन्न था।

जागते ही मैने पत्नीको एक सुन्दर-सा सपना सुनाया और उसे उत्साहित किया कि उस सपनेका फल उसी दिनसे देखनेको तैयार हो जाय।

हमने अपने बन्द बक्सोकी तलाशी ली। बक्सोमे जो कपड़े निकले, हमने हिसाब लगाया, वे हमारे कम-से-कम दो साल तक पहननेके लिए काफी थे। इन कपडोका ब्यौरा, जहाँ तक मुझे याद है, इस प्रकार था—

बढिया रेशमी साडियाँ ५, जो केवल बाहर और व्यवहारके अवसरो पर ही पहननेके विचारसे चार-चार छह-छह बारसे अधिक नही पहनी गई

थीं; मर्सीराइज्ड कुछ कमजोर साड़ियाँ २; जम्पर और ब्लाउज ३; पेटीकोट १, घिसी हुई सूती साड़ियाँ २, जिन्हे मरम्मत करके घरमे दो-तीन महीने पहना जा सकता था; मेरी रेशमी कमीजें साबित २; रेशमी कुरता कुछ मरम्मत-तलब १; सूती कुरते साधारण मरम्मत-तलब ४, बनियाइनें कुछ घिसी हुई ३; धोतियाँ घिसी हुई लेकिन काममे आने योग्य ३; मोटी धोती बहुत मजबूत लेकिन कुछ कम अर्ज़की १; पैंट बिलकुल मजबूत लेकिन कुछ सँकरे घेरके, अत नई रुचिके अनुसार अब नापसंद ३, साधारण-तया घिसे हुए पैंट २; कोट २; वास्कट १, बिस्तरके चादरे फटे हुए ५; तौलिया साबित १, घिसे हुए ३; मोटी दुसूती कमीज १; ऊनी कोट साबित १, मरम्मत-तलब ३, और छोटे पडे हुए २; ऊनी वास्कट मरम्मत-तलब १; रेशमी अचकन और चूडीदार पाजामा साबित १ जोडी; तकियेके गिलाफ, मोजे, दस्ताने, मफलर आदि अनेक, कुछ काममे आ सकने वाले और कुछ बेकार कपडे।

हमने हिसाब लगाया कि ये कपड़े किफायत, सादगी और खुली तबीयत से , बिना किसी कजूसीके पहने जायँ तो हमारे लिए दो सालका काम दे सकते थे।

उस दिन सबेरे ही स्नानादिसे निवृत्त होकर मैंने एक बनियाइन, रेशमी कुरता और धोती बक्ससे निकालकर पहनी, और पत्नीने भी बढिया जम्पर और मर्सीराइज्ड साड़ी पहनी, और मेहमानोके साथ शहरकी सैरको जानेके लिए अपनी एक रेशमी साडी मय ब्लाउज, तथा मेरी रेशमी कमीज और एक पैंट निकालकर ऊपर छोटे बक्समे रख लिये।

हमारा पुराना बक्स अभी खुला हुआ ही था कि दूध वाले लडकेने कमरेमे प्रवेश किया। मैंने उसका विशेष आदरके साथ स्वागत किया और अपना एक पुराना ऊनी कोट ,जो मेरे लिए छोटा हो गया था, मय एक पुरानी कमीज़ के उसे भेंट किया। उसने उसी समय उन्हे पहन लिया और अपनी बालटीमे बचा हुआ साढे तीन सेर दूध हमारे बरतनोमे पलट कर खुशीके मारे उछलता-कूदता हमारे जीनेसे उतर गया । वह हमे

प्रति दिन आधा सेर दूध देने आता था लेकिन आज तीन सेर अधिक देकर उसने अपने एक कर्जकी, हौसलेके साथ स्वयं ही अदायगी की थी। दो महीने पहले, उसका विवाह पक्का होनेके उपलक्ष्यमें हमने उससे दावत माँगी थी और उसने हमारी माँग स्वीकार भी की थी, लेकिन उसका वादा दो महीने से टलता आ रहा था। यह कोट और कमीज उसके हिसाबसे उस बिलका चौगुना माल था और हमारे हिसाबसे उस बिलका चौथाई भी नही था—वह गरम कोट मेरे लिए तो बिलकुल बेकार ही था।

उस दिन धोबी और बरतन मलने वाली महरीके दाम भी हमने इसी प्रकार की उदार भेंटो द्वारा चुकाये। उनकी प्रसन्नता वाजिब दाम पानेकी प्रसन्नतासे कही अधिक थी।

उस दोपहर हमने अपने मेहमानोका जितनी सुन्दर पोशाकमें स्वागत किया—हमारे एक पड़ोसीकी बादकी टिप्पणी थी—उतने अच्छे कपड़े हमने पहले किसी मेहमानके आनेके समय नही पहने थे।

अपने मेहमानोंको उस दिन हमने जीभर कर बढ़िया खीर और साथ मे जौ-चनेकी एक-एक मोटी नमकीन रोटी इमलीकी चटनीके साथ खिलाई। हमारी इस सादगी और सुरुचि की हमारे मेहमानोने हृदयसे प्रशंसा की।

यह बतलानेकी आवश्यकता नही कि हमारे भंडार घरमें चावल, चीनी जौ-चनेका आटा और इमली मौजूद थी। जौ-चनेका नाज, चावल और चीनी हमारे घरम इतनी थी कि हम नमकीन रोटी, मोटा भात—और दूध मिलता रहे तो खीर—पंद्रह दिन तक खाते रह सकते थे।

उस दिन शामको उसी जौ-चनेके आटेके तेलमें भुने हुए करारे परामठों की दावत रही और दूसरे दिन सुबहकी चाय के बाद हमारे मेहमान विदा हो गये।

चलते समय कायदेके अनुसार यह आवश्यक था कि मेरी पत्नी उनके बच्चेके हाथमें कम-से-कम दो रुपयेका नोट रक्खे।

इस समस्याको भी मैंने पत्नीके साथ एकान्त परामर्श-द्वारा कुछ घंटे पहले ही हल कर लिया था।

चलते समय मेरी पत्नीने अतिथि शिशुको एक छोटा, सुन्दर कटावका दर्पण भेट किया। बालकने भेट का दोनो बाहे फैलाकर आतुर आलिगन किया और दूसरे ही क्षण उस भेटकी ऊपरी बाटको अपने होठोमे भर लिया। नोट या सिक्केका वह निश्चय ही कभी इतना सहृदय स्वागत नही कर सकता था।

इस दर्पणका मुख भाग उस बालकके लिए जितना प्रिय उपहार था, उसका पृष्ठ भाग उसके माता-पिताके लिए उससे कम प्रिय उपहार नही था। दर्पणकी नकली नीले मखमलसे मढी पीठ पर मैने लाल पेसिलसे लिख दिया था।

"नावलेकर दम्पतिके नये आध्यात्मिक मित्र सुधाकरके पुण्य-करोमे रावी-दम्पतिकी श्रद्धा-भेट।"

इस लिखावट पर दृष्टि पडते ही श्रीमती नावलेकरने विस्तरपर लेटे छोटेसे सुधाकरके हाथोसे झपटकर वह दर्पण छीन लिया और उसे पढकर अपने पतिकी ओर बढाते हुए विस्मित स्वरमे कहा :

इसका मतलब? —श्रद्धा-भेट—आध्यात्मिक मित्र?"

बालकने इस अभूतपूर्व वर्वरतापूर्ण अपहरणका अपने ऊँचे-से-ऊँचे प्रवल क्रन्दन-द्वारा विरोध किया। भेट न्याय-सगत अधिकारीको लौटा दी गई। वह फिर उसमे तन्मय हो गया।

तांगा बाहर खड़ा था, लेकिन इस असाधारण अर्थ वाली भेटपर हमारा वाद-सवाद वीस मिनट तक चला। अन्तमे नावलेकर दम्पतिने स्वीकार किया कि सचमुच वह बालक मेरा श्रद्धेय और उनका आध्यात्मिक मित्र हो सकता है। इसकी पुष्टिमे श्रीमती नावलेकरने बालकके बारेमे उसके जन्मोपरातसे सम्बन्धित कुछ सुन्दर कथाएँ भी सुनाई और उनका हृदय इस बालकके प्रति एक नई भावनासे पुलकित हो उठा। उनकी आँखोमे आँसू उभर आये।

सुधाकर ही नही, मेरे सभी मित्र दम्पतियोके नये शिशु मेरे श्रद्धेय और अपने माता-पिताके आध्यात्मिक मित्र होते है, और अनेक

माताएँ इसका समर्थन कर सकती है—यह बात प्रसंगके सहारेमैं यहाँ और जोड देना चाहता हूँ।

हमारी उस भेटका जितना सादर स्वागत हुआ उतना पहले किसी भेट का नही हुआ था।

वह दर्पण हमने अपनी पिछली दिल्ली-यात्रामे दो रुपयेके पाँचवे भाग से भी कममे खरीदा था।

मेरी बहुत बड़ी आर्थिक समस्याका हल मुझे मिल गया था।

मै रातोरात अमीर हो गया था।

आप विश्वास नही करते ?

लेकिन हमारा—मेरा और मेरी पत्नीका—दावा है कि हमारी श्रेणी के लोग जिनकी आमदनी चालीस और साढ़े चार सौके बीच है और जो सदैव मुँहको हाथ दिये हुए रहते है, जिस दिन चाहे रातोरात अमीर हो सकते हैं।

अगर वे अपने घरकी चाबियाँ हमारे हवाले करना पसन्द करेतो हम उनकी शर्तिया सहायता भी कर सकते है।

अगर आपकी आमदनी घरके हर व्यक्ति पीछे उन्नीस रुपये मासिकसे ऊपर है तो हम आपके भी रातोरात अमीर होनेका प्रबन्ध कर सकते हैं और इस बातका भी उपाय रख सखते हैं कि आपके घरमे कोई भी भेटका अधिकारी बिना भेंट न लौटे।

ये पंक्तियाँ मै उस दिन लिख रहा हूँ जब कि फी रुपया गेहूँका भाव डेढ़ सेर, मोटे नाजका ढाई सेर, नमकका छह सेर, तेलका ६ छटाक, साबुन का १२ छटाक, दूधका दो सेर और चवालीस इंची कपड़ेका दस गिरह है।

आप हमे अपनी चाबियाँ देना पसद करेंगे ?

●

एक अध्याय और

पैसेकी समस्या—जिसका अर्थ है, आवश्यक वस्तुओंकी कमीकी समस्या—यदि आपकी भी समस्या है तो मैं आपके सामने भी वे ही प्रश्न रखूँगा जो अपने सामने मैंने रक्खे हैं और जिनके प्राप्त उत्तरोंका उपयोग मैंने थोड़ा-बहुत प्रारम्भ कर दिया है।

आप कसे हाथ, यानी तंगदस्त नहीं रहना चाहते। कोई भी नहीं रहना चाहता।

इसका अर्थ यह है कि आप खानेके लिए रुचिकर और पुष्टिकर भोजन चाहते हैं, पहननेके लिए सुन्दर और सुखकर कपड़े चाहते हैं, रहनेके लिए सुविधाजनक स्थान चाहते हैं और प्रियजनोंके सत्कारके लिए उपयुक्त सामग्री चाहते हैं।

इस चाहकी पूर्तिकी राहें मैंने खोज ली हैं। उनपर मैं कितनी दूर तक चल पाया हूँ, यह दूसरी बात है।

पहली राह—मुझे कहना चाहिए, पहला उपाय—यह है कि आप जो-जो कुछ चाहते हैं वह सब बाजारसे, या जहाँसे भी मिले, लाकर अपने घरमें रक्खें। यह सबसे सीधा उपाय है।

और अगर सभी चाही हुई वस्तुओंके लिए आपके पास समाई और पैसा नहीं है तो उन सभी चीजोंके नाम एक लम्बे कागजके टुकड़ेपर लिख लें और हर नामके आगे एक प्रश्नका चिन्ह—?—लगा दें।

इस प्रश्न चिह्नके तीन अर्थ अपने मनमें ये निश्चित करें :

१—क्या मैं समझता हूँ कि इस वस्तुकी मुझे आवश्यकता है ?

२—इस वस्तुसे मैं जो लाभ चाहता हूँ, क्या वह किसी दूसरी अधिक सुलभ वस्तुसे नहीं निकल सकता ?

३—इनसे भी अधिक आवश्यक वस्तुएँ प्राप्त करनेके बाद मेरे पास इसे खरीदनेकी समाई बचती है या नही ?

ऊपर कहे पहले उपायका सहारा लेनेमें अपने आपको एकदम असमर्थ पाकर मैंने दूसरे उपायका सहारा लिया और आवश्यक वस्तुओंकी एक सूची तैयार की। इन वस्तुओंकी संख्या १६९ निकली !

इनमेंसे कुछ वस्तुएँ स्पष्टतया केवल एक बार खरीदनेपर जीवन भर उपयोगमे आसकने वाली थी, कुछ की खरीद कुछ वर्षो बाद, कुछकी प्रति वर्ष, कुछकी हर छमाही, कुछकी हर महीने और कुछकी हर सप्ताह या हर दिन आवश्यक थी !

हर एक वस्तुके सम्बन्धमे उस त्रिभागात्मक या त्रिगुणात्मक प्रश्नका उत्तर निकालनेमें मुझे जितना मानसिक श्रम और समय खर्च करना पड़ा उसका मुझे पहले अनुमान नही था। लेकिन उनके उत्तरोंसे निकला हुआ परिणाम आश्चर्यजनक था।

१६९ मे से १२१ वस्तुओके सम्बन्धमे मेरा उत्तर था :

"मैं नही समझता कि इस वस्तुकी मुझे आवश्यकता है !"

'तब मैंने इस चीजका नाम इस सूचीमे लिखाही क्यों,' मैंने आश्चर्य-पूर्वक एक प्रश्न-पुत्र प्रश्न—पहले प्रश्न से उत्पन्न हुआ एक शिशु-प्रश्न—अपने मनमें उठाया।

खोजते-खोजते इसका जो उत्तर मुझे अपने भीतरसे मिला, वह और भी आश्चर्यजनक था। वह था :

'मैं तो नही समझता कि इस वस्तुकी मुझे आवश्यकता है, केवल मेरे कुछ पडोसी और प्रियजन समझते है कि मुझे इसकी आवश्यकता है।"

मेरी ७१ प्रतिशत आवश्यकताएँ केवल इसलिए मेरी आवश्यकताएँ थीं कि दूसरे लोग उन्हें मेरे लिए आवश्यक समझते थे !

अपने सम्बन्धमे आपकी ऐसी खोज-पड़तालका नतीजा मेरे नतीजेसे अधिक भिन्न नहीं निकल सकता।

अपनी आवश्यकताओको आप दूसरोकी बुद्धिसे सोचते है—जीवनकी सबसे बडी, सबसे अधिक व्यापक विवशता यही है।

लोग सोचते है, "आपको यह चीज भी चाहिए, वह चीज भी चाहिए।"

और आप भी सोचने लगते है, "हॉ हॉ, मुझे यह चीज भी चाहिए, वह चीज भी चाहिए।"

लेकिन अगर आप अपने आप निर्णय करे तो अधिकाश चीजोके लिए यही कहेगे, "मुझे यह चीज नही चाहिए, वह चीज भी नही चाहिए।"

तब वे ही दूसरे लोग कह उठेगे, "आपको ही नही, हमे भी यह चीज नही चाहिए, वह चीज भी नही चाहिए।"

आप अपना निर्णय नही करेगे तो दूसरोके निर्णय पर आपको चलना पड़ेगा, और अपना निर्णय आप स्वय करेगे तो दूसरे भी आपके निर्णयपर चलेगे—यह कुछ पुरानी रीति-सी चली आ रही है।

इस देशमे जब लोगोने पहले पहल अगरेजी कोट और पैट पहनने शुरू किये तब वे कोटके बिना, खाली कमीज पर पैट पहन कर सडक पर नही निकलते थे।

एक दिन किसी मित्रके घर एक सज्जनके कोटको दुर्घटना-वश आग लग गई।

उन्हे दिनोदिन अपने घर वापस लौटना था, लेकिन बिना कोटके पैट पहन कर सड़क पर निकलना कितना भद्दा और हास्यास्पद था, यह वह जानते थे। मित्रने उन्हे रात होने तक अपने ही घर रुकनेकी सलाह दी।

अँधेरा होनेपर गलियोमे छिपते-छिपाते वह जैसे-तैसे अपने घर पहुँचे। फिरभी रातमे उन्हे जो भी परिचित और अपरिचित लोग मिले वे उनसे मानो यही कहते जान पडे: 'महाशय, आपका कोट! मुझे दुख है, आपके पास कोट नही है!' उन्हे भी अपना वह अभाव चुभता रहा।

दूसरी सुबह भी उनके पास कोट नही था, लेकिन रातो-रात उन्हे कुछ सूझ सूझ गई थी।

सुबह उन्होंने बिना कोटके कमीज़ और पैंट पहना और शहरकी—अनुमानतः वह कलकत्तेका शहर था—सबसे चौड़ी सड़क पर निकल पड़े। हर मिलने वाले पर मुसकराना और हरेक 'उदारता-पूर्वक' कतराने वालेको पुकार कर उससे दो बातें करना उन्होंने अपना उस सुबहका रवैया बना लिया।

उस सुबह और उस सड़ककी हवा धीरे-धीरे सारे देशमें कुछ ऐसी फैली कि अधिकांश कोट-पैंट पहनने वाले लोग सड़कों पर बिना कोटके निकलने लगे।

पिछली शाम तक उन सज्जनका विचार था कि उन्हें कोटकी अनिवार्य आवश्यकता है।

उनका वह विचार इसलिए था कि लोगोंका विचार था कि उन्हें कोटकी अनिवार्य आवश्यकता है।

लोग कहने लगे, "ठीक है, हमें भी सड़क पर निकलनेके लिए हर समय पैंटके साथ कोटकी आवश्यकता नहीं है।"

और आज दिन तक कालेजोंके अधिकांश लड़के बिना कोटके ही पैंट पहनकर सड़कों और कालेजोंमें जाते हैं।

मेज, कुर्सी, सोफा, कालीन, टीसेट, सिगरेट केस, ऐश-ट्रे, जूतों, मोज़ों और कपड़ोंकी तीसरी, चौथी और अगली जोड़ियाँ; थरमस, हॉल्डाल, फाउंटेन-पेन, हैंडबैग, मनीबैग, टुथ-ब्रश, हेयर आयल, कलाकन्द, पिस्ता, अखरोट, स्नो-क्रीम, टार्च, टिफन कैरियर आदि १२१ चीज़ें ऐसी हैं जिनकी आवश्यकता आप केवल इसीलिए समझते हैं कि दूसरे लोग उन्हें आपकी या अपनी आवश्यकता समझते हैं।

मेरा यह मतलब नहीं कि ये चीज़ें उपयोगी या आरामदेह नहीं हैं। ये ऐसी हैं, लेकिन तभी जब कि आपके पास इनके लिए पैसोंकी कमी न हो।

मैं अपने निकाले नतीजोंकी बात कह रहा हूँ; आपके नतीजे इनसे कहाँ तक मेल खायेंगे, यह आपके देखनेका काम है।

अब रही बात शेष अटनालिन सचमुच आवश्यक वस्तुओंकी।

इनके आगे भी आप वही प्रश्न का चिह्न लगा रहने दीजिए, बल्कि उनके प्रश्न-चिह्नको जरा और बड़ा कर दीजिए।

जिन लोगोंकी आमदनी साढे चारसौके मुकाबले चालीसके अधिक करीब है वे मेरे अधिक समीप हैं। । उनके सामने मैं इस विषयके कुछ गहरे प्रश्न रख सकता हूँ। नमूनेके तौरपर—

१—क्या आप समझते हैं कि अंगूर, सेब, काजू, किशमिश, पिस्ता आदि कीमती फल और मेवे इतने स्वादिष्ट और स्वास्थ्यके लिए अनिवार्य हैं कि रेलके तीसरे दर्जेमें सफर करनेकी हैसियत रखते हुए भी उनका खाना आवश्यक है? मेरी खोज है कि उनमें —और विशेषकर उन दिनों जबकि ये तोलमें गुड़के मुकाबले बीस गुनेसे लेकर चौगुने तक महँगे बिकते हों— एक विशेष प्रकारका 'जहरीला' विटैमिन होता है। उनका उपयोग अनावश्यक ही नहीं, अधिकांश खानेवालोंके स्वास्थ्यके लिए अदृश्यरूपमें बहुत हानिकर भी है। मेरा विचार है कि इन चीजों को तब तक अपने उपयोगसे बाहर रखना चाहिए जब तक आपकी हैसियत अपने घरके प्रत्येक व्यक्तिको एक पाव दूध या आधा सेर मठा देने की न हो जाय।

२—क्या आप समझते हैं कि कमरसे लेकर घुटनों तक—और स्त्रियोंके लिए गलेसे लेकर घुटनों तक —को छोड़कर शरीरके किसी भी अन्य भाग पर एक के ऊपर दूसरा वस्त्र पहनना स्वास्थ्य, सौन्दर्य और शराफतके लिए आवश्यक है? मेरी खोज है ऐसा करना स्वास्थ्यके लिए और स्वास्थ्यसे अधिक शराफतके लिए और शराफतसे भी अधिक सौन्दर्यके लिए अनावश्यक ही नहीं, बाधक भी है। मैं समझता हूँ कि शरीर पर तीसरी पर्तका कपड़ा तब तक न पहनना चाहिए जब तक कि सर्दी या लूसे बचावके लिए उसकी आवश्यकता न पड़े, और आर्थिक दृष्टिकोणसे जब तक कि रेलके पहले दर्जेमें सफर करनेकी हैसियत न हो जाय।

३—क्या आप समझते हैं कि अतिथि और सम्बन्धियोंको प्रसन्न और प्रभावित करनेके लिए कोई ऐसा खर्च करना आवश्यक है जो आपके लिए

सहज-साध्य न हो ? यदि आपके हृदयमे प्रसन्नताकी, व्यक्तित्वमे प्रभावकी और घरमे भूखको मिटा सकने वाले भोजनकी कमी रहती है तो मै आपकी वैसी धारणासे सहमत हो सकता हूँ।

और इनसेभी अधिक गहरी बाते—

क्या आपका निश्चयपूर्ण विश्वास है कि घी के विना रोटी यथेष्ट स्वादिष्ट और शक्तिदायक नही हो सकती ? हमारी शिक्षित श्रेणी के लोगोका आम विश्वास यही है, लेकिन मुझे इसकी सचाई मे संदेह है। ऋषीकेशके उपाध्यायजी पूर्ण स्वस्थ, पैसे वाले और स्वादके पारखी है, लेकिन घी का उनके भोजनमे नियमित स्थान नही है।

क्या आप समझते है कि दफ्तर या दिमागका काम करने वालोके लिए रोटी गेहूँकी ही आवश्यक है और जौ, चने और वाजरेकी रोटी उनका काम नही दे सकती ? मेरे प्रयोग इसके विपरीत परिणाम की ओर मुझे ले जाते दीखते है।

प्राकृतिक आहार-शास्त्री कहते है कि दाल वचपनके वाद वहुत कम खानी चाहिए, हरे सागोका खूब प्रयोग करना चाहिए, लेकिन मेरा अनुभव है कि जब आधा सेर हरा साग आधापाव दालसे महँगा मिलता हो और उसकी खरीद कठिन जान पड़े तो साग की जगह दालसे बराबर काम चलाते रहनेमे कोई हानि नही है। केवल दाल-रोटी खाने वाले मेरे चचेरे भाई-भतीजे अब भी हमारे सगे परिवारसे अधिक स्वस्थ है।

इस तरह खोजनेपर आपको उन अड़तालिस चीजोका भी—वे अड़तालिस अलग-अलग व्यक्तियोके लिए कुछ भिन्न भी हो सकती है—समाचार नये सिरेसे लेना पडेगा।

मै चाहता था कि इसी लेखमे अपनी उस पूरी सूचीका विवरण भी आपकी जानकारीके लिए रख दूँ, लेकिन ऐसा करना शायद आपके लिए कुछ कम मनोरजक हो उठेगा, इसलिए उस प्रकरणको छोडे देता हूँ। यहाँ केवल इतना लिख देना पर्याप्त है कि उन अडतालीस चीजोके नाम महत्त्व के क्रमसे लिखने पर मेरी पहली पन्द्रह चीजोके नाम ये होते है :

१–आटा २–ईंधन ३–नमक ४–तेल ५–हजामतके ब्लेड ६–कपडे धोनेका साबुन ७–शक्कर ८–दाल या साग ९–कागज-पेंसिल आदि लिखनेका सामान १०–डाक टिकट ११–दूध १२–रोशनीका तेल १३–बदनके कपड़े.–दो कुर्ते और दो मदरासी पहनावेकी ढाई गज़ी धोतियाँ तथा पत्नीके लिए दो जोडी सादे कपडे १४–जूते १५–मेम्बरीके चन्दे।

और इसके आगे जो सोलहवी चीज मैंने लिखी, उसके पहले नोट लिखा है:

'इतना यथेष्ट मात्रामे हो जाने पर मुझे अपना सफर ड्योढे दर्जमे करना प्रारम्भ कर देना चाहिये।' बत्तीसवी चीजके पहले दूसरे और अडतालीसवी के पहले पहले दर्जेमे सफर प्रारम्भ कर देनेकी बात भी मैंने लिख रक्खी है।

इस प्रकार आर्थिक समस्याओ सम्बन्धी मेरा नुस्खा यह है

जब आपको किसी वस्तुकी आवश्यकता हो तो तुरत उसे खरीद लाइये और अगर उसके लिए यथेष्ट पैसे न हो तो सोचिये, 'क्या सचमुच मुझे इसकी आवश्यकता है?' अगर आपकी आमदनी परिवारके प्रति व्यक्तिके पीछे बीस रुपयेसे ऊपर है तो आपकी कोई सचमुचकी आवश्यकता अपूर्ण नही रह सकती।

ये पक्तियाँ मैं ऐसे समय लिख रहा हूँ (चीजोके भाव फिर एक बार गिना रहा हूँ) जब कि फी रुपया गेहूँका भाव डेढ सेर, मोटे अनाजका ढाई सेर, नमकका छह सेर, तेलका नौ छटाक, साबुनका बारह छटाक, दूधका दो सेर और चवालीस इञ्ची कपडेका दस गिरह है।



सजावटके आगे

मैने अपनी पैसेकी, अर्थात् पैसेसे खरीदी जानेवाली चीजोकी समस्या हल कर ली है।

उस हलको क्रियात्मक रूप देनेमे अभी मेरी क्या क्या कठिनाइयाँ शेष रह गई है, यह एक अलग बात है और यहाँ पर उसकी चर्चासे मेरा या आपका कोई लाभ नही है।

तगी और मँहगाईके इन दिनोमे पत्र-पत्रिकाओ और उनकी सम्पादकीय टिप्पणियोमे मध्यम वर्गकी आर्थिक विपत्तियोकी बडी चर्चा आने लगी है। महीनेके पहले सप्ताहमे मिला हुआ उनका वेतन दूसरे सप्ताह तक खर्च हो जाता है और अगले दो सप्ताहका खर्च अगले महीनेकी तनख्वाहकी जमानत पर उधार लेकर चलाना पडता है। उनके मुकाबले निम्न श्रेणीका मजदूर वर्ग बहुत मजेमे है। उसकी अशिक्षितता और मोटे रहन-सहनकी सुविधाएँ ये है कि थोडा-सा दस्तकारीका हुनर सीखकर वह आसानीसे किसी कारखाने में चार-पाँच रुपये रोजकी मजदूरी कर लेता है और 'शराफत'-सम्बन्धी कोई खर्च न होनेके कारण लगभग यह सारी ही रकम अपने खाने-पीनेके खर्चमे ले लेता है। उच्चवर्ग तो प्रत्यक्ष रूपसे मजेमे है ही।

इस मध्यमवर्गकी आर्थिक विपत्तियोका कुछ भीतरी अनुमान मुझे भी है। गेहूँकी मँहगाईके कारण उन्हे कभी-कभी आधा पेट बिस्कुट और डबल रोटीसे और शेष आधा चायसे भरना पडता है। मन-पसंद कपडेका पेंट या अच्छे डिज़ाइनकी एक साडीके लिए मन मार कर रह जाना पड़ता है। दफ्तर जानेके लिए सोलह रुपयेका जूता और बाज़ारके कामोके लिए आठ रुपयेका चप्पल जब उन्हे ख़रीदना पड़ता है तब उस महीनेका मकानका किराया अदा नही हो पाता। ग्रामोफोनकी सुइयो तक के लिए पैसा न होनेके कारण उन्हे कभी-कभी माथे पर हाथ रखकर उदास बैठना पड़ता है।

रेडियो ख़रीदनेकी सम्भावनाको ठंडी आहके साथ छः महीनेके लिए और टालना पड़ता है। मेहमानोंकी नियम-बद्ध चाय-पानीके कारण रसोईके घीका बजट काटकर हर महीने डालडासे काम चलाना पडता है। अपनी बनी हुई मर्यादाके निर्वाहके लिए उन्हे सचमुच ऐसी अनेक संकीर्णताओ का सामना करना पडता है।

पत्रो और सम्पादकीय टिप्पणियोमे मध्यवर्गकी आर्थिक संकीर्णताकी चर्चा जो लोग लिखते है वे मध्यवर्गके ही लोग होते है और उनकी आमदनी औसतन दो और साढे चार सौके बीच रक्खी जा सकती है।

और मध्यवर्गकी आर्थिक संकीर्णताका जो पहला उपाय उन्हे सूझता है वह यह है कि हमारे गवर्नरका वेतन (भत्तासहित) दस हजार क्यो है, अमरीका स्थित भारतीय राजदूतका वेतन साढे आठ हजार क्यो है, रूसस्थित भारतीय राजदूतका वेतन साढे बारह हजार क्यो है, सरकारका यह खर्च इतना क्यो है, वह खर्च उतना क्यो है! पत्र-पत्रिकाओमे यह चर्चा कुछ दिनो तेज़ीसे चलती रही है।

भारतीय राजदूतोके वेतनोके निर्णयमे मेरा कोई व्यक्तिगत हाथ नही है और अगर उनके वेतन पचहत्तर प्रतिशत कम करके वह रकम मध्यवर्ग वालोमे बॉट दी जाय तो मुझे कोई आपत्ति नही है, लेकिन ऐसा होनेसे मध्यवर्गवालोकी स्थिति सुधर जायगी, इसमे मुझे पूरा संदेह है।

मेरा नौकर या भाई कुछ दिनोसे दो रोटियाँ अधिक खाने लगा है, लेकिन उसने मेरी बडी सेवा की है, वह मुझसे अधिक बलिष्ठ है, परिश्रमी है। मै उसका सम्मान करता हूँ, उसपर अनेक बातोके लिए निर्भर हूँ। उन दो अतिरिक्त रोटियोके लिए मै उसकी आलोचना करने लगूँ तो क्या यह ठीक होगा? क्या यह मेरी भलमनसाहत, इतने दिनोके सम्पर्क-ऋण और विचार शीलता के अनुकूल होगा?

मै यह नही कहता कि राजदूतो और अफसरोके खर्चोमे कमी की मॉग करनेका मध्यवर्गवालोको अधिकार नही है—उनके ये वेतन सम्भव है उचित से अधिक हो, सम्भव है उचित हो और सम्भव है उचितसे कम भी हो,

मेरी इस सम्बन्धमे कोई ठीक जानकारी नही है और अधिकाश टिप्पणीकार भी इस जानकारीमे मुझसे आगे नही हैं। फिर भी मैं यह कहता हूँ कि ऐसी माँग उनकी सकीर्णताओंको दूर करनेका पहला और अधिक कार-आमद उपाय नही है, यह दूसरा और कम-कार आमद उपाय हो सकता है। उन्हे पहले पहला और अधिक कार-आमद उपाय करना चाहिए।

व्यक्तिगत रूपमे मैं अपने बीस भारतीय राज-प्रतिनिधियोके वेतनो मेसे दस-दस रुपये घटवाकर अपनी आमदनीमे दो सौ रुपये बढानेकी अपेक्षा अपनी आमदनीमेसे बीस आने कम करके उनके वेतनोमे एक-एक आनेकी वृद्धि कर देना अधिक पसद करूँगा। पिछले साल मेरी आमदनीका औसत ५० रु० १५ आने[१] मासिक रहा है। इतनी आमदनी पर भी अपने स्नेह, कृतज्ञता और सौजन्यके नाते मैं अपने प्रतिनिधियोके लिए सवा रुपया मासिक सुविधापूर्वक खर्च कर सकता हूँ।

तो फिर जिसकी बात मैं कहना चाहता हूँ वह पहला, अधिक कारआमद उपाय क्या है ?

वह उपाय यह है कि आप अपने आपसे पूछे· 'क्या सचमुच मुझे अधिक वेतनकी आवश्यकता है ?' क्या सचमुच मुझे उन चीजोकी आवश्यकता है जिन्हे मै अपने अभिलषित बढे हुए वेतनसे खरीदना चाहता हूँ ?'

और इन प्रश्नोका जो उत्तर आपको अपने भीतरसे मिले उसे ही पत्र-पत्रिकाओ और सम्पादकीय टिप्पणियोमे लिखे। आपके वैसे लेख आपके और आपके मध्य-वर्गीय समाजके अधिक क्रियात्मक उपयोगके होगे।

आपके उत्तर जो कुछ होगे, उनका मुझे कुछ-कुछ अनुमान है।

आप कहेगे· "हमारी आमदनी हमारे सुख-पूर्वक खाने और सादगीके साथ पहननेके लिए तो काफी है, लेकिन हमे समाजके बीच रहना पडता है, रहन-सहनका एक 'स्टैण्डर्ड—हैसियतनामा (!)—निभाना पडता है। समाजके बीच अपने दूसरे मित्रो-परिचितोकी सजी हुई बैठकोमे जाकर हम

१ यह बात सन् ४८ की है। अब मेरी आय १५०) मासिक पर पहुँच गई है।—लेखक।

बैठते है । उन्हे अपने घर बुलानेके लिए हमारी बैठक भी उतनी ही सजी हुई—उतनी नही तो वीसकी जगह उन्नीस सही—होनी चाहिए । जैसा नाश्ता हम उनके घर करके आते है लगभग उसी तरहका उन्हे भी हमारे घर मिलना चाहिए ।"

इस प्रकार जब आप किसी मित्रके घर जाते है तो समाजमे जाते है, उसके घर नही । जब आप मित्रको अपने घर निमन्त्रित करते है तो समाजमे निमंत्रित करते है, अपने घर नही ! आप समाजमे रहते है, अपने घरमे नही !

यह समाज क्या है, आपने कभी सोचा है ?

मैने नही सोचा । मै इसे सोचूँगा और अपनी अगली लेखमाला—या अगली पुस्तक—मे शायद उसकी चर्चा कर सकूँगा । इस लेखमालामे मै केवल वे ही बाते कहना चाहता हूँ जिन्हे मै सोच चुका हूँ । मै नही जानता समाज क्या है, लेकिन मै अपना घर जानता हूँ, जहाँ मै रहता हूँ और कभी-कभी मित्रोको भी बुलाता हूँ । मै अपने कुछ मित्रोके घर भी जानता हूँ, जहाँ मै कभी-कभी जाता हूँ । अस्तु, मुझे प्रसन्नता होगी यदि आपने भी समाजके बारेमे कुछ न सोचा होगा और उसके प्रति अनजान होगे ।

यदि आप अपने मित्रोको निमन्त्रित कर एक खास हद तक सजे हुए कमरेमे न बिठा सके, एक खास हद तक कीमती और स्वादिष्ट नाश्ता उन्हे न करा सके और एक खास हद तक सुन्दर और कीमती कपडे पहन कर उनके पास न बैठ सके तो इससे समाजमे आपका पद गिरता है—लोगो पर आपका यथेष्ट प्रभाव नही पडता ।

लोगो पर प्रभाव ! हम इस प्रभावके प्रश्न पर आ पहुँचे है और इसी प्रश्नको मै प्रस्तुत लेखमे उठाना चाहता था ।

प्रभावकी कामना स्वाभाविक है । प्रभावशाली वननेके सम्वन्धमे मै कोई उपाय यहाँ लेखवद्ध नही कर सकता, लेकिन प्रभावके मार्ग पर वढनेका अपना व्यक्तिगत अनुभव आपको वता सकता हूँ । प्रभावकी कामना मुझे भी है, अपने मित्रो-परिचितोके वीच मेरा प्रभाव है और वह वढ भी रहा है ।

मैं समाजका एक प्रभावशाली व्यक्ति हूँ। समर्थनमे कुछ बाते यहाँ गिना भी सकता हूँ :—

१—मुरादाबादमे मेरे एक मित्र है। उनके पास कार है, कोठियाँ है। वह मेरा स्नेह-सम्मान करते है और समय मिले तो मेरे पास रहना उन्हे विशेष प्रिय है।

२—मेरे एक स्वल्प परिचित मित्र, जिनसे कानपुरके सभी बडे रईसोको उन दिनो वास्ता पडता था, अपने ड्राइंग-रूममे अनेक मिलनेवालोके सामने बैठकर अकेले नाश्ता करते थे, लेकिन मेरे पहुँच जानेपर वह मुझे नाश्तेमे अपने साथ अवश्य सम्मिलित करते थे।

३—मेरे एक मित्र जो भारतके एक तत्कालीन वाइसरायकी एक सभा मे उनसे हाथ मिलाकर बैठते थे, एक अन्य महत्त्वपूर्ण, विभिन्न ऊँचाइयोकी कुर्सियोवाली, सभामे व्यवस्थानुसार कभी मुझसे ऊँची और कभी मुझसे नीची कुर्सी पर बैठते है।

४—ससारके एक महान् व्यक्तिने—जिसकी प्रशसामे अनेक पाश्चात्य धुरधर विद्वानोने अपनी पुस्तकोमे अध्याय लिखे है और जिनके शव नस्कार के लिए स्पेशल ट्रेन द्वारा दक्षिणीसे उत्तरी भारत तक लाया गया था— मेरे विवाह-सस्कारमे पुरोहितका पद ग्रहण किया था।

५—मेरा 'प्रभावशालीपन' मेरे परिचितो तक ही सीमित नही है। प्रेम, सौन्दर्य, समझदारी और आध्यात्मिक प्रवृत्ति-सम्बन्धी मेरे विचारो और भावनाओका मेरे अपरिचितो पर भी, मुख्यतया मेरे लेखो द्वारा 'प्रभावशाली' प्रभाव पडता है। प्रमाणके लिए ऊँचे साहित्यकारोकी एक अन्तर्राष्ट्रिय सस्थाके भारतीय विभागके मुख-पत्रने मेरी एक प्रेम-सम्बन्धी कहानीसे प्रभावित होकर लिखा है कि उस कहानीका ससारकी सभी जीवित भाषाओमे अनुवाद होना चाहिए।

६—और यह लेखमाला भी, जिसे आप पढ रहे है मेरी उस प्रेम-कहानीसे कम ऊँची और प्रभावशाली नही है। इस लेखमालाके सम्बन्धमे वैसी कोई प्रशसा अभी तक किसी पत्र-पत्रिकाने नही की, इसलिए सम्भव है यह आपको

उतनी प्रशंसनीय न जान पड़े। लेकिन यदि आप इस लेखमालाकी समुचित प्रशंसा करना चाहते हैं तो पीटर होवर्ड नामके अँगरेजी लेखककी पुस्तक 'आइडियाज़ हैव लेग्ज' (अर्थात् 'विचारोंके पैर होते हैं') पढ़ जाइये। यह पुस्तक दो लाखके लगभग बिकी है और मेरी यह लेखमाला उससे कम नहीं है—भले ही हिन्दीमें होनेके कारण इसके पहले संस्करणकी दो हजार प्रतियाँ भी न बिक पायें। निस्सदेह, मेरी यह लेखमाला उस पुस्तकका अनुवाद नहीं है।

इस प्रकार इन छह—पहले पाँच दूसरोंके दिये हुए और छठा मेरा स्वयंका दिया हुआ—प्रमाण-कथनोंसे आप देख सकते हैं कि मैं समाजका एक यथेष्ट प्रभावशाली व्यक्ति हूँ।

लेकिन मेरा घर मेरे मित्रोंके घरसे सजावटमें बहुत भिन्न है। मैं अपने घर उन्हें जो नाश्ता देता हूँ वह उनके दिये हुए नाश्तोंसे बहुत भिन्न है। कुछ लोग कहते हैं कि मेरे घरकी सजावट और मेरे घरका नाश्ता उनके घरकी सजावट और नाश्तेसे घटिया दर्जेके हैं।

हो सकता है, मेरे घरकी ये चीजें घटिया दर्जेकी हों, लेकिन मेरे घरसे जानेके बाद वे स्वभावतया मेरे घरकी बात सोचते हैं और समाजके—अपने दूसरे मित्रोंके—घरसे जानेके बाद समाजकी बात सोचते हैं। मेरे घरका विचार उन्हें अपने घरका भी ध्यान दिलाता है, दूसरे, समाजके अनुरूप घरोंका विचार उन्हें समाजका ही ध्यान दिलाता है।

मेरे घरकी सजावट और नाश्तेको भले ही कुछ लोग घटिया कह लें, लेकिन मेरे प्रभावको वे घटिया नहीं कह सकते।

मेरा प्रभाव मेरे घरकी सजावट और नाश्तेपर निर्भर नहीं है।

क्या आपका प्रभाव उन्हीं पर निर्भर है?

हड्डियोंका आदमी या आदमीकी हड्डियाँ

पिछले लेखमे मैंने जो बाते कही है उनमे क्या आपको मेरे अविनय, आत्म-प्रशसा और अनुचित अहकारकी बू आती है ?

यदि आप ऐसा समझते है तो सम्भव है आपका यह विचार ठीक हो, क्योकि अविनय और आत्म-प्रशसाकी प्रवृत्ति दूसरे अनेक लोगोकी तरह मुझमे भी है, लेकिन उससे भी अधिक ठीक यह है कि आप बहुत अनुदार और अकृपालु है।

यदि आप मुझे वैसा समझते है तो इसका उपचार मेरे पास यही है कि मै अपने सम्बन्धमे उन बातोसे भी बडी कोई और बात कह दूँ और उसके बाद आपका ध्यान पिछले लेखमे कही बातोकी ओर आकृष्ट करूँ। तभी आप उन बातोमे अनुचित बूका अभाव देख सकेगे।

अपने अधिकारमे आई हुई सबसे बडी लकीर मै कागज़ पर कभी नही खीचूँगा—यह मेरे गुरुजनोकी दी हुई शिक्षा है; लेखन-कलाके गुरुजनो की भी, और जीवन-कलाके गुरुजनोकी भी। अपने सम्बन्धमे म तभी कोई बडी बात कहूँगा जब उससे भी बडी दूसरी बात मेरे पास मौजूद होगी। सबसे बडी बात मै कभी नही कहूँगा, क्योकि कह नही सकूँगा।

और यदि मेरी उन बातोमे अनुचित अहंकार और आत्म-प्रशसाकी बू सचमुच है ही तो क्या इसका यह मतलब है कि मेरी बातोमे आपके उपयोग की कोई बात नही है ? यह असम्भव है कि मेरी बातोमे बुराइयाँ ही बुराइयाँ हो और कोई अच्छाई न हो।

इस लेखको पढ़ते समय आप मेरे घर पर मेरे मेहमान है। जो कुछ मेरे घरमे है, वही मै आपके सामने रख रहा हूँ। अपने घरमे मैं वे चीजे आपके सामने नही रख सकता जो अचल, नगेन्द्र, बच्चन, जैनेन्द्र या पंतके घर आपको मिल सकती है। सम्भव है, उनकी प्रस्तुत की हुई चीजोमे

भावना, शिक्षा, सस्कृति, कला, मनोविश्लेपणका सौन्दर्य और साथ ही उनका व्यक्तिगत सौजन्य समाजके अधिक अनुरूप होता हो; वे समाजकी आवश्यकताओंको अधिक समझते हो और समाजके अनुकल चीज आपको दे सकते हो।

लेकिन म समाजकी नही, अपने घरकी चीज आपके सामने रख रहा हूँ। मे अपने घरकी एक रोटीके साथ आपके खानेके लिए एक छोटी-सी प्याली मे एक चीज आपके सामने रख रहा हूँ।

आप कहते हे—"यह वहुत खट्टा है, इसमे वूरा वहुत कम है। यह ताजा और कमसे कम खट्टा होना चाहिए। इसमे वरावरका वूरा होना चाहिए। यह वडे प्यालेमे और जरा ज्यादा-सा होना चाहिये।" आप इसे दही समझते है। समाजमे दूसरे मित्रोके घर आप रोटीके साथ ढेर-सा दही-वूरा खानेके आदी है। आप उस चीजको पसद करते है।

लेकिन यह दही-वूरा नही है। यह दहीकी एक विशेप प्रकारकी तेज, खट्टी चटनी है। इसे रोटीके साथ वहुत थोडा-थोडा लगाकर खाना उचित है। इसमे कुछ और भी मसाले पडे हुए है। थोडा-सा वूरा भी है। यह पेटको दुरुस्त करती है, प्यास लगाती है, थोडा खानेमे एक विशेप प्रकारका उत्तम स्वाद भी देती है।

आप लोगोको और लोग आपको हमेशा दही-वूरा खिलाते है, मैं दहीकी चटनी आपके सामने रख रहा हूँ। मै इतना दही नही खरीद सकता कि आपको दही-वूरा खिलाऊँ। मेरी दहीकी चटनीका आप पर जो प्रभाव पडेगा वह दही-वूरेके प्रभावसे वहुत घटिया हो सकता हे। लेकिन दहीकी चटनीका प्रभाव अलग चीज है और मेरा प्रभाव अलग चीज है। मुझे दूसरेकी चिन्ता है, पहलेकी नही।

मेरा प्रभाव मेरे दिये हुए नाश्ते पर निर्भर नही है, वह मेरे घरकी सजावट पर भी निर्भर नही है। क्या आपका प्रभाव आपके घरकी सजावट और आपके दिये हुए नाश्ते पर ही निर्भर है?

दूसरो पर अच्छेसे अच्छा और अधिकसे अधिक प्रभाव पड़नेकी कामना

आपको स्वाभाविक है, लेकिन आपका प्रभाव आपके घरकी सजावट और नाश्ते पर निर्भर नहीं है। ये दोनों अलग-अलग चीज़ें हैं। मैं यह भी कहने के लिए तैयार हूँ कि मेरा आप पर जो प्रभाव पड़ेगा वह मेरे लेखों पर निर्भर नहीं है। मेरे लेखोंका आप पर प्रभाव अलग चीज़ है, मेरा आप पर प्रभाव अलग चीज़ है।

इसे समझनेके लिए आपको पढ़नेसे कहीं अधिक स्वयं सोचना होगा। आप लोगों पर अपना प्रभाव चाहते हैं, यह अत्यन्त आवश्यक है। लेकिन लोगों पर अपना प्रभाव डालनेके लिए यह आवश्यक है कि आप अपने घरकी सजावट और नाश्तेके प्रभावोंमें ही उन्हें अधिक न उलझने दें। जिस क्षण आप घरकी सजावट और नाश्ते-द्वारा उन्हें प्रभावित न करनेकी बात सोचेंगे उसी क्षण आपका उनपर गहरा और आश्चर्य-जनक प्रभाव पड़ेगा, वे आश्चर्यचकित रह जायेंगे।

यह बात कुछ विशेष अस्पष्ट-सी है। यदि ऐसा है तो फिर स्पष्ट बातोंकी ओर ही आइये।

मान लीजिए कि आप अपने किसी मित्रका स्वागत अपने घरमें समाज की बनाई हुई मर्यादाओंकी चिन्ता न करके अपने सहज-सुलभ ढंग पर करते हैं। अपने वेतन या आयमें अभीष्ट वृद्धि न होनेके कारण आप अपने घरको उतना सजा हुआ और अपने नाश्तेको उतना अमीर नहीं बनाते हैं।

आपका मित्र—मान लीजिए कि आपका नाम श्री कनु भाई है—अपने मनमें कहेगा: 'यह कनुजी तो बेचारे गरीब हैं, ठीक हैसियतके नहीं हैं। हमारे अधिक उपयोगके नहीं हैं।'

अगली बार आप जब उन मित्रके घर जायेंगे और आपके पहुँचनेका समाचार पाकर मित्रकी पत्नी नाश्तेका प्रबन्ध करने चलेगी, तब वह आपके मित्र (अपने पति) से कहेगी: "यह लीजिए, एक रुपया। नौकरको भेज कर बाज़ारसे आठ आनेकी मिठाई और चार आनेका नमकीन मँगवा लीजिए। मैं चाय तैयार करती हूँ। अच्छा हुआ सुबह घी नहीं मँगवाया, नहीं तो इस समय यह रुपया भी घरमें न निकलता।"

आपके वह मित्र कुछ देर सोचकर पत्नीसे कहेंगे : "यह घीका रुपया घीके रुपयोंमें ही डाल दो। कनुके लिए बाजारसे मिठाई मँगानेकी जरूरत नहीं। यह कोई बड़ी हैसियतके आदमी नहीं हैं। घरमें जो साग-परामठे तैयार हो रहे हैं उन्हें ही खाकर यह खुश रहेंगे। मुझे भी इन्होंने अपने घर ऐसे ही नाश्ते पर बहलाया था।"

इस प्रकार धीरे-धीरे आपके मित्र-जन आपके सत्कारके लिए कोई भी कष्टप्रद, यानी दूसरे खर्चोंमें काट-छाँट कराने वाला टीम-टाम करना छोड़ देंगे। आपके मित्रोंकी पत्नियोंको जब जब मालूम होगा कि बैठक में आये हुए मित्र और कोई नहीं, कनुभाई ही हैं, तो वे आपके सत्कारके सम्बन्धमें बहुत निश्चिन्त हो जायेंगी। आपका स्वागत उन्हें अक्सर दूसरों के स्वागतकी अपेक्षा अधिक सुगम हो जायगा। यदि आप गुणों और योग्यताओंमें उनके पतियोंके दूसरे मित्रोंसे पिछड़े हुए नहीं हैं तो उन्हें आपका सत्कार करना कुछ विशेष प्रिय भी लगने लगेगा।

धीरे-धीरे—मैं मानव-स्वभावकी एक निश्चित प्रवृत्तिके आधार पर ही यह कह रहा हूँ—कुछ जानबूझ कर और कुछ अनजानमें, वे अपने पतियों के दूसरे मित्रोंके लिए भी कष्ट-प्रद टीम-टाम करना कम कर देंगी; और कष्ट-प्रद टीम-टामका रिवाज आपके मित्र-परिवारोंमें घट चलेगा। यह घटाव नाश्तों तक ही सीमित न रह कर घरकी सजावटों तक भी पहुँचेगा। घरकी सजावटों और नाश्तोंमें वह चीज बढ़ चलेगी जिसे कुछ विचारकोंने 'सादगी' का नाम दिया है।

और सादगीका अर्थ स्वाद और सुन्दरताका अभाव हर्गिज नहीं है। बल्कि सादगीमें प्रायः स्वाद भी अधिक रहता है और सुन्दरता भी।

इस प्रकार आपके सहज-साध्य नाश्ते और घरकी सजावटका प्रभाव आपके मित्रोंके घरोंके नाश्तों और सजावटों पर अवश्य पड़ेगा, सहज-साध्यता की ओर उनकी प्रवृत्ति बढ़ेगी।

इसके कुछ प्रमाण भी मिल चुके हैं। जबसे अशोककुमारने सिनेमा-

चित्रोमे सूट-बूटके वजाय कुर्ता-धोती पहन कर आना प्रारम्भ किया है तवसे क्या वह आपको कम आकर्षक जँचने लगा है ?

इस प्रश्नका अपना उत्तर यदि आपको ठीक न जान पडे तो अपनी और अपने मित्रो की पत्नियोसे आप यही प्रश्न पूछ सकते है ।

सजावट, स्वाद, सत्कार, सुरुचि, सुन्दरता—इन सवका सम्बन्ध सादगी एव सहज-साध्यतासे है ।

अपनी सजावटो और सत्कारोमे सहज-साध्यताको सुभीतेका स्थान देकर आप अपने समीपवर्ती समाजमे भी इस सहज-साध्यताको प्रचलित कर देगे । आप समाजको अपने अनुकूल वदल लेगे । समाजका रहन-सहन आपके रहन-सहनकी ओर झुक जायगा ।

ओर तव अपनी आमदनी वढानेकी चिन्ता और उससे उत्पन्न विवशता का सामना करनेके पहले आपको सोचना पडेगा कि वर्तमान आमदनीको किस प्रकार खर्च किया जाय ।

अपनी और अपने सवर्गीय मध्यवर्गकी आर्थिक सकीर्णताओके सम्वन्ध मे आपके ऐसे सोच-विचार और व्यवहारका आपके तत्सम्वन्धी लेखो और और सम्पादकीय टिप्पणियोकी अपेक्षा इस मध्यवर्गीय समाजके लिए कही अधिक उपयोग होगा ।

आप एक सुव्यवस्थित, सुखी, नये समाजका निर्माण करना चाहते है । इसके लिए पहले आपको सुव्यवस्थित, सुखी, नये व्यक्तियोका और व्यक्तियो से भी पहले व्यक्तिका (स्वयसे भिन्न और किसका ?) निर्माण करना होगा !

और यह समाज क्या है ? आप किसका नव-निर्माण करना चाहते है—समाजका या व्यक्तिका ? किसका अस्तित्व अधिक वास्तविक, अधिक सजीव है—समाजका या व्यक्तिका ?

यदि आप समाजका नया निर्माण करना चाहते है तो आपकी दृष्टिमे समाज एक निश्चित, सजीव अस्तित्व है, और उस दशामे अलग-अलग व्यक्तियोको उस अस्तित्वके अग, टुकडे—कह लीजिए उसकी अलग अलग हड्डियाँ—मान सकते है ।

यदि आप व्यक्तिका नया निर्माण करना चाहते हैं तो आपकी दृष्टिमे व्यक्ति ही एक पूरा, निश्चित, एव सजीव अस्तित्व है ।

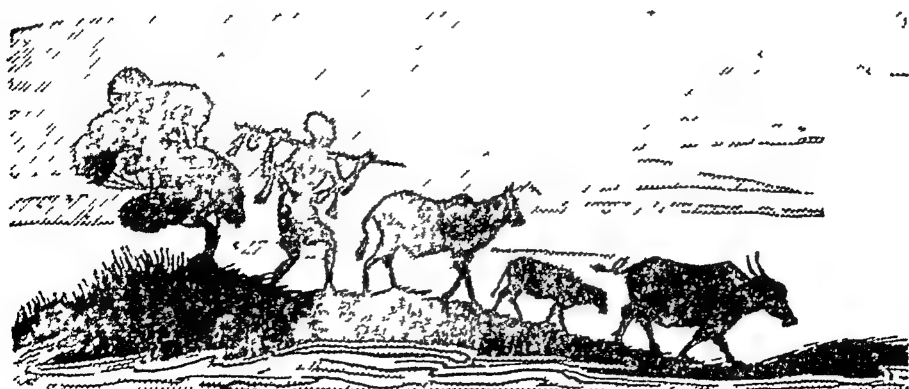
पहली दशामे समाज एक सजीव अस्तित्व है और अलग अलग व्यक्ति उसकी अलग अलग हड्डियाँ हैं और दूसरी दशामे आदमी ही एक सजीव पूरा व्यक्ति है और समाज ऐसे व्यक्तियोका सम्मेलन मात्र है ।

आप किसकी अधिक चिन्ता करना चाहते हैं—हड्डियोसे बने हुए व्यक्ति की (सभी आदमी हड्डियोसे बने हुए व्यक्ति होते हैं) या व्यक्ति (समाज ?) से बनी हुई हड्डियो की ?

आप अगर आदमीकी अवहेलना करके समाज की ही चिन्ता करना चाहते हैं, तो समाज ही आपके लिए पूरा व्यक्ति है और उस दशामे हरेक आदमी उसकी केवल एक निश्चेष्ट हड्डीके बराबर है ।

आप क्या चाहते हैं—हड्डियोका आदमी या आदमीकी हड्डियाँ ?

यदि आप जीते-जागते हड्डियोके आदमीकी चिन्ता करना चाहते हैं तो आपको उसे पहले समाजसे अलग रख कर—समाजसे ही नही, उसके घर की सजावट और उसके दिये हुए नाम्तेसे भी अलग रख कर—देखना होगा ।



यह प्रेम-समस्या !

आप समाजमें अपना प्रभाव चाहते हैं। आपका प्रभाव आपके घरकी सजावट और नाश्तेके मँहगेपन पर निर्भर नहीं है। नाश्ते और सजावटका प्रभाव अलग चीज़ है, आपका प्रभाव अलग चीज़ है।

मैं समाजका एक प्रभावशाली व्यक्ति हूँ। समाजका प्रत्येक व्यक्ति प्रभावशाली है, यदि वह घरकी सजावट और नाश्ते-द्वारा दूसरोंको प्रभावित करनेका विचार छोड़ दे।

कोई सुन्दरी यदि अपने सुन्दर वस्त्र-आभूषण पहने बिना अपनी नींद की सादी साड़ीमें ही, सोतेसे उठकर आपके पास चली आये तो क्या वह आपको सुन्दर न लगेगी ?

कवियों और रूप-चितेरोंका कहना है कि उस दशामें उसका सौन्दर्य और भी अधिक प्रभावशाली होगा।

बात ही संयोगवश आ पड़ी है तो मैं आपसे पूछूँगा कि यदि कोई सुन्दरी अपनी साड़ी, नींदकी साड़ीमें सोतेसे उठकर आपके पास आ जाय तो क्या आप उसे समीपसे देखना पसंद न करेंगे ?

और यदि इन पंक्तियोंकी पाठिका आप स्वयं ही एक सुन्दरी हैं तो क्या अपनी नींदकी साड़ीमें असज्जिता बैठी हुई आप पास आये हुए किसी सुन्दर पुरुषको समीप से देखना पसंद न करेंगी ?

यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर देना अधिकांश धर्म-शिक्षित सुन्दरों और सुन्दरियोंको स्वीकार नहीं होगा।

इनका उत्तर देना भले ही उन्हें स्वीकार न हो लेकिन उस प्रकार पास आये हुए को 'देखना पसंद करना' या 'न देखना पसंद करना' अवश्य स्वीकार होगा।

पहली दशामें, पास आये हुए सुन्दर व्यक्तिसे कुछ और लेनदेनका, और दूसरी दशामें उसके सम्पर्कको दूर करनेका प्रश्न उनके मनमें उठेगा।

अगर ऐसी दशामें इन दो मेंसे कोई प्रश्न आपके मनमें नहीं उठेगा तो यह और इससे आगेका लेख आपके लिए नहीं है।

विपरीत सेक्सके—यदि आप पुरुष हैं तो सुन्दर स्त्रीके और स्त्री हैं तो सुन्दर पुरुषके—साथ आपका कोई सम्पर्क हो या न हो, हो तो कैसे हो और न हो तो कैसे न हो, यह एक सार्वजनिक, सम्भवत आपकी भी समस्या है और इसे, सुविधाके लिए, प्रेमकी समस्याका नाम दे सकते हैं।

पिछले पाँचवें लेखमें मैंने वादा किया था कि इस प्रेमकी समस्या पर अपने व्यक्तिगत हलकी सी मैं चर्चा करूँगा और प्रसगवश उसका अवसर इस लेखमें आ गया है।

यदि प्रत्यक्ष या कल्पनामें आये हुए किसी सुन्दर व्यक्तिके साथ प्रेम-सम्पर्क स्थापित करनेकी कामना आपके मनमें उठती है और उसकी पूर्तिमें आपको तनिक भी असुविधा या कमी होती है तो यह एक प्रेम-सम्बन्धी समस्या आपके सामने है।

और यदि उस सुन्दर व्यक्तिके प्रेम-सम्पर्कसे बचनेकी कामना आपके मनमें उठती है और उसकी पूर्तिमें तनिक भी असुविधा या कमी होती है तो यह भी एक प्रेम-सम्बन्धी समस्या ही आपके सामने है।

पहले प्रकारकी कामना उस सुन्दर व्यक्तिको प्रत्यक्ष या कल्पनाकी ही आँखोंसे, एक बार और देख लेनेसे लेकर तत्क्षण और तत्स्थान सम्पूर्ण विवाह कर लेने तक की कामना हो सकती है, और दूसरे प्रकारकी कामना उसके सम्पूर्ण मानसिक और शारीरिक सम्पर्कसे लेकर उसकी स्मृति-मात्रसे भी बचनेकी कामना हो सकती है।

इन चारो कोनो के बीच कहीं भी आपकी कोई कामना है तो प्रेमकी समस्या आपकी भी समस्या है। सात वर्ष तकके लडको-लडकियों, अति-वृद्धों, कठिन पीडासे पीडितो, कुछ प्रकारके पागलो और शायद कुछ महा-त्माओंको छोडकर आमतौर पर प्रेमकी समस्या मानव-समाजकी एक

व्यापक समस्या है। शरीर-विज्ञान-शास्त्रियोंका कहना है कि लड़कों और लड़कियोंके कंकालों—हड्डियोंके ढाँचों—में विभिन्नता प्रायः सात वर्षकी उम्रके बाद प्रारम्भ होती है। इस विभिन्नताके प्रारम्भके साथ उनके परस्पर आकर्षणका भी कोई सम्बन्ध हो तो अस्वाभाविक नहीं।

यदि प्रेमकी समस्या आपकी समस्या नहीं है तो, मेरा अनुमान है, आप ऊपर गिनाये हुए लोगोंमेंसे पाँचवें प्रकारके ही होंगे।

थोड़ी देरके लिए यह मान कर कि आप वैसे महात्मा नहीं हैं मैं अपनी व्यक्तिगत प्रेम-समस्या और उसका हल आपके सामने रखूँगा।

चौदह वर्षकी आयुमें मेरी पहली प्रेम-समस्या मेरे सामने आई। बादमें जो भी प्रेम-सम्बन्धी समस्याएँ मेरे सामने आईं उन सबको मिलाकर वह पहली ही तीव्रतम, असह्यतम और साथ ही मधुरतम भी थी। उसने मुझे एक कविता लिखनेके लिए कवि बना दिया। मैंने वह कविता अपने मद्रास-प्रान्त-प्रवासी एक मित्रको लिख भेजी। खेद है, उस कविताकी प्रतिलिपि अब मेरे पास नहीं है।

प्रेम-सम्बन्धी समस्याओंको हल करना उस समय मुझे नहीं आता था, इसलिए वह समस्या पूरे चार वर्ष मेरे साथ रही। आगे चलकर समयने ही उसे, पता नहीं किस प्रकार, हल किया।

उसके बाद और भी अनेक छोटी-बड़ी प्रेम-समस्याएँ मेरे सामने आईं, और उनमें से अन्तिमने, जिसे तीव्रता, मधुरता और अनिवार्यताकी दृष्टिसे मैं सबसे पहलीके बाद दूसरा स्थान दे सकता हूँ, मुझे ऐसी समस्याओंका हल निकालनेके लिए विवश कर दिया। यह अन्तिम प्रेम-समस्या मेरी आयुके किस वर्षमें आई, यह बतानेमें मेरी कुछ ऐसी सामाजिक असुविधाएँ हैं जिनका अनुमान लगाना आपके लिए कठिन नहीं है।

पहली बार मैंने इस समस्याको समस्याके रूपमें लिया। इसे हल करनेके लिए सामाजिक क्रान्ति, इच्छा-शक्ति, संकल्प-बल, सन्यास अथवा वैराग्य-बल आदिके अनेक मार्ग मेरे सामने खुले दीखे। लेकिन जीवनकी जिस कार्य-शैलीको मैं संकल्प-पूर्वक कुछ दिन पहले अंगीकार कर चुका था-

उसके साथ इनमेंसे किसी मार्गका मेल नही बैठता था । अन्तमे कर्म-नियम, परलोक, पूर्वजन्म और परजन्मके अपनी समझ भर समझे हुए सिद्धान्तो पर मैंने इस समस्याको हल किया ।

इन सिद्धान्तोने इस दिशामे यथेष्ट काम किया और मेरी वह समस्या बहुत कुछ हल हो गई । कर्म और पुनर्जन्मके सिद्धान्तोका यदि आप सुलझा हुआ अध्ययन कर ले तो प्रेम, घृणा, सुख, दु खकी सभी समस्याओको एक हद तक सफलतापूर्वक हल कर सकते हैं ।

पिछले कुछ वर्षोसे मैं इन्ही सिद्धान्तोके आधार पर अपनी प्राय सभी बडी समस्याओको हल करता आया हूँ, लेकिन चूंकि इन सिद्धान्तोके सम्बन्धमे सस्ती और बहु-प्रचलित पुस्तके प्रकाशित नही होतीं और हिन्दीमें तो वैसी पुस्तकें लगभग अपरिचित-सी ही हैं, इसलिए आमलोगोक , और सम्भव है आपको भी, उन सिद्धान्तोको समझने और काममे लानेका अवसर कम ही मिल सकता है ।

मेरा इधरका नया अनुमान है कि कर्म और पुनर्जन्मके सिद्धान्त हरेककी सभी समस्याओको प्राय पूर्णतया हल नही करते——उनके हलमे कुछ कसर शेष रह जाती है । पिछले जन्ममे रही आई ऐसी ही कुछ कसरका परिणाम हो सकता है कि मेरा मन अब भी कभी-कभी एकान्त क्षणोमे ईरान देशके किसी अज्ञात-नाम गाँवकी ओर अपनी किसी पिछले जन्मकी प्रेयसीके लिए दौड जाता है । सम्भव है मेरे पिछले, या किसी पिछले जन्ममे ईरान देशमे ही मेरी कोई तीव्र प्रेम-समस्या उठी हो, सम्भव है, मेरी वह प्रेम-समस्या मेरे इधरके कुछ जन्मोको मिलाकर उन सबकी तीव्रतम, असह्यतम और मधुरतम प्रेम-समस्या हो, और सम्भव है कि मेरी वह प्रेयसी इन दिनो भी जन्म लेकर ईरानके ही किसी गाँवमे विद्यमान हो !

इधर कुछ ही दिनोसे, बल्कि इस लेखमालाके तीन लेख लिख चुकनेके बादमे मुझे समस्याओके हलका एक नया पेच सूझ पडा है । वह तुरन्त और भरपूर गहरा काम करने वाला है । उसकी सूझ मुझे उस बुद्धिमान मित्रसे मिली है जिसकी चर्चा मैंने तीसरे लेखमे की है । मेरा अनुमान होता है कि

समस्याओंके हलका यह पेच अत्यन्त सरल है और उसका कुछ अभ्यास हो जाने पर कर्म और पुनर्जन्मके कठिन, दुरूह-से सिद्धान्तो पर जानेकी भी आवश्यकता नही रह जाती ।

यह नया पेच अभी तक अच्छी तरह मेरे हाथ नही लगा है इसलिए उसका तथा कर्म और पुनर्जन्मके सिद्धान्तोंका भी आसरा छोड़कर मैं साधारण सुलभ दृष्टिकोणसे ही इस समस्याको देखना चाहता हूँ ।

प्रेम-समस्याएँ मेरे लिए समाप्त नही हो गई है । इस प्रकारकी छोटी-मोटी समस्याएँ तो सड़को, फुटपाथो और पगडडियो पर चलती हुई अनेक मेरे सामने प्रतिदिन आती रहती है । मै समझता हूँ कि वे प्राय. हरेकके सामने आती है, भले ही आमतौर पर लोग उन्हे जानबूझ कर समस्याका नाम न देते हो । ऐसी समस्याओंके सामने राह-चलते लोगोकी गर्दनो और आँखोको उन समस्याओकी ओर मुडते और उनकी नि शब्द विचारधाराओंको टूटते हुए मै प्रतिदिन देखता हूँ ।

स्पष्ट शब्दोंमें मै, और मेरी तरहसे दूसरे भी अधिकाश लोग प्रत्यक्ष या कल्पनामे आई हुई प्रत्येक 'प्रेम-सम्भव' मूर्तिको दुबारा देखना चाहते है उससे कुछ प्रेम-सम्बन्धी लेन-देन बढाना चाहते है या उसकी स्मृति और सम्पर्कसे बचना चाहते है ।

इस प्रेमके सम्बन्धमे मै पूरी स्वतत्रता चाहता हूँ । जिससे मेरा प्रेम हो उसे अपना प्रेम जतलानेकी मै स्वतत्रता चाहता हूँ और यदि उसे मेरा प्रेम स्वीकार हो तो उसके अनुसार स्वच्छन्द व्यवहारकी भी स्वतन्त्रता चाहता हूँ । एक बात अवश्य है—और इस बातमे भी प्राय. सभी भले लोग मेरे साथ है—कि मै किसी पर अपना प्रेम लादना नही चाहता । जिसे मेरा प्रेम स्वीकार न हो. जो खुले हृदयसे मुझसे प्रेम न कर सके उससे प्रेम-सम्पर्ककी मेरी भी इच्छा समाप्त हो जाती है । आजकलके सभी स्वस्थ प्रेम करने वाले प्रेमकी इस सीमाको स्वीकार करेगे; और जो नही करेगे उनकी समस्या मेरी समस्यासे भिन्न है और उसका कोई हल भी मैने नही सोचा है ।

लेकिन 'समाज'को मेरे वैसे प्रेम-व्यवहार बल्कि प्रारम्भिक प्रेम-विज्ञापन तकमे आपत्ति है । मेरे सामने यह एक बहुत बडी बाधा है । मै प्रेममे पूरी स्वतन्त्रता चाहता हूँ । समाज इसमे बाधा डालता है, 'धर्म' और 'आचार-मर्यादा' इसमे बाधा डालते है । मै समाजको, धर्मको, आचार-मर्यादाको बदल डालना चाहता हूँ । प्रेम-सम्बन्धी मेरी यह व्यापक, अनेक रूपोमे बिधी हुई समस्या है । अगले, इस लेखमालाके अन्तिम लेखमे इसी पर मुझे कुछ विचार करना है ।



मैं यहाँ हूँ

मै प्रेम चाहता हूँ, प्रेममे पूरी स्वतन्त्रता चाहता हूँ ।

जो भी सुन्दरी मेरे सामने आये, सबसे पहले मैं उसे स्वतन्त्रता-पूर्वक देखना चाहता हूँ ।

लेकिन उसी क्षण उस सुन्दर मुखके ऊपर एक घूँघट खिच जाता है, या वह दूसरी ओरको घूम जाता है, या कमसे कम, उसकी आँखे फिर जाती है, होठोकी मुसकान थम जाती है उसका मधुर कण्ठ-स्वर रुक जाता है ।

कभी-कभी ऐसा होता है कि उस परदेदारीके पहले एक चंचल, तिरछी चितवन और एक पैनी मुसकान मेरी ओर फूट निकलती है। स्वभावतया, इससे परिस्थिति सुधरनेके बदले कुछ और गम्भीर ही हो जाती है ।

पास खडे हुए एक युवक महोदय मुझे लक्ष्य कर बोल उठते है, "आप यह क्या करते है ? यह मेरी पत्नी है ।"

एक वृद्ध-से सज्जन योग देते है : "खबरदार ! यह मेरी पुत्री है, यह विवाहिता और पूर्ण पतिव्रता है ।"

एक तीसरे महाशय कहते है - "यह मेरी बहिन है। हमारा कुल ऊँचा और निष्कलंक है। आचारिक पवित्रताके सामने हम लोग अपने और दूसरोके प्राणोकी भी परवाह नही करते ।"

मै अपने घर पहुँचता हूँ। वह सुन्दर रूप रह रहकर मेरी आँखोके सामने झूम उठता है। मै उसीकी बात सोचता रहता हूँ।

मै उससे क्या चाहता हूँ ?

मै उसे स्वतन्त्रता पूर्वक एकबार, अनेकबार, जितनी बार मै चाहूँ, देखना चाहता हूँ। मै उसे मुसकराता हुआ, अपनी ओर चंचल मादक चितवनसे देखता हुआ देखना चाहता हूँ। इसके आगे मै शायद उससे कुछ बात करना चाहता हूँ, उसके बाद शायद उसके सुन्दर, सुकोमल मुखका स्पर्श करना चाहता हूँ—पहले अपनी उँगलियोसे और फिर शायद ....

और तब अचानक मुझे याद आती है कि वह अमुककी पत्नी है, अमुक की पुत्री है, अमुककी बहिन है।

अपनी व्यथा मै एक मित्रके सामने रखता हूँ। वह मेरी सहायता करनेका वचन देता है। दूसरे दिन पुस्तकोका एक बडल लाकर वह मेरे बिस्तर पर खोल देता है। उसमेसे जो पुस्तके निकलती है उनमेसे कुछके नाम है—'सदाचार सोपान', 'मनको वशमे करनेके उपाय', 'नारी विष है', 'ब्रह्मचर्य ही जीवन है', 'स्त्री मात्रको माँ समझो', 'कामाग्नि शामक स्तोत्र' 'वैराग्य चडिका', 'कामिनीसे कैसे बचे', 'ब्रह्मचारी हनुमान', 'भीष्म पितामह की बिन्दु-साधना'।

मै इन सभी पुस्तकोको पढ जाता हूँ। इनसे मुझे कोई सहायता नही मिलती। इनसे मेरी कठिनाई दूनी, दोहरी, दोरूपी हो जाती है। अभी तक मै उस रूपसिसे कुछ पाना ही चाहता था, अब उससे बचना भी चाहता हूँ। इस विरोधी भावनासे पहली कामनाका रूप और भी उग्र हो जाता है। मेरे विचार और भावनामे यह समस्या और अधिक जम कर टिकाऊ हो जाती है।

एक दूसरा मित्र आता है और वह मुझे एक दूसरा मार्ग बताता है। वह कहता है, "छोडो भी उसका ध्यान। उसका मिलना कठिन है। मै तुम्हे एक अन्य सुन्दरीका पता बताता हूँ। वह बेहद सुन्दर है, स्वतन्त्र है और मिलनसार है।"

मै उसके पास जाता हूँ। सचमुच वह सुन्दर, स्वतंत्र और मिलनसार है। उसके सत्कारसे मुझे बहुत सुख मिलता है। मेरी पिछली कसक प्रत्यक्षत. शान्त हो जाती है। लेकिन इससे मेरी दृष्टिमें पड़ने वाली दूसरी तरुणियोका सुन्दर होना समाप्त नही हो जाता। नित नये सुन्दर रूप मेरे सामने आते है, उनसे भी मै वही सब चाहता हूँ जो मैने पहली सुन्दरीसे चाहा था। मुझे पता चलता है, मेरी तृप्ति नही हुई है। एक, दो, दस-बीससे नही, मै हरेक सुन्दर रूपसे कुछ न कुछ चाहता हूँ। यह मेरी प्रेम-सम्बन्धी समस्या है।

यदि आप सामने या कल्पनामें आये हुए हरेक सुन्दर रूपसे 'कुछ-न-कुछ' नहीं चाहते तो आप मुझसे ऊपर हैं और मेरी यह समस्या आपकी समस्या नहीं है। यदि सामने या कल्पनामें आये हुए सुन्दर रूप आपको उनकी ओर दुबारा देखनेके लिए, आपकी चलती हुई विचारधाराको कुछ देरके लिए रोक कर उनकी बात सोचनेके लिए विवश नहीं करते तो आप प्रेम-सम्बन्धी समस्यासे परे निकल गये हैं। जो इस समस्यासे परे नहीं निकले उनके सामने ही मैं अपनी बात रख रहा हूँ।

सामाजिक और व्यक्तिगत रूपोंमे इस समस्याके साधारणतया ये दो हल प्रस्तुत किये गये हैं : सामाजिक रूपमें—(१) स्वच्छन्द प्रेमके समर्थक एक नये स्वतन्त्र समाजका निर्माण, अथवा (२) समाजके लिए नये नियमों और प्रतिबन्धोंकी व्यवस्था। व्यक्तिगत रूपमें—(१) पैसा, प्रभाव या अन्य साधनोंके बल पर स्वच्छन्द प्रेम-सम्पर्कोंकी स्थापना, अथवा (२) संयम और वैराग्यकी साधनाके लिए कठिन तपस्या आदि।

पहली श्रेणीके हलोंमे कुछ तृप्ति और सुख तो है पर उससे सामाजिक अव्यवस्था, विरोध, अशान्ति आदिकी, तथा व्यक्तिके शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक 'पतन'की भी आशंका है और ये उपाय वैसे समाज और वैसे व्यक्तिके निर्माणमें बहुत कुछ बाधक भी हैं।

दूसरी श्रेणीके हलोंमें समाज और व्यक्ति सम्भवत: आदर्श समाज और आदर्श व्यक्ति बन सकते हैं, लेकिन इनके समर्थकोंके हाथ कमज़ोर होते जा रहे हैं और नये रक्त वालोंके हृदयोंमे इनके प्रति आन्तरिक सहानुभूति नहीं है।

मैं नहीं कह सकता, इन दो श्रेणियोंमेंसे किस श्रेणीका हल अधिक सुलभ और मान्य होगा और उसका परिणाम कब तक निकलेगा।

पुस्तकें बताती हैं कि इस प्रेम—स्त्री-पुरुषके बीच सम्बन्ध—के विषयमें महात्मा बुद्धने और महात्मा ईसाने और महात्मा गांधीने कुछ ऊँचे हल सामने रखे हैं। लेकिन उन हलोंसे आज तक मनुष्योंकी यह समस्या

समाप्त नही हुई, वह त्यो की ज्यो—शायद पहलेसे भी उग्र रूपमे—उनके सामने है।

कठिनतम प्रतिवन्ध और पूर्णतम स्वच्छन्दता, इन दोनोके वीचके अनेक स्थलोके हल समाजमे प्रयुक्त किये गये है, लेकिन कठिनतम प्रतिवन्ध और पूर्णतम स्वच्छन्दताका सामूहिक प्रयोग अभी तक इतिहास मे नही किया गया। शायद इन्हीमेंसे कोई इस समस्याका वास्तविक हल हो। एक शताव्दीके लिए समाज ऐसी व्यवस्था वनाये कि जो पुरुप या स्त्री स्वपत्नी या स्वपतिसे भिन्न किसी दूसरे पर दृप्टि डाले उसे फॉसीकी सजा दी जाय, और इसका परिणाम देखकर दूसरी शताव्दीकी व्यवस्थामे खुले आम, विना किसी प्रकारकी द्विविधाके स्वच्छन्द सम्पर्ककी छूट दे दे तो शायद इन दोनोका वास्तविक प्रभाव जाना जा सके।

लेकिन ये दोनो छोरके उपाय असम्भव है। वीचके सभी उपाय अभी तक असफल रहे है।

मेरे एक मित्रने एक तीसरा उपाय सुझाया है—ज्ञानका, पवित्रता, आध्यात्मिकता और चरित्र-गठनकी बल-प्रयोग-रहित शिक्षाका, पवित्र सुखके आदर्शका। लेकिन मुझे यह उपाय दूसरे, प्रतिवन्धोवाले हलका एक अग ही जान पडता है। यह शारीरिक स्तरका न होकर कुछ मानसिक स्तरका प्रतिवन्ध है।

यह प्रेमकी समस्या एक ऐसी वेल है, जिसमे अपने आप फल लगते है। कुछ फलोको कडवा कहकर हम काट सकते है, कुछको मीठा कहकर खाने लगते है; लेकिन कडवे फल फिर-फिर उग आते है, मीठे फलोसे तृप्ति और स्वास्थ्यका यथेष्ट लाभ कभी नही हो पाता। आप इस वेलको ही काट देते है, यह फिर वढ आती है, इसकी जडका पता नही चलता। यह अपने आप वढती है। जन्मसे ही आप लडके-लडकियोको अलग करके पवित्रतम व्रह्मचर्याश्रमोमे रखिये, पन्द्रह वर्पकी आयुपर पहुँचते ही उनके हृदयोके भीतर—और लडकियोके हृदयोके ऊपर भी—कोई चीज उभर आती है और उन्हे दूसरे मार्ग पर खीच चलती है। आप जानते है,

वह चीज क्या है ? वह शिक्षा और अशिक्षा, धर्म और अधर्म दोनोंके विना किसी अज्ञात दिशासे उनके पास अपने समय पर आ जाती है। उस चीजको सम्भवत. आप नष्ट कर सकते है, क्योंकि वही ससारके 'पतनो'की जड है। लेकिन यदि आप उसे नष्ट कर देते है तो उन लडको-लडकियोंके जीवनको भी नष्ट कर देते है—उनमे गतिशील जीवनके कोई लक्षण शेप नही रह जाते।

मै प्रत्येक सुन्दर रूपके साथ प्रेम-सम्पर्क स्थापित करना चाहता हूँ। लेकिन समाज इसमे वाधा डालता है, मेरे सामने कुछ विपत्तियाँ उपस्थित करता है। तव मै इस प्रेम-सम्पर्कसे एकदम हटकर 'महात्मा' वन जाना चाहता हूँ। इसमे मुझे कठिन आन्तरिक सघर्पका सामना करना पडता है।

विवश होकर मुझे झूठ और आडम्वरका सहारा लेना पडता है। मै समाजमे मिलता हूँ। सभी सुन्दर रूपोकी ओर मेरी आकृप्ट-मुग्ध-सी दृप्टि घूमती है, लेकिन मै मानो उनके पतियो, पिताओ और भाइयोसे कह देता हूँ. "नही नही, मै उस रूपकी ओर आकृप्ट नही हूँ।" पतियो, पिताओ और भाइयोको मेरी दृप्टिका कुछ-कुछ अनुमान होता है, पर वे भी कह देते है "हॉ हॉ, आप उसकी ओर उस तरह आकृष्ट नही है, आइये, आप यहाँ वैठ सकते है।"

अपना यह झूठ और आडम्वर, यह पाखड मै द्वार-द्वार और सडक-सडक पर लिये हुए चलता हूँ। मै किसीसे सच वात नही कहता, नही कह सकता। कमसे कम इस एक झूठ और आडम्वरसे मेरी स्वतत्रता और ईमानदारीकी प्रवृत्तिका दम घुटता है। मै दूसरे मामलोमें भी सहज ही झूठ और आडम्वर का व्यवहार वनाये रखता हूँ। मै ईमानदारी मे उठ नही पाता। मै किसीके लिए सच्चा नही हो पाता।

आप वहुत अमीर ह और अस्तेय व्रतका—चोरी न करनेकी प्रतिज्ञा का—पालन करना चाहते है। लेकिन यदि आपको अपने पडोसीके घरसे प्रतिदिन केवल एक पैसा उसके मालिककी नजर वचाकर लेना पडता है

तो क्या आप अस्तेय व्रतका पालन कर सकते है? कभी नही! आप उतने ही ठीक चोर है जितना ससारमे कोई भी दूसरा है।

इस समस्याका एक हल मेरे सामने है। मैने उसे पूरा आजमाया नही है, लेकिन मेरा अनुमान है कि वह मेरा काम दे जायगा।

जब मुझे कोई सुन्दर रूप दीख पडता है तो मै स्वागत-सत्कार भरी एक दृष्टिसे अच्छी तरह देखकर उसे—और उसके पति, पिता और भाई भी पास हो तो उन्हे भी—बताना चाहता हूँ कि वह मेरी दृष्टिमे बहुत सुन्दर और आकर्षक है।

जहाँ मै सुविधापूर्वक ऐसा कर पाता हूँ, तुरत ही सौन्दर्य, सत्कार, सहृदयता और सचाईकी कुछ सुलझी हुई भावनाएँ मेरे मनमे उठ आती है और मेरी वैसी प्रेम-सम्बन्धी समस्या अदृश्य हो जाती है। उस रूपका कोई वैसा अपहरणकारी प्रभाव मेरे ऊपर नही रह जाता। वह सुन्दर रूप रूप से भिन्न और भी कुछ मेरे लिए हो जाता है। अपने सम्बन्धमे यह मेरी हरबारकी—यद्यपि अभी कुछ ही बारकी—परखी हुई बात है।

और जहाँ मै ऐसा नही कर पाता वहाँ उसपर और उसके पति, पिता, भाई आदि पर मुझे एक तरहका तरस आ जाता है और तरस आते ही मेरा ध्यान उस ओरसे हट जाता है। किसी पर तरस करना अन्याय और उसका निरादर है, लेकिन उस समस्याका दूसरा, मजबूरीका हल मुझे यही जान पडता है।

मै नही कह सकता, मेरे ये प्रयत्न आपके—बल्कि मेरे भी—लिए कहाँ तक उपयोगी होगे, सारे समाजके लिए तो इनकी उपयोगितामे मुझे काफी अधिक सदेह होना चाहिये। लेकिन आप चाहें तो सुभीतेकी जगह व्यक्तिगत रूपमें इनका परीक्षण करके देख सकते है।

समाजमे सुन्दर रूपोकी रचना कहाँसे हो जाती है? क्यो हो जाती है?

औसत दर्जेके साधारण सुन्दर शरीरोसे भी तो मनुष्योका काम चल सकता था। रूपमे—विपरीत सेक्सके रूपमे—आकर्षण क्यो है? क्या

इसका कोई विशेष अभिप्राय, इससे कोई विशेष सुख मनुष्य जातिके लिए अभीष्ट नहीं है ?

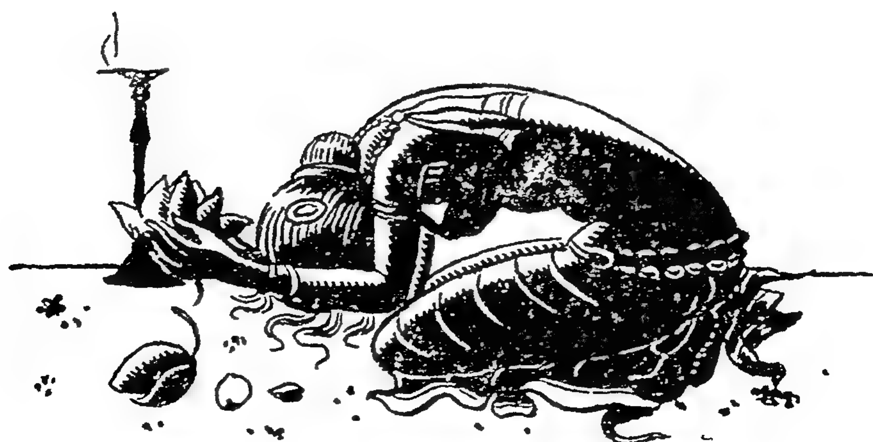
बुद्धिमत्ताके एक सिद्ध, समाजसे दूर बसने वाले आचार्यने कहा है :

"सेक्स (काम अथवा स्त्री-पुरुष-सम्बन्ध) की विस्तृत समस्याके नीचे दबी हुई सचाइयोंको जब संसार खोज निकालेगा और सचमुच उनकी कदर समझेगा तब उसे जो प्रकाश मिलेगा वह ऐसा होगा 'जैसा प्रकाश समुद्र या पृथ्वी पर अब तक कभी नहीं चमका' ..वह प्रकाश मनुष्यको सच्चे आत्मिक बोध तक ले जायगा ।"

पैसा और प्रभावकी अपनी समस्याओंका ठीक हल मेरे हाथ लग गया है और प्रेमकी समस्याओंका भी हल मिला दीखता है । मैं उनके प्रयोग कर रहा हूँ । मेरे ये प्रयोग क्या आपके भी किसी उपयोगमें आ सकेंगे ?

मैं यहाँ हूँ । आप कहाँ हैं, मेरे कितने समीप, मुझसे कितनी दूर, मैं नहीं जानता । आपकी समस्याओंको मैं नहीं जानता । आपके लिए कुछ भी सीख-सलाहकी बात मैंने नहीं कही है, मैं कभी नहीं कह सकता हूँ ।

फिर भी मेरे ये प्रयोग आपके भी किसी उपयोगमें आ सकेंगे तो मुझे कोई आश्चर्य न होगा ।



[द्वितीय खण्ड]

सबसे बड़ी माँग

किसी समय दो नदियोंके बीच बसा हुआ एक शहर था।

एक बार ऐसा हुआ कि दोनों नदियोंमें जोरोंकी बाढ आई और सारे शहरके डूबनेकी नौबत आ गई।

पहले तो लोगोंसे जहाँ तक बन पडा, उन्होंने बचने-बचानेका प्रयत्न किया; लेकिन जब उन जान-मालकी प्यासी नदियोंका पानी उनकी ऊँची कगारों पर चढ़ आया और उनकी छातियोंका उभार उन कगारोंके काबू से बाहर होने लगा तो लोगोंके हाथ-पैर फूलने लगे और उन सबने बीच शहरके बडे भागमें इकट्ठे होकर देवताओंसे प्रार्थना की।

देवता लोग वैसे तो बहुत रहमदिल होते हैं और प्रार्थना करने वालोंकी माँगें पूरी करनेमें उन्हें प्रसन्नता भी होती है, लेकिन कभी-कभी ऐसा होता है कि लोगोंकी प्रार्थनाएँ देवताओंके सोचे हुए इरादों और कामोंके विरुद्ध पड जाती हैं और तब वे पत्थरसा दिल करके उनकी प्रार्थनाओंको किसी-न-किसी बहाने टाल भी जाते हैं।

लोगोंने देवताओंसे प्रार्थना की, लेकिन देवताओंका मतलब इस बाढ से कुछ और ही था। इसलिए उन्होंने लोगोंको जबाब दिया——

"इस विपत्तिसे बचनेका उपाय यह है कि आप सब लोग अपने घरों को लौट जाएँ और आपमेंसे जितने जवान और नौजवान लोग हों वे सब जी खोलकर सच्चे दिलसे अपनी पत्नियोंसे, और जिनकी अभी पत्नियाँ न हों वे अपनी प्रेयसियोंसे प्यार करें। बाकीका प्रबन्ध हम कर लेंगे।"

उस मुसीबत और पास आई मौतके समयमें प्रेयसियों और पत्नियों को प्यार करना बहुत कठिन काम था और शहरके बडे-बूढों और चौंकी दृष्टिमें बहुत बुरा और स्वार्थपूर्ण भी था। असलियत तो यह थी कि जबसे लोगोंको अपनी जान खतरे में दीखने लगी थी तबसे जवानों और नौजवानों

ने अपनी पत्नियो और प्रेयसियोको प्यार करना छोड दिया था और शहरके जान-मालके बचाव की दौड़-धूपमे लग गये थे।

देवताओकी इस न पूरी होनेवाली चालाकीकी शर्त पर लोग बड़बडाते हुए सभासे उठ आये।

लेकिन उस शहरमे एक खबसूरत नौजवान था, जो अपनी प्रेयसीके प्रेममे बराबर शराबोर था और इस बाढकी मुसीबतसे उसके प्रेमव्यवहार मे कोई कमी या अन्तर नही आया था। उसकी इस मस्ती और शहरकी तरफसे लापरवाही पर लोगोने उसकी बहुत लानत-मलामत भी की थी; मगर वह अपनी प्रेयसीका पुजारी टस-से-मस न हुआ था।

और जब इन दोनो प्रेमियोंने देखा कि अब शहर के डूबने मे अधिक देर नही है तो उन्होने निश्चय किया कि वे दोनो अपने सदा-मीठे प्रेमकी कुछ बख्शीश अपने शहरके लोगोको भी देगे और प्रेमका कुछ चमत्कार उन्हे दिखायेगे।

वे दोनो रातो-रात शहरके उस कोने पर चुपचाप जा पहुँचे जहाँ दोनो नदियोके बीचका फासला सबसे अधिक था और जहाँसे शहरके किनारे-किनारे आगे बहकर दोनो नदियाँ सगम पर, यानी शहरके दूसरे छोरपर मिल जाती थी।

उस नौजवानकी प्रेयसीने नदीके किनारे काठके एक बडे तख्ते पर बैठकर एक बडी मशाल अपने हाथो मे ले ली और उस नौजवान ने रस्सियोसे अपनी प्रेयसीको और उस मशालको जकडकर उस तख्तेमे बाँध दिया और उसे नदीमे तैराकर एक रस्सीके सहारे नदी किनारेके एक पेडसे उस तख्ते को अटका दिया।

नौजवानने उस खूबसूरत लडकीको एक बार और प्यार किया और उस प्यारकी मस्तीमे डूबा हुआ शहरको लौट आया। उस समय उसका प्यार शायद सबसे ज्यादा उमड आया था।

बस्तीमे आकर उसने लोगोको खबर दी कि आज सवेरे अँधेरा रहतेही एक बडा जहाज बस्ती वालोको यहाँसे निकाल लेजानेके लिए आ रहा है।

शहरके सब लोग उस सुबह अँधेरा रहे ही, नदीके किनारे उस बडे जहाजके इन्तजारमें इकट्ठा हो गये।

उधर उस खूबसूरत लडकीने कुछ रात और अँधेरा रहे, निश्चित समय पर पेडसे तख्तेको अटकाये रहने वाली रस्सीको काट दिया और उस बडी मशालको जला दिया।

वह तख्ता तेजीसे पानीमें बह चला।

बीच शहरके नदी-किनारे पर इकट्ठे हुए लोगोंने, देखा बीच धारमें बहती हुई एक रोशनी जा रही है। उस नौजवानने आवाज लगाई: "वही है जहाज" और नदीमें कूद पडा।

जान बचानेके लालच और बेकलीमें शहरके सभी लोग उसके पीछे नदीमें कूद पडे, कि कुछ दूर तैरकर ही उस जहाज तक पहुँच जायें।

लेकिन लकडीका वह तख्ता, जिसे लोगोंने जहाज समझा था, पानीकी लहरोंमें उलट-पुलटकर डूबता-उतराता आगे बह रहा था और उसकी मशाल बुझ चुकी थी और वह खूबसूरत लड़की भी न जाने कबकी मर चुकी थी।

फिर भी, इस बेतहाशा तैराकीकी दौडमें मिलकर शहरके करीब पचास प्रतिशत लोग नदीके पार जा पहुँचे, क्योंकि वे सभी लोग आमतौरपर अच्छे तैराक थे।

शहरकी आधी आबादीकी जानका बचाव उन दो खूबसूरत नौजवानोंके आपसी प्रेमकी उन शहर वालोंके लिए बख्शीश थी, और सचमुच वह एक काफी बडा चमत्कार भी था।

इसके बिना उन लोगोंकी कभी इस तरह नदीको पार करनेकी हिम्मत न पडती। यह सब उस शहरमें प्रेमियोंके सिर्फ एक जोडेकी मौजूदगी की ही करामात थी!

इस कथाको मैं आजसे कई बरस पहले एक कहानीके रूपमें, जरा दूसरी तरहसे, विस्तारके साथ लिख चुका हूँ और वह मेरे किसी कहानी संग्रहमें मौजूद है।

और इन दिनो मुझे मालूम हुआ है कि हर मुसीबत और हर समस्याका हल प्यारमे ही है; और वही लोगोकी हर समय, हर मौकेकी सबसे बडी जरूरत है।

उस शहरके लोगोकी तरह, मुमकिन है आप भी अभी इस बातको असम्भव और बेकार और बकवास समझे, लेकिन अगर आप ऐसा समझेंगे तो इसकी वजह यही होगी कि आप अभी प्यार करनेमे कुछ डरते-झिझकते है।

लेकिन जिन दिनो कोई मुसीबत और उलझन न हो उन दिनो प्यार और प्रेम करना एक बहुत ही मीठे अनुभवकी चीज है, इसे करीब-करीब सभी लोग मान लेगे।

अपने-अपने 'जन्म' के अनुसार किसी सुन्दर स्त्री या सुन्दर पुरुषको प्यार करना ज़िन्दगीका एक बडा ही मीठा, रस-भरा अनुभव है, इसे सभी समझदार लोग थोड़ा-बहुत स्वीकार करेगे, वे चाहे पढे-लिखे हो चाहे अनपढ़ हो। जवान खूबसूरतीका आकर्षण एक ऐसा ही कुछ, न टाला जा सकने वाला 'थ्रिल' होता है!

आप भी मनसे मेरी इस बातका करीब-करीब समर्थन करेगे ही!

और मै समझता हूँ कि इस तरहका प्यार करना, अगर उसमे कोई खास उलझनकी बात न पड़ती हो, बुद्धिमानीका भी काम है।

लेकिन दुनियामे ऐसे बेवकूफोकी कमी नही है जो इस तरहका प्यार न करते है, न कर सकते है और न इसकी क़दर जानते है।

सुन्दर-से-सुन्दर युवती या सुन्दर-से-सुन्दर युवक आप उनके सामने खड़ा कर दीजिए, उनका मन उसकी तरफ नही जाएगा।

मोटे तौरपर पन्द्रह सालसे नीचेके सभी आदमी और सभी औरते इसी तरहके बेवकूफ होते है, और उनकी तादाद दुनियाकी आबादीकी एक चौथाई तो कही ही जा सकती है।

"लेकिन दुनियाकी उस एक चौथाई आबादीको आप बेवकूफ नही कह सकते। वे सिर्फ अभी बच्चे है। जवानीकी उम्र आनेपर ज़रूर उनके

दिलोंमे रूप और यौवनकी ओर आकृष्ट होने का रुझान पैदा होगा—वह तो एक कुदरती वात हे ।" मेरे एक मित्रकी राय है ।

"वे वेवकूफ नही, वहुत अच्छे और शुद्ध हृदयके हे कि वासनाके पाप और उसकी पीड़ाओ-परेशानिओसे वचे हुए है । अगर यह वासना लोगोके दिलोंमे पैदा ही न हो तो ससार कितना पवित्र वन जाय !" एक दूसरे अधेड अवस्थाके सज्जन कह रहे हैं ।

दुनियाकी उस एक चौथाई आवादीके वारेमे मै अपने उस, कुछ अनुचितसे, शव्दको वापस लेता हूँ । मै अपने पहले कहे मित्र की रायसे सहमत हूँ, यद्यपि दूसरे अधेड अवस्थाके सज्जनकी वात मुझे कुछ अधिक नही जँची है ।

और दुनियाकी वाकी तीन चौथाई आवादीके वारेमे भी मै अपने इस शव्दको वापस लेता हूँ—छिपाऊँ क्यो, मै उनके वारेमे भी इस शव्दका प्रयोग करने जा रहा था ।

दुनियाके वाकी तीन चौथाई आवादी—यानी १६ से ३० और ३१ से ४५ और ४६ से ६० या उससे कुछ ऊपर उम्रके लोग भी किसी-किसी मौकेपर जवानी और ख़ूवसूरतीकी तरफसे आँखे फेरकर प्यार करने और प्यार निभानेके अयोग्य हो जाते है । ऐसे मौकेकी एक मिसाल ऊपरकी वाढ़वाली चर्चामे दे ही चुका हूँ । और वीमारी, तगहाली, कमजोरी, निरादर, परेशानी या किसी चीजके लिए दौड-धूपकी उलझनोके समय ऐसे मौके लोगोके सामने वने ही रहते है और वे अपने ज्यादातर वक्तमे प्यार करने और निभानेके नाकाविल रहते है ।

लेकिन ठीक भरी जवानी और ठीक जुटी जोडीके आपसी प्यारमे ये वाधाएँ कुछ भी अडचन नही डाल पाती ।

और जिनके आपसी प्यारमे ये वाधाएँ अडचन डाल सकती है उनके वारेमे एक नई वात अभी-अभी मेरे मित्रने सुझाई है—उनकी अडचनका कारण यही है कि वे अभी सिर्फ वच्चे ही है ।

पन्द्रह सालके नीचेके ही नही, इससे ऊपरके भी, किसी भी उम्रके लोग भरी जवानीके दृष्टिकोणसे सिर्फ बच्चे ही हो सकते है, ऐसी मिस्टर वी. की राय है।

मिस्टर वी. का कहना है कि जो लोग अविचलित रूप मे, यानी जमकर किसीको प्यार नही कर सकते और जवानी और खूबसूरतीका आकर्षण जिनके लिए ढीला हो-हो जाता है, वे बचपनकी अर्थमेटिक (अकगणित) से चाहे कितनी ही उम्रके हो, जवानीकी अर्थमेटिकमे बच्चे ही है, और जिस तरह बचपनके बाद एक उम्र ऐसी जरूर आती है जिसमे वे अपने आप किसीको भरपूर प्यार करना सीख जाते है, उसी तरह उन सबको जिन्दगियो (?) मे एक वक्त जरूर ऐसा आएगा जब वे भरपूर और जमकर प्यार करना सीख जाएँगे।

बचपनकी अर्थमेटिक वह अर्थमेटिक है, जिससे कोई भी आठ सालसे ऊपरकी उम्रका बच्चा किसीकी उम्र बता सकता है। ऐसे बच्चे को आप किसीके भी पैदा होनेका साल बता दीजिए और वह मौजूदा सालकी सख्यामे से उस सालकी सख्याको घटाकर उसकी उम्र बता देगा। यह लोगोकी उम्र निकालनेके लिए बचपनकी अर्थमेटिक है।

और उम्र निकालनेके लिए जवानीकी अर्थमेटिक क्या चीज है, यह मै नही बता सकता, लेकिन मि वी. का कहना है कि वह उम्र दहाइयोमे नही बल्कि लाखो-करोडोकी सख्यामे निकलती है और उसका अन्दाज आदमीके स्वभाव और समझको देखकर भी किया जा सकता है।

उनका कहना है कि बचपन और बुढापा मनुष्यकी अस्थायी और गुजरती हुई अवस्थाएँ है और जवानी ही उसकी असली स्थायी अवस्था है।

यह बात कुछ अजीब-सी मालूम पडती है। है न ? फिर भी इसपर कुछ विचार किया जा सकता है। लेकिन इस जगह ऐसा करनेकी मेरी इच्छा नही है।

अगर मि वी. के कहनेके अनुसार जवानी ही मनुष्यकी असली अवस्था है (जिस तक लोग अभी स्थायी रूपमे नही पहुँच पाये है) तो निस्सदेह

प्रेम करना, सुन्दरता और जवानीकी ओर आकृष्ट होना मनुष्यका असली, स्थायी स्वभाव और उसकी स्थायी आवश्यकता साबित की जा सकती है ।

मिस्टर वी. की रायमे चूँकि मेरा विश्वास है, इसलिए मैं सोच रहा हूँ कि मेरी, आपकी और हर एककी स्थायी अवस्था अगर जवानी ही हो और हम सबकी सबसे बड़ी ज़रूरत 'प्यार करना' ही हो तो यह कोई अनहोनी बात नही है ।



बचपन कितना—बुढ़ापा कितना

इस लेखमे आपके साथ मैं पिछले लेखकी और मिस्टर वी. की रायों की छान-बीन करनेके लिए तैयार हूँ ।

उस लेखकी बाते साफ नही हे और मिस्टर वी. की राये भी कुछ अजीब-सी मालूम होती हैं ।

तो फिर आइए, उनकी ज़रा खोज-पड़ताल करे ।

मैं नही कह सकता कि अगर किसी युवक और युवतीमें प्रेम हो जाए तो उसके बारेमे आपकी क्या राय होगी । लेकिन इतना आप ज़रूर कहेंगे कि ऐसा दुनियामे अक्सर हो जाता है और जवानीकी उम्रमे लोगोका ऐसा ही कुछ रुझान रहता हैं ।

इस सम्बन्धमे मैंने अपने कुछ मित्रोकी रायें इकट्ठी की हैं । उनका व्योरा इस प्रकार है:—

१—अगर किसी युवक और युवतीमे प्रेम हो जाए तो यह बिलकुल स्वाभाविक बात है, लेकिन ऐसे मामलेमे यह सावधानी रखनी चाहिए कि उनमे कोई अनुचित व्यवहार न होने पाए ।

२—यह बात अनुचित है; और समाजमे ऐसा न होने पाए, इसका प्रबन्ध समाजको रखना चाहिए । ऐसा प्रेम केवल पति-पत्नीमे होना चाहिए और दूसरे स्त्री-पुरुषोमे किसी तरहका प्रेम होना खतरेसे खाली नही है ।

३—यह जवानीका चार दिनमे उतर जानेवाला नशा है । जब आदमी अपनी ज़िन्दगीकी असली कशमकशमे आता है और पेटकी आग बुझानेकी मुश्किले जब उसके सामने आती है तब ये सब बाते उसके सामने नही टिक सकती ।

४—यह तो भाईसाहब, वह रोग है कि जिसकी जानको लगा उसकी जानके साथ ही जाता है—ईश्वर इससे बचाये ।

५—ज़िन्दगीका असली मज़ा कही है तो इसीमे। इसके विना ज़िन्दगी जानवरकी ज़िन्दगी है ।

६—यह तो जनाव, अगर निभ जाए तो उस 'मंदिर' का पहला जीना है जिसे 'इश्के हक़ीक़ी' या भगवान्‌की 'भगती' कहते है ।

७—इसमे चार दिनकी मस्ती-बे-ख़ुदी तो है मगर आख़िरमे नतीजा कुछ नही ।

८—जिसके दिलमे यह चीज हो और साथ ही एक वहादुर सिपाहीकी तरह ज़िन्दगीके मैदाने-जगमे पिलकर काम करनेका कुछ आदर्श भी सामने हो, उसीकी जिन्दगीमे सोने और सुहागाका मेल समझिए ।

९—जहाँ यह वात हो, समझ लीजिए कुछ पुराने जन्मका उन दोनो का संस्कार है ।

१०—सबसे अच्छी चीज तो वह प्रेम है जो मनुष्य मात्रके लिए हो, लेकिन ऐसा प्रेम भी उसी अच्छे प्रेमका एक प्रारम्भिक पाठ है ।

११—अगर ये दोनो सच्चे गहरे प्रेमी निकले तो उनका प्रेम नि.स्वार्थ होगा और वे दोनों बहुत ऊँची गतिको प्राप्त होगे ।

१२—ऐसा प्रेम ही समाजका कोढ है; यही समाजको निकम्मा वनाता है ।

१३—स्वार्थका सबसे अधिक निखरा हुआ—घोर स्वार्थपूर्ण—रूप यही है ।

१४—अगर दोनोका सामाजिक दर्जा वरावर हो तो इसमे कोई हर्ज नही है ।

१५—सुना है, गुजरातियोमे यह वात आसानीसे हो सकती है । 'सोशल लाइफ' तो भाई इन्ही लोगोकी है ।

१६—वे दोनो ग़रीब हो तो बहुत बुरी वात है, अमीर हो तो बहुत अच्छी वात है ।

१७—मुझे पूरी वात लिखिए—यह किसका किस्सा है ?

१८—आपको ऐसी ही वाते सूझती रहती है। कोई कुछ करे, आपको मतलव ?

१९—प्रिय मित्र ! आपका प्रश्न मिला। इसके सम्बन्धमें मैं आपसे मिलनेके लिए उत्सुक हूँ। कल दोपहर अपने घरपर ही मिलियेगा।

२०—जव तक उन दोनोंके संवधमे पूरी परिस्थितिका मुझे पता न हो, मैं कोई राय नही दे सकता। यह अच्छी वात भी हो सकती है और वुरी भी; गंभीर भी हो सकती है और छिछोरेपनकी भी।

२१—उन्हे चाहिए कि जवतक मुमकिन हो, आपसमें जिन्दगीके मज़े लूटे और जव वीचमे कोई मुसीवत आती देखे, तव अलग होकर अपने-अपने घरोमे आराम करे।

२२—ऐसे मामलोमे भला इस तरह क्या राय दी जा सकती है ? ये वहुत नाजुक मामले हैं; फिर भी यह अनुमान किया जाता है कि अगर वे दोनो प्रेमी कुछ समझदार और अच्छे स्वभावके है और उनमे समाज के सामने आँखे उठाकर देखनेका दम भी है तो उनका प्रेम उनकी ज़िन्दादिली और जीवनमें प्रगतिका ही सूचक है।

ये मेरे तीन सौ मे वाईस मित्रोके उत्तर है ; वाकी २७८ मित्रोंके उत्तर इन्ही २२ मे से किसी-न-किसीसे मिलते जुलते हैं।

इस प्रश्नके सम्बन्धमे आपकी क्या राय होगी, यह जानना इन पक्तियोको लिखते समय मेरे लिए कठिन है ; फिर भी मेरा अनुमान है कि आपकी राय इन वाईसोंसे एकदम अलग न होगी।

और अगर आपकी राय एकदम निराली ही हो, तो इन पंक्तियो पर नज़र पडते ही एक पत्रमें उसे मेरे नाम लिख भेजने की कृपा करे।

मेरे इन राय देनेवाले मित्रोंकी रायें इतनी विपरीत दिशाओ तक फैली हुई है कि मैं इनसे कोई निश्चित नतीजा नही निकाल सकता हूँ। लेकिन एक वातमे मेरे ये सव मित्र सहमत हैं, कि ऐसा हो जाना एक स्वाभाविक

वात है—भले ही यह मनुष्यके मनमे भरी हुई किसी अच्छाईकी वजहसे हो या बुराईकी वजहसे।

तो फिर इस प्रश्नके इस पहलू पर विचार किया जा सकता है कि यह वात मनुष्यके लिए स्वाभाविक क्यो है ?

इस सम्वन्धमे मिस्टर वी. की राय है (और ऊपर की २२ रायो मे से २२ वी उन्ही की राय है)—मैं मिस्टर वी. की राय यहाँ इसलिए दे रहा हूँ कि मेरे किसी दूसरे मित्रने इस वारेमे इतनी खुली हुई, मनोरजक और विस्तार पूर्ण राय नही दी है—कि दो व्यक्तियोंके वीच इस तरहका प्रेम स्वाभाविक इसलिए है कि वे पिछले कई जन्मोमे इस तरह का, या इससे मिलता-जुलता प्रेम किसी-न-किसीके साथ कर चुके है और प्रेम करनेकी उनको आदत पड गई है। उनका आपा ससारमे वार-वार जन्म लेते-लेते अव अपनी युवावस्थामे प्रवेश करने योग्य हो आया है, ठीक उसी तरह जैसे कुछ वार—कह लीजिए, १५-१६ बार—वसत की ऋतु पार करने पर वच्चा युवावस्थामें पैर रखनेके करीव आ जाता है। वच्चेकी युवावस्था की भावनाओको जगानेके लिए किसी प्रयत्न या शिक्षाकी आवश्यकता नहीं होती ; समय या उम्र ही उसके लिए सवसे वडा प्रयत्न या सवसे वडा शिक्षक है। दूसरी वात यह है कि इस प्रेम करनेके अभ्यासमे ही ऐसे मनुष्यका अधिकाश समय वीतता है ; वचपन और वुढापा तो उसकी अस्थायी—गुज़रती हुई—अवस्थाएँ है।

क्या यह वात आपको कुछ विचित्र सी मालूम पड़ती है ?

लेकिन अगर उसके पहले पन्द्रह साल बचपनके माने जायँ और आखिरी पन्द्रह वुढापेके और बीचके करीव तीस जवानीके, तो इसमे आपको कोई खास आपत्ति न होगी।

और वुढापेके पन्द्रह वरसोमे भी जवानीका कुछ-न-कुछ रग आदमी पर रहा आता है (भले ही उसके शरीरकी कमज़ोरियाँ उसे ढके रक्खे) —यह बात आपको नामंजूर नही हो सकती।

इस तरह आदमीकी स्थायी अवस्था जवानीको ही कहा जा सकताहै।

और जवानीका यह धावा, सुना है, अब वचपनकी उम्र पर भी हो गया है।

वडे-वडे मनोवैज्ञानिकोकी खोज है कि वच्चेमे जन्मसे ही जवानीका जोश, एक खास शकलमे—जिसे वे 'सेक्स-इम्पल्स' कहते हैं—मौजूद होता है और वच्चेका वहुत कुछ खेल-कूद और मेल-जोल इस 'सेक्स-इम्पल्स,, से प्रेरित होकर ही होता है।

ऐसी दशामे तो यही कहना चाहिए कि आदमीकी उम्र जवानी की ही अमलदारीमे कटती है।

लेकिन मिस्टर वी. तो उसे और ही हिसावसे जवान वताते है।

उनका कहना है कि आदमी मरनेके वाद दूसरे लोकोमे जितने दिन रहता है, जवान ही रहता है, क्योकि मरनेके पहले वुढापा और कुछ नही, सिर्फ शरीरकी कमजोरी ही है और शरीरके छूट जानेपर यह कमज़ोरी भी ूट जाती है।

अगर यह वात ठीक है तो जवानी एकदम स्थायी सावित हो जाती है।

वचपन और वुढापा आदमीकी गुजरती हुई दशाएँ है और असलियत मे वह जवान है, और किसी-न-किसीको प्यार करना जवानीका स्वभाव है, उसका पेशा है—वल्कि उसके चलनेका रास्ता है।

उन दो नौजवान प्रेमियोके संवधमे आपकी पहले जो कुछ राय रही हो, क्या अव उसमे आप कुछ हेर-फेर करनेकी आवश्यकता समझते है?

अगर यह वात अभी आपको पसन्द न आ रही हो तो ज़रा सब्र करे, इस मामलेको मुझे अभी ज़रा और आगे वढ़ाकर देखना है कि कहाँ पर यह आपके लिए रुचिकर हो सकता है।

चौथा प्यार

"वचपन और वुढापा मनुष्यकी उड़ती हुई, अस्थायी अवस्थाएँ है और उसकी स्थायी, वास्तविक अवस्था जवानी ही है, और प्रेम करना ही उसका स्वभाव, पेशा, वल्कि एक मात्र काम है—यह एक ऐसा वाद या 'थ्योरी' है, जिसपर विश्वास करने वालोमे निकम्मोकी सख्या अधिक और कर्म-शील पुरुषोकी कम निकलेगी," यह मिस्टर रायजादाकी राय है ।

मेरा अनुमान है कि अधिकतर पढ़े-लिखे और दुनियामे कुछ ठोस काम करनेवाले लोगोकी भी यही राय होगी ।

और इस वादका विरोध करनेवाली जीती-जागती मिसालोकी भी दुनियामे कमी नही है ।

मिस्टर जोशी अगर इस प्रेमके पेशेमे न पडे होते तो आज दिन तक इस योग्य अवश्य हो गये होते कि अपनी पत्नीके लिए उसकी मन-पसद साड़ी और अपने लिए हर साल कम-से-कम एक ठडा सूट खरीद सकते । अगर उनका मन किसीके प्रेममे दिन-रातके अठारह घण्टे अनमना न रहता होता तो वे ज़रूर अपने दफ्तरमे मन लगा कर छह घण्टे काम कर सकते और उनकी तनख्वाह भी सत्तर रुपयेसे ज्यादा होती । मिस्टर एम. अगर मिस एल. के प्रेममें न पड़े होते तो वे घर-वार छोड़कर चिथड़े लपेटे वस्तियोकी धूल न छानते, न जेल जाते, न उनका दिमाग ही खराव होता । मिस्टर ए. ने अगर मिसेज़ एस. के साथ प्रेम-व्यापारमे साझा न किया होता तो आज वे दुनियाके एक सुपरिचित सिहासन पर वैठकर राज्य करते होते ।

आप जानते है, ये मिस्टर ए. और मिसेज़ एस. कौन है ? एक वार मेरे कमरेमे वैठे हुए पॉच मित्रोमे से चारने मेरे मुँहसे इन दोनो अधूरे नामो को सुनकर पूरे नाम वता दिये थे ।

तो फिर इस प्रेमके सिलसिलेमें ऐसे ही नतीजे आमतौर पर दुनिया के सामने हैं और इस चीजके वारेमें लोगोंकी राय ज्यादा अच्छी नहीं है।

लेकिन इन सब वातोंके होते हुए भी मिस्टर वी. की राय इस प्रेमके बहुत ही पक्षमें है और इस लेखके पहले वाक्यमें जिस 'वाद' की मैंने चर्चा की है उसमें उनका पूरा विश्वास है।

और सच तो यह है कि उस वादमें मेरा भी विश्वास हो चला है।

आप इससे कहीं यह न समझें कि मैं मिस्टर वी. का कोई पिछलगा या भक्त या कर्जदार हूँ। मिस्टर वी. के प्रति मित्रतापूर्ण सम्मानके साथ यहाँ यह वता देनेमें कोई हर्ज नहीं है कि मेरे वावाने किसी जमानेमें मिस्टर वी. के वावा और पिताजीकी जो परवरिश की थी, उसीकी वदौलत मिस्टर वी. की भी आजकी हैसियत वनी है।

इस प्रेमके विषयमें मिस्टर वी. के साथ मैंने लगातार छह महीने तक रोजाना छह-छह घण्टे तक वहस की है और इस वहसमें हम दोनोंने अक्सर छोटी और वड़ी, नई और पुरानी कितावोंके भी हवाले दिये हैं।

इस विषयमें मिस्टर वी. की जिन वातोंसे मैं सहमत हूँ, उनमें से कुछ ये हैं।

१—भोजन, कपड़ा, मकान और सोसायटी यानी दूसरे लोगोंका सङ्ग-साथ—ये चार मनुष्योंकी खास जरूरतोंमें मुख्य हैं।

२—आमतौर पर आदमी विना भोजनके जीवित नहीं रह सकता, विना कपड़ेके स्वस्थ और आरामसे नहीं रह सकता, विना मकानके सुरक्षित नहीं रह सकता और विना दूसरेके सङ्ग-साथके शिक्षित तथा मानसिक सुखोंको समझने और भोगनेके योग्य नहीं हो सकता।

३—इन चार जरूरतोंमें से पहली तीनके सहारे मनुष्य जीता है और उम्र पाता है, और चौथीके लिए जीता है और जीनेमें इस चौथीका सहारा भी उसे भरपूर लेना पड़ता है। इसलिए यह चौथी ही उसकी सवसे अधिक महत्त्वपूर्ण और न टाली जा सकनेवाली जरूरत है। (इस-अन्तिम वात पर मिस्टर वी. के साथ थोडी-सी वहस अभी वाकी है।)

४—यह सङ्ग-साथ वाली चौथी ज़रूरत मनुष्यकी इसलिए है कि उसमें प्रेम करनेका स्वभाव मौजूद है और इसके लिए उसे किसी-न-किसी 'दूसरे' की या थोड़े वहुत 'दूसरों' की जरूरत पड़ती है। विना 'दूसरे' के यह स्वभाव पनप नहीं सकता, वल्कि पैदा ही नहीं हो सकता।

५—विना इस चौथी चीज़के कोई मनुष्य डाक्टर, इजीनियर, वकील शिक्षक, किसान, व्यापारी, सैनिक, नेता या और कुछ नहीं वन सकता। (इस सम्वन्धमें हमलोगोंने एक जगली जातिके शिकारीका, जिसके वारेमें यह दावा किया गया था कि वह किसीसे प्रेम नहीं करता, निरीक्षण किया था और अन्तमें वडी कठिनाईसे यह पता लगा पाये थे कि उसका भी एक डाकूसे प्रेम था, जिससे उसने पहले-पहल हथियार चलाना सीखा था।)

६—अगर किसी मनुष्यका ध्यान पहली तीन चीज़ोंमें ही लगा हो तो उसे वह चौथी चीज़ विल्कुल नहीं मिलेगी और पहली तीन चीज़ोंकी प्राप्ति भी कुछ कठिनाई और कमीके साथ होगी। और अगर किसीका ध्यान पहली तीनों चीजोंपर न होकर चौथी चीज पर ही हो तो उसे चौथी चीज भरपूर मिलेगी और पहली तीन भी उसे कुछ तगी या आसानीके साथ ज़रूरत भरको मिलती रहेगी।

मैं समझता हूँ कि गुफाओंमें वैठकर योगाभ्यास करनेवाले महात्माओं और जङ्गलोंमें रहकर जानवरोंका कच्चा मास खानेवाले पशुमानवोंको छोड़कर शेष सव पर ऊपर लिखी छहों वातें लागू होती हैं।

मोटे तौरपर आपको भी इन वातोंमें एतराज नहीं होगा।

और यह भी आपको स्वीकार होगा—उसी मोटे तौर पर ही—कि दूसरोंके वीच रहनेके लिए मनुष्यमें प्रेमका कुछ माद्दा होना आवश्यक है।

लेकिन प्रेम वहुत तरहका होता है, जैसे मा-वेटेका प्रेम, पति-पत्नीका प्रेम, किसी युवा-युवती यानी प्रेमी-प्रेमिकाका प्रेम, मित्र-मित्रका प्रेम, नातेदार-नातेदारका प्रेम, साझीदार-साझीदारका प्रेम, पड़ोसी-पडोसीका प्रेम, गुरु-शिष्यका प्रेम, मालिक-नौकरका प्रेम, ठग और वुद्धूका प्रेम, भूखे-

और भंडारीका प्रेम, पापी और पुण्यात्माका प्रेम, कमजोर और वलवान का प्रेम, आदि-आदि।

इन प्रेमोमे से साफ तौर पर कुछ अच्छे और कुछ वुरे कहे जा सकते है; लेकिन अलग-अलग लोगोंकी राय हरएक तरहके प्रेमके वारेमें अलग-अलग हो सकती है।

मिस्टर लवानियाकी रायमे मित्र-मित्रका, मिस्टर वर्माकी राय मे मां-वेटेका, मिस्टर सरीनकी रायमे पति-पत्नीका, मिस्टर रोड़ाकी रायमे गुरु-शिष्यका, मिस्टर सिनहाकी रायमे प्रेमी-प्रेमिकाका, मिस्टर सारस्वतकी रायमे पापी और पुण्यात्माका और मिस्टर चावलाकी रायमे कमज़ोर-वलवान्का प्रेम सवसे ऊँचा है। मिस्टर भाटियाकी रायमे ठग और वुद्धूका, कामरेड शर्माकी रायमे भूखे और भडारीका या कमज़ोर और वलवानका, मिस्टर आर्यकी रायमे गुरु और शिष्यका, मिस्टर शुक्ला के पिताकी रायमे पति-पत्नीका तथा मिस्टर अवस्थी, तहसीलदार साहव और मिस माथुरकी रायमे अविवाहित युवा-युवतीका प्रेम सवसे वुरा है।

मिस्टर वी. ने एकवार किसी 'मूड' मे कहा था कि माँ-वेटेके प्रेमसे वढ़कर भयकर और पडोसी-पड़ोसीके प्रेममे वढ़कर कल्याणकारी और कोई प्रेम नही हो सकता।

ये सव राये कुछ भी हो, यह तय है कि प्रेम किसी-न-किसी समय हरेक के लिए वा नीय और आवश्यक है। और आम तौरपर अपने-अपने मौकोपर हर तरहका प्रेम उचित ही कहा जा सकता है।

जीवनके गहरे और अधिक आनन्द देनेवाले सुखोकी समझ-वूझ जगाने और फिर उनका रस लेनेके लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य समाजके वीच रहे, और समाजके वीच रहनेके लिए यह आवश्यक है कि वह दूसरों से अपनी समझ और उनके सुभीतेके अनुसार किसी-न-किसी तरहका प्रेम करे।

मनुष्यका यह प्रेम किसी एक व्यक्तिसे भी हो सकता है और अनेकसे भी और सभी मनुष्योंके लिए सहज स्वाभाविक भी; यह लाभ और वदले

की आशामे भी हो सकता है और विना किसी वैसी आशाके भी; यह किसीसे कुछ लेनेके लिए भी हो सकता है और किसीको कुछ देनेके लिए भी; यह डरते-सकुचाते और चोरी-छिपे रूपमे भी हो सकता है और सरल और निर्भीक रूपमे भी; यह मन-ही-मन सुलगनेवाले धुएँके रूपमे भी हो सकता है और तेज हवामे बुझ जानेवाले मशालके रूपमे भी और रात और वदलीमे अदृश्य हो-होकर भी सदा एकरस बनी रहनेवाली सूरजकी धूपके रूपमे भी।

इन तरह-तरहके प्रेमोमे कौन-सा अच्छा है और कौन-सा बुरा, इसका मै कोई ऐसा उत्तर नही दे सकता, जो विल्कुल ठीक ही हो और जिसे आप स्वीकार ही कर ले; लेकिन किस दर्जेके प्रेममे कितना मजा है, यह मै शायद आपको किसी हदतक ठीक-ठीक वता सकता हूँ।

प्रेमका पहला दर्जा वह है, जिसमे मनुष्यको किसी दूसरेकी कोई चीज पसन्द आ जाती है और वह उस चीजको अपने काममे लाना चाहता है—फिर चाहे उस दूसरेको इसमे सुख मिले चाहे दु ख मिले, इस वातकी उसे परवाह नही होती।

दूसरा दर्जा वह होता है जव मनुष्यको किसी दूसरेकी कोई चीज पसन्द आ जाती है, वह उसको अपने काम मे लाना भी चाहता है और यह भी चाहता हे कि ऐसा करनेमे उस दूसरेको कोई दुःख या हानि न हो, प्रत्युत सुख या लाभ ही हो तो अच्छा है। इस दर्जेमे वह यह भी चाहता है कि उसकी अपनी कोई चीज़, कुछ वदलेके तौरपर, उस दूसरेके काममे आ सके और वह विना अपनी हानि किये उसे वह चीज़ दे सके तो अच्छा है। वह लेन-देनका हिसाव वरावर रखना चाहता है।

प्रेमका तीसरा दर्जा वह होता हे जव मनुष्यको किसी दूसरेकी कोई चीज़ नही, वल्कि स्वय वह दूसरा ही पसन्द आ जाता है। वह इस दर्जेमे उस दूसरेसे कुछ लेना नही, वल्कि उसे अपनी अच्छी-से-अच्छी चीज देना ही चाहता है और हर तरहसे उसे सुखी रखना चाहता है। इस दर्जेमे चीजो और अपने-परायेपनसे उसका ध्यान हटकर अपने प्रियपर ही लग जाता है।

प्रेमका चौथा दर्जा वह होता है जब मनुष्यका वह तीसरे दर्जेवाला प्रेम किसी एक मन-पसन्द व्यक्तिके लिए ही न रहकर प्रत्येक परिचित, पडोसी और परदेशीके लिए भी हो जाता है।

इसके आगे प्रेमके पाँचवे, छठे और सातवे दर्जे भी होते हैं, लेकिन मुझे उनका कोई अनुभव नही है ।

क्या आप यह माननेको तैयार हैं कि मेरे हिसाबसे ऊपर लिखे प्रेमके चार दर्जोमें से प्रत्येकमे अपने ऊपरके दर्जेसे कम और नीचेके दर्जेसे ज्यादा आनन्द है ?

मिस्टर कुशवाहा अभी अठारह सालके नौजवान ही हैं; बहुत नटखट और कुछ लोगोके लिए खतरनाक भी हैं, लेकिन इन चारो दर्जेके प्रेमोका —पहले तीनका पूरा और चौथेका थोडा-थोडा—उन्हे अनुभव है। वे ऊपरकी बातमें मुझसे बिलकुल सहमत हैं ।

अपने मकानके पास वाले आमके बागके ठेकेदार मालीसे उनका प्रेम है। वह अक्सर उसके पास बैठते हैं और उससे मीठी-मीठी बाते करते हैं और चलते समय उससे कहते हैं—"लाना तो कल्लू दादा, उसी कल्मी पेडके दो-चार आम तो तोड़ लाना।" और कल्लू माली दो आम तोड़कर उन्हें ला देता है। मिस्टर कुशवाहा आमोको लेकर चल देते हैं। माली पीछे भुनभुनाने लगता है, "आये लाट साहब कहीके, जब देखो आम दे दो, आम दे दो। बापके पैसे नही खर्च किये जाते बच्चूसे।" और उधर मिस्टर कुशवाहा अपने दोस्तोंसे कहते हैं—"यह कलुआ माली बड़ा खूसट है। दो आम तोडते इसकी नानी मरती है। इसकी कलूटी शकलसे मुझे नफरत होती है। इसकी छोकरी भी चेचकके दागवाली कितनी बदशकल और कलूटी है कि देखनेको जी नही करता। पहलेवाले मालीकी लड़की कितनी सुन्दर और हँसमुख थी! फिर भी आदमी सीधा है और जिस पेड़के आम मैं माँगता हूँ, उस पेडके देनेमे बेईमानी नही करता।" उधर वह माली भी जानता है कि अगर किसी दिन कुँअर साहबको आम देनेसे इनकार किया तो दूसरे ही दिन उस पेडका एक भी कच्चा,पक्का आम डालमें नही बचेगा।

मालीके साथ मिस्टर कुशवाहाका यह प्रेम पहले दर्जेका प्रेम है और इसका मजा, विना किसी झञ्झट और शिकायतके, करीव-करीव हर दूसरे दिन दो मीठे आमोके रसके वरावर है।

मि० कुशवाहाको घरपर स्कूलके सवाल हल करनेमे वेहद नफरत है। उनमे उनका मन भी नही लगता और वे उनके लिए होते भी वहुत कठिन है। इसलिए उनका एक गरीव पडोसी अक्सर उनके घर आता है और उनकी 'रफ' कापी पर उन सवालोको निकाल जाता है, जिन्हे वह अपनी असली कापीमे नकल करके अगले दिन मास्टर साहवको दिखा देते है। उस पड़ोसीसे भी उनको प्रेम है और अक्सर उसे घरमे खरीद कर आये हुए आमोके खानेमे साझीदार वना लेते है। वे इस पडोसी लडकेकी अक्सर कुछ-न-कुछ खातिर करते रहना चाहते है। यह उनका दूसरे दर्जेका प्रेम है और इस प्रेममे उन्हे पहलेके मुकावले ज्यादा सुख मिलता है।

उनका तीसरे दर्जेका प्रेम अपने छोटे, तीन सालके चचेरे भाईसे है, जो अभी कुछ महीनेसे ही उनके घर आकर रहने लगा है। वह लड़का वहुत खूवसूरत और वातूनी है। मिस्टर कुशवाहाका सवसे गहरा प्रेम उस लड़के से है; और पड़ोसके मालीसे वे जो आम लाते है, अव इस बच्चेके लिए ही लाते है। यो तो आम उन्हे वहुत पसन्द है; लेकिन उसी हालत मे वह उन्हे खाना पसन्द करते है जव उस लडकेके खानेसे वे ज्यादा हो। खाने-खेलनेकी हर चीज, जो उन्हे पसन्द है, वह अगर इस वच्चेके पसन्दकी होती है तो वह पहले इसे ही देना चाहते है और उस चीजके स्वय उपभोगसे ज़्यादा सुख उन्हे इस वच्चेको खिलानेमे मिलता है। इस प्रेमके सुखके मुकावले पहलेके दोनो सुख उनके लिए फीके है।

और कभी-कभी मिस्टर कुशवाहाके मनमें ऐसी मौज उठती है कि अपने पसन्दकी खाने-खेलने या पहननेकी चीज किसी अपरिचित लडके या वड़े को उसके माँगनेपर और कभी-कभी विना माँगे ही, उसके लिए प्रिय या जरूरी समझकर यो ही उठाकर दे देते है। एक वार उन्होने अपने छोटे भाईके लिए तराशा हुआ एक आम सारे-का-सारा उठाकर पास खड़े हुए

एक अपरिचित लडकेको दे दिया था। ऐसा वे कभी-कभी क्यो कर बैठते हैं, यह खुद उनकी समझ मे नही आता; लेकिन उनका कहना है कि ऐसा करनेसे उन्हे जो मुख मिलता है, वह और किसी बातमे नहीं मिलता। वास्तवमे यह उनके चौथे दर्जेके प्रेमकी शुरुआत है।

मिस्टर वी. ने जव पहले-पहल मिस्टर कुशवाहाको देखा था, उस समय वे कल्लू मालीके बाग़मे आमके एक पेड़के नीचे खड़े हुए मालीसे कुछ मीठी-मीठी वाते कर रहे थे और उनका एक साथी पहलेसे ही उसी पेड़के ऊपर पत्तोमे छिपा हुआ चुपचाप आम तोड़-तोड़कर अपने थैलेमे भर रहा था। उस समय उनके पास से निकलते हुए, उन्हे देखकर मिस्टर वी. ने मुझसे कहा था—"इस लड़केको आपने देखा ? मेरा अनुमान है कि यह अपनी नौजवानी पर पहुँची हुई एक ऐसी आत्मा है, जो इस समय अपनी 'एक-जन्म सम्बन्धी' बचपनकी अस्थायी अवस्थामे है और जल्दी ही उसे पार करके अपनी स्वाभाविक युवावस्थामे पहुँचनेवाली है और उसमे ३०-४० साल रहनेके बाद फिर कुछ वर्षोंके लिए एक अस्थायी बुढापेको पारकर अपने स्वाभाविक युवावस्थाके कामोमे लगेगी। इसमे काफी ऊँचे दर्जे तकके प्रेमकी योग्यता है। यह आत्मा औसत आदमीकी आत्माके मुकावले अधिक जन्म लेकर अधिक समयसे प्रेम करना सीखती आई है और अव प्रेम करना इसका स्वभाव हो गया है। आप इससे परिचित होकर इसको अपना मित्र बना लीजिए—आपको इस लडकेमे बहुत-सी चीज़े देखने और सीखनेको मिलेगी।"

और अगले ही दिन मैंने मिस्टर कुशवाहासे जान-पहचान कर ली थी। उनमे मुझे अव सचमुच कुछ बड़ी चीज़े उगती दिखाई दे रही है।

मनुष्यका चौथे दर्जेका प्रेम उनमे जाग रहा है और मनुष्य-जीवनकी चौथी आवश्यकता—सङ्ग-साथ की चाह—उनके जीवनमे भरपूर मौजूद है।

इस चौथी आवश्यकता और चौथे प्यार, और बचपन, जवानी और बुढापेकी तीन अवस्थाओंके पार आत्माकी जवानीकी चौथी अवस्था वाली वात क्या अव आपको भी जँच रही है ?

●

ज्ञानकी लीक

पिछला लेख लिखे जानेके बाद पिछली रात मेरे कुछ मित्रोने उसपर वहुतसे ऐतराज किये है, और आगे कुछ लिखनेसे पहले उनकी चर्चा कर देना मै ज़रूरी समझता हूँ।

लेखकोका आम तौरपर यह कायदा है—और चूँकि मै एक दर्जन किताबे लिख चुका हूँ, इसलिए लेखकोमे मेरी गिनती अव होनी ही चाहिए—कि जो कुछ उन्हे कहना होता है लिखे चले जाते है, चाहे पढनेवाला उससे सहमत हो चाहे न हो। लेकिन मुझे अपने पाठकोंकी रायकी बहुत फिक्र रहती है, और मै उन्हे विना पूरी तरह साथ लिये आगे वढनेमे हिचकता हूँ। अपनी यह शैली मैने अपने सबसे अधिक प्रिय और आदरणीय मित्र मि. वी. से सीखी है, जो कि लेखकोके एक विशेष स्कूलमे पढ रहे है और अपनी पढाई पूरी करके ३-४ सालमे एक लेखकके रूपमें मेरे-आपके सामने आने वाले है। तो पिछले लेखपर मेरे मित्रोके खास ऐतराज़ ये है—

१—"पिछले लेखकी वातोको ठीक मान लिया जाय तो यह भी मानना पडेगा कि मनुष्य सचमुच वार-वार जन्म लेता है। यह बात धार्मिक और शास्त्रोकी जरूर है, लेकिन व्यावहारिक और 'साइंटिफ़िक' नही है। जो वात आदमी अपनी जानकारीके साथ व्यवहारमे नही ला सकता और जिसको तर्क और वुद्धिपर कसकर ठीक नही सावित कर सकता उसको लेकर नतीजे निकालना शिक्षित आदमियोंका काम नही है। जवानी मनुष्यकी स्थायी अवस्था है और प्रेम करना उसका स्थायी स्वभाव है, इससे अधिक ठीक तो यही जान पडता है कि बुढ़ापा उसकी स्थायी अवस्था है, जो कुदरती तौरपर उस पर ज़रूर आती है, और वचपन और जवानीकी तरह उसे छोड़कर चल नही देती, जवतक कि मौत ही आकर उसके जीवनको समाप्त न कर दे। इसीतरह प्रेम करना मनुष्यका स्थायी

स्वभाव नही, वल्कि मनमे उठनेवाले दूसरे भले और वुरे विकारोंकी तरह यह भी एक विकार है, जोकि कभी अच्छा होता है कभी वुरा।" यह मि. सक्सेनाका ऐतराज़ है।

२—"अगर शास्त्रो और धर्मोंको ही ठीक मान लिया जाय तो आपकी यह थ्योरी गलत ठहरती है। अगर आपकी आत्मा वार-वार जन्मोमें प्रेम करनेकी मश्क करते-करते मौजूदा जन्ममे प्रेम करने का स्वभाव लेकर पैदा होती है तो इसके मानी यह हुए कि वह पिछले कई जन्मोसे वरावर इन्सानका जन्म पाती चली आ रही है; क्योकि वगैर इन्सानका जन्म पाये कुत्ते, साँप, मेढक और छछूदरकी योनियोमे तो वह इस प्रेमका मश्क लगातार नही करती रह सकती। आप तो धर्म-शास्त्र पढे मालूम होते हैं, आपको मालूम होगा कि एक दफा इन्सानका जन्म पानेके वाद जीव चौरासी लाख जानवरोंकी योनियोमे जाता है तव कही फिर इन्सान वनता है। अलवत्ता अगर किसीने वहुत अच्छे कर्म किये तो वह ज़रूर अगले जन्ममे भी इन्सान वन सकता है लेकिन ऐसे पुण्यात्मा कितने हो सकते हं और वे भी कवतक ऐसे कर्म करते रह सकते हैं कि चूकने न पाये? यह तो किसी खास-खास आत्मासे भले ही सँभल सकता हो, आमतौर पर तो विल्कुल गैरमुमकिन है।"

यह मि. त्रिपाठीका ऐतराज है।

३—"आपकी इस थ्योरीको अगर लोग मान ले तो वस सभी प्रेम करने मे ही लग जाये और समाजके सव प्रवन्ध और ससारके सव काम ठप हो जाये। यह तो भाईसाहव, अगर आप माफ करे तो भोग, अकर्मण्यता और विनाशका पाठ पढानेवाला नुस्खा जान पड़ता है।" यह मि. मदीनका ऐतराज है। और इन ऐतराजोको सुनकर मै सोच रहा हूँ कि मिस्टर वी. की शैली मुझे मिस्टर वी. के लिए ही छोड़नी पडेगी; मैं उनकी नकल नही कर सकूँगा। इन तीनो ऐतराज़ोके जवावमें मुझे सिर्फ यही कहना है कि—

१—जो लोग पढने, सोचने और समझनेके लिए तैयार हो उनके लिए मरकर दोबारा जन्म लेनेका सिद्धान्त तर्क और साइन्सके ढगपर ही सच्चा साबित हो सकता है।

२—मैंने ऐसा कोई धर्म-शास्त्र नही पढा जिसमे लिखा हो कि मनुष्यको पाप कर्म करनेपर अगला जन्म मनुष्यका नही मिलता और उसे चौरासी लाख जानवरोकी योनियोमे जाना पडता है। मै सहज बुद्धिसे, और अपने पढ़े हुए थोड़ेसे ग्रथोके आधारपर, यही समझता हूँ कि मनुष्यको अगली बार मनुष्यका ही जन्म मिलता है, चाहे उसके कर्म कैसे भी हो।

३—मै नही समझता कि प्रेमके छोटे-बडे पाठ सीखे बिना कोई मनुष्य भोग, अकर्मण्यता और विनाशसे किसी तरह बच सकता है।

और अब मुझे अपनी बात आगे बढ़ानी चाहिए।

जब मनुष्य चीजोंसे आगे बढकर, लोगोसे प्रेम करने लगता है और उसका प्रेम दर्जे-बदर्जे—पिछले लेखमे बताये हुए पहलेसे चौथे दर्जेतक—आगे बढने लगता है तब उसे बहुत-सी नई बाते मालूम होती हैं।

उसे मालूम होता है कि खाने-पहनने और सैर-तफरीहकी चीजोके अलावा भी बहुत-सी बाते ऐसी है जिनमे उन चीजोके मुकाबले ज्यादा सुख है।

किसी एक, या कुछ-एक, या बहुत-एकसे जरा गहरा प्रेम होने पर उसे अपने और अपने प्रियके दिलोकी कुछ ऐसी भेदकी बाते मालूम होती हैं जिनमे नई-नई ताकते, करामाते और मजे होते है। सक्षेपमे मुझे कहना चाहिए कि उसे जो बाते मालूम होती हैं उन्हे ज्ञान कहते हैं।

तो फिर प्रेम करनेसे ज्ञान पैदा होता है।

मि० मुकर्जीकी राय है कि ज्ञान अच्छी चीज है, लेकिन कुछ लोग हदसे ज्यादा उसके पीछे पड जाते हैं—यह बुरा है।

एक हद तक ससारमे सुख और उन्नतिके लिए ज्ञान जरूर प्राप्त करना चाहिए; लेकिन बेकारके खयाली ज्ञानके पीछे पड़कर ज़्यादा समय

और बल नही बरबाद करना चाहिए, ज्ञानसे ज्यादा जरूरी चीज शक्ति है---पूरी कोशिश उसके लिए करनी चाहिए।

लेकिन कुछ लोगोका विचार है कि ज्ञानमे शक्ति सहज ही भरी रहती है। और बिना ज्ञानकी शक्ति बेकार है और अक्सर खतरनाक भी है। इस सिलसिलेमे मेरे परदादाके ज़मानेकी एक घटना सुन लीजिये।

एक बापने अपने दोनो जवान बेटोको उनकी माँके साथ कही परदेश रवाना किया। दोनो बेटोके कन्धोपर बापने डण्डोके सहारे एक-एक पोटली लटका दी और उनसे कह दिया कि उनमे सफ़रका जरूरी सामान है।

चलते-चलते रास्तेमे दोनों भाइयोको प्यास लगी। पासमे कोई नदी या तालाब उन्हे नही दिखलाई पडा। इसलिए माँको एक पेड़के साये मे बिठाकर दोनो अपनी-अपनी पोटली कन्धोपर लटकाये, पानीकी खोज मे निकल पडे।

कुछ देर इधर-उधर भटकने पर उन्हे एक बडा भारी गड्ढा दिखाई दिया---उसके भीतर झाँकने पर उसमे उन्हे पानी भी दिखाई दिया।

वास्तवमे वह जगलमे एक पुराना कुआँ था और इन भाइयोने अब तक कभी कुआँ नही देखा था---क्योकि इनके देशमे नदियो और तालावों से ही पानी लिया जाता था।

बडे भाईने, जो खूब हट्टाकट्टा और हिम्मती था अपने छोटे भाईसे, जो दुबला-पतला और हौसलेका कुछ कच्चा था, कहा---

"इस गहरी तलैयामे पानी है, मै पहले कूदकर पानी पी आता हूँ, बाद मे तुम पी आना," और वह कुएँमे कूद गया। छोटे भाईको एकदम ध्यान आया कि शायद उसकी माँ भी प्यासी होगी, इसलिए उसको भी यहाँ लाकर पानी पिला देना चाहिए। वास्तवमे इस लडकेको अपनी माँसे प्रेम था और बडा लडका एकदम बुद्धू और रूखा था। छोटा लड़का बडेको कुएँके भीतर ही छोडकर माँको लेने चल दिया और जब उसे कुएँके पास ले आया, तो खुद भी कुएँमे कूदने लगा।

कूदनेके पहले (चूकि उसे अपनी माँसे प्रेम था) उसे ध्यान आया कि कोई बरतन भी साथ लेता जाय जिससे माँके लिए पानी भर लाये। वर्तन ढूँढ़ने के लिए उसने अपनी पोटली खोली तो उसमे उसे एक लोटा मिला, जिसमे एक लम्वी डोरी भी बँधी हुई थी। वह लोटा खाली करनेके लिए डोर खोलने लगा।

उसकी माँ वड़ी बुद्धिमती थी। उसे एक और बढिया तरकीब सूझ गई और उसने बेटेको सलाह दी कि लोटेको डोरमे बाँधे हुए कुएँमे लटकाये और जव उसमे पानी भर जाय तब उसे उस डोरके सहारे ही ऊपर खीच ले।

यह कहनेकी ज़रूरत नही कि उन लड़कोंका पिता उनकी मातासे भी अधिक वुद्धिमान था, उसे देश-विदेशका अनुभव भी बहुत था और वह जानता था कि किसी-किसी देशमे इस तरहसे कुँओंसे पानी भरा जाता है, और इसीलिए उसने अपने दोनो बेटोकी पोटलियोमे एक-एक लोटा डोर भी रख दिया था।

अगर बाप कुछ और ज्यादा बुद्धिमान होता तो उसे अपने लड़कोकी वुद्धियोका पता होता और वह उन्हे परदेश भेजनेसे पहले उन पोटलियो की हर चीजोंका उपयोग खोलकर समझा देता।

माँ-बेटोने लोटोसे भर-भर कर पेट भर पानी पिया। वड़ा बेटा उस कुएँसे शायद कभी बाहर नही निकला, क्योंकि वह उन्हे उनके सफरकी किसी भी मञ्जिलमे नही मिला। उसकी खोजके सिलसिले मे यह किस्सा और भी बहुत आगे तक चला, लेकिन उससे हमे इस जगह कोई मतलव नही है।

इन दोनो भाइयोमे बड़ेके पास शक्ति अधिक थी और छोटेके पास प्रेम; और प्रेमकी बदौलत उसे ज्ञान भी अधिक मिल गया था।

प्रेमकी वदौलत ज्ञान होता है या ज्ञानकी बदौलत प्रेम; इस मामले मे मेरे मनमे कोई पक्षपात नही है। मै समझता हूँ कि इनमेसे किसी भी एक चीजकी वदौलत दूसरी चीज पैदा हो सकती है।

तो फिर ज्ञान क्या है?

संसारकी रचना कैसे हुई, परब्रह्म तत्त्वका स्वरूप क्या है, पतञ्जलि के २५ वे सूत्रकी व्याख्या क्या है, विष्णु और शिवमें कौन बड़ा है, इन्द्र-लोककी अप्सराओमे सबसे सुन्दर कौन है, मोहनप्रयोग तथा अणिमा सिद्धि की क्रियाएँ क्या हैं, चान्द्रायण व्रतका महत्त्व क्या है—इन और ऐसी ही बातोकी जानकारीको ज्ञान कहते हैं। अवश्य इन बातोकी जानकारीको ज्ञान कहते होगे, लेकिन ये बाते फ़िलहाल मेरे लिए कुछ कठिन हैं, इस-लिए मैंने ज्ञानकी एक बहुत ही सरल परिभाषा—परिभाषा नही बल्कि एक काम-चलाऊ व्याख्या—बना रक्खी है; और मेरा अनुमान है कि वह व्याख्या आपको भी पसन्द आयेगी। मैं नीचे लिखी छह बातोकी छानबीन और जानकारीको ज्ञान समझता हूँ।

१—मुझे किस चीज़की ज़रूरत है ?

२—उन चीज़ोंके पानेका उपाय क्या है ?

३—उन चीज़ोको पानेके लिए क्या-क्या साधन हैं ?

४—उन चीज़ोको पानेपर उनका उपयोग मेरे लिए कितना और कितने समय तक के लिए होगा ?

५—उन चीज़ोंके महत्त्व यानी उपयोगिता और आवश्यकताकी दृष्टि से किसका कौन-सा दर्जा यानी नम्बर है, और उन चीज़ोका आपसमे विरोध या सहयोगका कैसा नाता है ?

६—इस सब जानकारीके साथ-साथ इन चीज़ोको पानेके रास्ते पर तेजी और सावधानीके साथ बढ़ने और बढावका हिसाब-किताब रखने की तरकीब क्या है ?

अगर इन छहों बातोपर सोच-विचार करके आप अपने लिए कुछ नतीजे निकाल लें तो मुझे आपको ज्ञानी कहनेमें कोई हिचक न होगी।

ऊपरवाली दुर्घटनामें जब उन दोनों भाइयोको प्यास लगी तो उन्हें यह ज्ञान तो हो गया कि उन्हे प्यास लगी है और उसका उपाय किसी जलाशयको खोजकर उससे प्यास बुझा लेना है, लेकिन कुँएके पास पहुँच-कर उन्हें यह ज्ञान नही आया कि उनका समझा हुआ उपाय अभी अधूरा ही

है और कुएँमे कूदना जानके लिए खतरनाक भी हो सकता है। उन्हे यह भी ध्यान नही हुआ कि वे कुएँसे पानी पीनेके साधनोको देखे कि उनके पास कोई और साधन मौजूद है या नही।

और वे दोनो तो खैर जगली आदमी थे, मुझे अब कुछ ऐसा लगने लगा है कि हमारे-आपके पास भी बहुत-से ऐसे साधन भरे-पड़े है, जिनके सहारे आपकी सभी जरूरते बहुत आसानी और खूबसूरतीके साथ पूरी हो सकती है और जिनकी तरफ आप बिल्कुल ध्यान नही देते। इन साधनो की गिनती और उपयोगिता तथा शक्ति और सुकरताकी आप कभी कल्पना तक नही कर सकते, जैसे कि बड़ा भाई अपनी पोटलीमे छिपे हुए लोटे-डोर की कल्पना नही कर सका था। अपने पास मौजूद साधनोकी जानकारी महान् आश्चर्यजनक और बडा आनन्ददायक ज्ञान है। आजमाइशके तौर पर आप चाहे तो पहले ऊपरके छह ज्ञानोमे से इसी तीसरेकी छानबीन शुरू कर सकते है।

इन ज्ञानोके क्रममे इस तरहका उलटफेर किया जा सकता है—मैं खुद इसी तीसरेसे ही शुरू कर रहा हूँ और मेरे जैसे बहुतेरोके लिए इससे ही शुरू करना शायद अधिक आसान और रुचिकर होगा।

बिना इस बातकी खोज किये हुए कि मुझे किस-किस चीजकी जरूरत है मैंने पहले ही यह पता लगाना शुरू किया है कि मेरे पास कौन-कौनसे ऐसे साधन है जिनसे चीजे प्राप्त की जा सकती है, और इस खोजमे मुझे जो-जो चीजे मिली है वे बहुत शुरूआती होते हुए भी बड़ी आश्चर्यजनक और विचित्र शक्तियोसे भरी हुई है।

अगले लेखमे मैं उनकी चर्चा करूँगा।

मंज़िल दूर है !

"इस लेखको अपने पिछले वादेके अनुसार शुरू करनेके पहले मेरी दो बातोंके जवाब दे दीजिये," मिसेज़ चतुर्वेदी कह रही है। वह आजका लेख प्रारम्भ करनेसे पहले ही यहाँ आ गई हैं और उन्होंने पिछले लेख पढ़े हैं।

"पहली बात यह है कि आपने इस लेखमालाके दूसरे खंडको 'प्रेम' के विषयसे प्रारम्भ किया था और अब आप एकदम ज्ञानके विषय पर आ कूदे हैं। इस विषय-परिवर्तनका कोई ठीक सिलसिला नहीं मिलता। और दूसरी बात यह कि अब आप जिस ढंगसे ज्ञानका उपदेश देने जा रहे हैं उससे जान पड़ता है कि आप ज्ञानके साथ-साथ किसी धर्म या सम्प्रदाय विशेषका भी प्रोपेगैंडा करना चाहते हैं, कि लोग आपके बताये हुए रास्ते पर चलें। अपनी लेखनीको क्या आप ज्ञान और धर्म जैसे विषयोंके लिए उपयुक्त समझते हैं?"

मिसेज़ चतुर्वेदीको मैं तबसे जानता हूँ, जब वह एक स्थानीय कालेजमें मिस अग्रवाल थीं। प्रेमसे ज्ञानके विषय पर जाते हुए, बहुत सम्भव है, मेरे सिलसिलेमें कुछ ढीलापन या बेतुकापन आ गया हो; लेकिन वैसा करनेमें मेरा मतलब यही रहा है कि प्रेमसे ज्ञान ज़रूर पैदा होता है। और जिस दर्जेका वह प्रेम होता है उसीसे मिलते-जुलते दर्जेका ज्ञान भी प्रेमीको हो जाता है। मुझे शायद उस सिलसिलेमें यह और दिखाना चाहिए था कि जब प्रेम बहुत आवेगपूर्ण, भावुक और उन्मादपूर्ण-सा होता है तो उससे जो ज्ञान पैदा होता है वह मामूली तौर पर देखनेमें बेवकूफी, बदहवासी और बेख़बरी-सा मालूम पड़ता हुआ भी एक दूसरे ही तरह का ज्ञान होता है, जिसमें कभी-कभी टेलीपैथी या दूसरेके विचारोंको जान लेना, क्लेयरवाएंस, यानी अदृश्य या दूसरे देशकी चीज़को देख लेना, क्लेयर आडिएंस यानी न सुनाई देने वाली या दूर देशकी बातको सुन लेना, जैसी तरह-तरहकी

वातोका ज्ञान और उनका उपयोग उस प्रेम करनेवालेको आ जाता है। अपने प्रियकी रूमाल, अँगूठी या और कोई चीज हाथमे आ जाने पर वह उसके सम्बन्धमे बहुत-सी नई वाते देखने-सुनने लग जाता है। यह सब एक तरह का ज्ञान ही है। कोई प्रेमके किसी एक दर्जे पर पहुँच कर ज्ञान की तरफ ध्यान देता और उसे समझ-बूझ कर काममे लाता है और कोई किसी दूसरे पर पहुँच कर, लेकिन ज्ञान उसे दर्जेके अनुसार होता अवश्य रहता है।

मेरा अनुमान है कि शायद मिसेज चतुर्वेदी यह भी चाहती है कि मै ज्ञान पर न लिखकर प्रेम पर ही लिखे जाऊँ। अगर ऐसा है तो मै उनके आक्षेपमें अपने लिए एक मिठास भरी प्रशसा भी देखता हूँ और उसके लिए आज एक वार और, उनका अनुग्रहीत हूँ।

और मिसेज चतुर्वेदीके दूसरे आक्षेपने तो मेरे एक बहुत वडे सोये हुए अरमानको जगाकर मेरी एक बहुत बडी, लेकिन इस जीवन भरके लिए बुझी हुई, आशामे एक क्षणके लिए बिजली-सी कौंधा दी है।

मेरे जीवनका एक बहुत बडा अरमान यह था, और यह शायद काफी बचपनकी उम्रसे ही था कि मै इतना वडा ज्ञानी और महात्मा बनूँ कि सारी दुनिया मुझसे ज्ञान और उपदेश सुननेके लिए दौडी चली आये, और जिन रोती-बिलखती औरतोको मै हाथ उठाकर आशीर्वाद दे दूँ उनके मरे हुए बच्चे मुसकराते हुए जी उठे और दूसरे सब लोगोके सब दुख-दर्द फौरन दूर हो जाये। मै बुद्ध और महात्मा ईसा होना चाहता था।

मै यह भी चाहता था कि स्वामी रामकृष्ण परमहसको मानने वाला जैसा एक समाज या सप्रदाय उनके जीवनकालके बाद बन गया है, वैसा ही मुझे मानने वाला मेरे जीते जी ही बन जाये तो बहुत अच्छा हो।

यह तब की बात है जब मिस अग्रवाल (यानी मिसेज चतुर्वेदी) मुझे नही जानती थी और मैने तीसरे दर्जेका भी प्रेम करना साफ-साफ नही सीखा था।

लेकिन मि. वी. से मेरा परिचय होनेके कुछ दिन वाद यह अरमान और इसके पूरे होनेकी आशा, दोनों मेरे जीवन भरके लिए विदा हो गये। इस विदाईकी घटना इस प्रकार हुई।

एक दिन जव मैं और मि. वी. जमुना किनारे टहल रहे थे हमने देखा कि कुछ लडके एक गधेको चारो तरफसे घेर कर पत्थर मार रहे थे और वह किसी तरफसे भी भाग नही पाता था। एक और आदमी पास ही खडा हुआ यह तमाशा देख-देख कर हँस रहा था।

मैं उन लडकोको मना करनेको ही था कि मि. वी. ने मुझे रोक दिया और उस आदमीके पास पहुँच कर उससे कहा, "तुम खड़े-खड़े हँस रहे हो और इन लडकोको रोकते नही; वेचारे गधेको घायल किये डालते है।" आदमीने वैसे ही हँसते हुए जवाव दिया—"वावूजी, ये वच्चे है, खेल रहे है। गधा सुसरा मर थोड़े ही जावेगा!"

"तुम देखते नही उसकी टाँगसे खून निकल रहा है, ऐसा कस कर पत्थर उसकी टाँगमे लगा है। मरेगा तो वह टाँग तोड़नेसे भी नही। तो क्या तुम उसकी टाँग तुडवा दोगे?"

इस पर उस आदमीको कुछ गधे पर तरस और कुछ मि. वी. की वात का लिहाज़ आ गया और उसने लड़कोको डपटकर उस गधेको वचा दिया।

वहाँसे चलते हुए मि वी. ने मुझसे कहा, "इस आदमीकी समझ अभी इतनी है कि गधेको ईट-पत्थर मारनेमे कोई वुराई नही है, लेकिन उसे ज्यादा चोट आ जाय तो इसमे वुराई है और वैसी हालतमे उसे वचा लेना चाहिए।"

कुछ ही दिन वाद कुछ दूरी परसे हम दोनोने देखा, उसी जगह वे लड़के एक और गधेको उसी तरह छेड़ रहे थे कि वही उस दिन वाला आदमी आगे वढा और दो-चार गालियाँ देकर उसने उन लड़कोको भगा दिया। लडके इधर-उधर भाग ही रहे थे कि एक तरफसे एक और आदमी दौड़ा हुआ आया और उसने एक लड़केको, जो उसके हाथ लगा, पकड़कर वुरी तरह पीटना शुरू किया। इसपर हमारे परिचित आदमीने आगे वढ़कर

उस लडकेको छुड़ा दिया; और इन दोनों आदमियोंमे गाली-गलौज के वाद हाथापाईकी नौवत आने ही वाली थी कि हम दोनो पास पहुँच गये और मि वी. के वीच-वचावसे वह मामला शान्त हो गया ।

अवकी वार यह पूर्व परिचित आदमी हमारे साथ वडी खातिरसे पेग आया । उसने कहा—

'वावूजी, दया सव जीवो पर करनी चाहिए, जान सव जीवोके साथ होती है । आपकी उस दिन वाली वात मेरी समझमे आ गई थी, इसीलिए आज मै खुद ही लडकोंको वरजने गया था । लडके वातसे न मानते तो मै उनके दो-चार थप्पड भी लगा देता, लेकिन उस धोवीको तो देखो, वेचारे लडकेको ऐसा मारने लगा कि छोडे ही नही—मै न वचाता तो उसकी पसली ही तोड़ देता । सजा देनी चाहिये, लेकिन माफिक भर की, जितना कसूर उतनी मार । ठीक कहता हूँ वावूजी ?"

"तुम विल्कुल ठीक कहते हो गुरु," मि वी ने जवाव दिया ।

"दया सव जीवो पर करनी चाहिये, चाहे गधा हो चाहे घोड़ा, और सजा भी माफिक भरसे ज्यादा किसीको न देनी चाहिये ।"

"तुम्हारी बात पक्के ज्ञानकी है ।" मि वी. ने कहा ।

"आप लोग तो वावूजी पढे-लिखे और ज्ञानवान् पुरुष हो, और हम तो निपट गँवार है, लेकिन घोडा क्या सुअर भी हो तो उसकी भी रक्षा करनी चाहिए ।" उस आदमीने कहा ।

"और गधेको मारने पर उस धोवीको उस लडकेको इतना नही मारना चाहिये था—दो-चार चाँटे-घूसे मार लेता, वही काफी था ।" मि वी. ने कहा ।

"गधेको मारने पर कहते हो वावूजी, इतनी मार तो उस धोवीको तव भी उस लड़केको नही लगानी चाहिए थी जो उन लड़कोने उस धोवी के गधेको नही, वल्कि उसके पूतको भी मारा होता । लड़कोने दस-पॉच भुरभुरी मिट्टीके ढेले ही तो मारे थे ।"

और वहाँसे चलने पर मि. वी. ने मुझसे कहा—"इस आदमीका ज्ञान चार दिनमे बहुत ज्यादा बढ गया है। वह जानता है कि किसी पालतू जानवर या मनुष्यको बिना अपराध पीडा न पहुँचानी चाहिए, और अगर कोई उन्हे कष्ट दे तो उससे उसे बचाना चाहिए, और कष्ट देने वालेको सजा देनी चाहिए। और इससे भी बढकर वह मानता है कि सजा जितना कसूर हो उससे अधिक नही देनी चाहिए।

"यह आखिरी काफी बडी समझकी बात है और आम तौर पर लोग गैरोके मामलेमे इस समझको बरत भी सकते है। लेकिन दुनियाका बहुत बडा तमाशा यह है—और इसकी वजह यह है कि आम दुनिया वालोका अभी दर्जा ही ऐसा है कि माने हुए सिद्धान्तो और ठीक अन्दाजी हुई कार्रवाइयोको अपना मामला पडने पर नही बरत सकते। किसी बातको ठीक समझना एक दर्जेका सबक है, और उसको अपने काममे लाना बिल्कुल दूसरे दर्जेका। और इन दोनो दर्जोके बीचमे बहुत लम्बा अन्तर है।"

मि वी. की बात उस समय मुझे कुछ अधिक मौकेकी नही जान पड़ी, लेकिन दस-बारह दिन बाद जब हमने उस आदमीको तीसरे दृश्यमे देखा तो मेरी दिलचस्पी मि. वी की उपर्युक्त बातोमे बेहद बढ़ गई।

उस दिनके दस-बारह दिन बाद ऐसा हुआ कि उन्ही लडकोने उस आदमीके बैलको उसी तरह, वही किनारे घेरकर दस-बीस ढेले उस पर बरसा दिये, और सयोगवश वह आदमी उस समय उधरसे निकला तो उसे लड़को पर इतना क्रोध आया कि उसने दो लडकोको, जो उसके हाथ लगे, इतना पीटा कि एकके हाथकी हड्डी और दूसरेके मुहका दाँत टूट गया। और जब मैंने अपनी असावधानीमे, उस आदमी पर कुछ दोष लगाते हुए उससे उसके पिछले दिनके ज्ञानकी बात कही तो उसके उत्तरको सुनकर मैं हैरान ही रह गया।

सक्षेपमे, उसने हमे बताया कि यह सब हम दोनोकी ही करतूत थी, और हमी दोनोने उन लडकोको बहका कर उसके बैलको पिटवाया है, और वह धोबी भी हमारे ही कपडे धोने वाला धोबी है। हमारी भलमन-

साहतको उसने समझ लिया है और अगर अब कभी हम उधर टहलने आये तो वह हमको भी अच्छी तरह देख लेगा ।

"जाने भी दो दादा, मेरे इन दोस्तकी ऐसी छेडछाड करनेकी आदत है। इनकी वातका वुरा न मानना ।" उस आदमीसे कहते हुए मि वी ने आगे की ओर मेरा हाथ दवाया और हम दोनो आगे वढ़ गये ।

"मैं उसदिन आपसे कह रहा था" मि वी ने वातचीत शुरू करते हुए कहा, "कि किसी वातको ठीक मानना एक दर्जेकी वात है और उसे अपने मामलेमे वरतना दूसरे दर्जे की । इन दोनो दर्जोमें वहुत लम्वी—कहना चाहिये, मनुष्यके कई जन्मोके अनुभवकी—दूरी है । औसतकी दृष्टिसे यह एक वहुत अच्छा आदमी है । इसके अगर पिछले दस जन्मोको देखा जा सके तो मैं कुछ-कुछ मोटे तौर पर अन्दाज लगा सकता हूँ कि अपने दसवे जन्ममे (इस जन्म को जन्म न० १ मानकर गिनने से) इसे दूसरोको कष्ट देकर उसका तमाशा देखनेमे मजा आता रहा होगा और उनके दुख-दर्द का इसको कुछ भी अनुमान न रहा होगा, आठवे जन्ममे इसे दूसरोको कष्ट मे देखकर मजा तो आता रहा होगा, लेकिन अधिक कष्टको देखकर कुछ दया भी आ जाती रही होगी, पाँचवे जन्ममे इसे समझ आई होगी कि किसी भी जीवको विना अपराध कष्ट देना वुरा है, चौथेमे इसने सताये जाने वालोका कुछ पक्ष लेनेका पाठ सीखा होगा, इस जन्ममे शायद यह सीख रहा है कि सताने और सताये जाने वालेके वीचमे पडकर किसी सीमित हिसावसे ही पहलेको सजा देनी और दूसरेका वचाव करना चाहिए । और सम्भवत: अवसे वीस जन्म वाद इसे यह समझ आयेगी कि न्याय और व्यवहारके ठीक समझे हुए सिद्धान्तोको अपने मामलोमे कडाई और ईमानदारीके साथ लागू करना चाहिये । यह वात अभी आप हर्गिज़ इसके भीतरी मन और दैनिक व्यवहारमे नही ला सकते ।"

"इतनी-सी वात सीखनेके लिए वीस जन्म !" मैंने विस्मित होकर कहा ।

"इतनी सी वात नही यह तो एक वहुत वड़ी वात है। इतनी वात सीखते-सीखते तो आदमी दूसरी वातोमे न जाने कितना आगे वढ़ जायगा।" मि वी ने कहा।

"लेकिन मै तो इसी जन्ममे वुद्ध और ईसाका सा ज्ञान और उनकी-सी गति प्राप्त करना चाहता था; उन्हीकी तरह ससारमे काम और नाम करना चाहता था। आपके हिसावसे तो यह इस जन्ममे सम्भव नही होगा।" मैने कुछ चिन्तित होकर कहा।

इस पर मेरे मित्रने मुसकराते हुए कहा—

"हो सकता है कि ऐसा हो जाय। मुमकिन है आपकी आत्मा इतनी ऊँची हो और आपकी चाल इतनी तेज हो कि आप वहत्तर जन्मोकी यात्रा एक ही जन्ममे पूरी कर ले जाये।"

"क्या आप खुद वुद्ध और ईसाकी-सी गति प्राप्त करनेकी इच्छा और आशा नही रखते ! मै तो समझता था कि आप उन्हीके रास्ते पर चल रहे है।" मैने कहा।

"वेशक मै उन्हीके रास्ते पर चल रहा हूँ, और एक दिन मै भी उस दर्जे पर हूँगा, जिस पर दुनियाने उन्हे देखा था। मै जरूर कभी न कभी उस दर्जे पर हूँगा, क्योकि दुनियाका हर आदमी कभी-न-कभी उस दर्जे पर होगा।"

"यह एक विचित्र वात है। आप उस दर्जे पर होगे और हर एक आदमी होगा और मै भी हूँगा। लेकिन कव ? कैसे ?" मैने उत्सुक होकर पूछा। और मेरे इस प्रश्नके उत्तरमे हमारी वातचीत पूरे छह घंटे और चली, और मैं उनकी हरएक वात पर एक श्रद्धालु भक्तकी तरह उस समय विश्वास करता गया और उसी वीच मुझसे एक ऐसी वात हो गई, जिसके लिए मुझे वादमे वहुत दिनों तक शर्मिन्दा रहना पड़ा। मै अचानक, न जाने कैसे आवेशमें वी. के पैरो पर जा गिरा था और वी. ने मुझे अपनी वाहोमे समेट लिया था, और मेरे आँसुओंसे उसकी वाँह और छातीके वस्त्र भीग गये थे।

"तुम हो कौन.....?" मैंने वी. का पूरा नाम लेकर कहा, "तुम्हारा यह ज्ञान तुम्हे कहाँसे मिला है ? तुम मुझे इतना प्यार क्यो करते हो ! तुम मुझे इतने अच्छे, कभी-कभी उस लड़की नीलमसे भी बहुत अच्छे क्यों लगते हो ? मैं तुम्हे समझ क्यो नही पाता ?"

मुझे याद है, उस समय नीलमका नाम याद लानेमे मुझे करीब एक मिनट लग गया था। उन दिनो मेरी उम्र अठारह सालकी थी।

"मैं तुम्हारा मित्र हूँ। क्या इसमें तुम्हें अभी कुछ सन्देह है ? मैं जन्म-जन्मान्तरसे तुम्हारे आस-पास जन्म लेता आ रहा हूँ। मैं तुम्हे बराबर प्यार करता आ रहा हूँ। तुम्हारी कभी-कभी की गलतफहमियो, खुदगर्जियो और सख्तियोकी भी परवाह न करके मैं तुम्हें प्यार करता आ रहा हूँ। मैं तुम्हें कई जन्मोसे प्यार करता आ रहा हूँ। क्योकि मैं तुम्हारी प्रेम करनेकी योग्यताओ और कुछ दूसरी खूबियो पर मुग्ध हूँ। मैंने भी तुमसे बहुत कुछ पाया है। तुम्हारा ऋणी हूँ। जीवनकी पाठशालामें तुम मेरे सहपाठी हो। और प्रेमके बहुतसे अनिवार्य पाठ मैंने तुम्हारे सम्पर्क से ही सीखे हैं। और तुमने"—वी. का स्वर अब कुछ चचल हो उठा और उसकी आँखोमें एक अजब-सी चमक चमक उठी। "तुमने भी मुझे दु ख देनेमें कोई कसर नही उठा रक्खी। लेकिन मैं देख रहा हूँ कि इस जन्ममे और इसमे कुछ कसर बची तो अगलेमे अवश्य मैं तुम्हे पूरी तरह जीत लूँगा।"

मेरा नाम लेते-लेते अब वी. का स्वर नदीकी उस सुनसान रेतीमें, चौदसके चाँदके नीचे, फिर बहुत कोमल, गम्भीर—ऐसा, जैसा कि उसके पहले और उसके बाद फिर कभी नही सुना—हो गया, "तुम्हारे लिए मेरे मनमें क्या है यह न तुम समझ सकते हो और न मैं ही अच्छी तरह तुम्हे समझा सकता हूँ।"

"इस जन्ममे....." मैंने वी. का नाम लेकर कहा, "तुमने मुझ पर जो कुछ किया वह मेरा दिल जानता है। अब अगले जन्ममे तुम मुझे जीतने के लिए और क्या करोगे ?"

मि. वी. ने इस पर कहा—

"तुम्हारे और नीलमके बीच......"

लेकिन आप, जो इन पंक्तियोको पढ रहे है, इस लेखकी लम्बाईसे अब ऊब उठे होगे। मुझे जल्दी करनी चाहिये।

उस रातकी मि वी. की बातोमेसे करीब ९० फीसदीको मैने करीब एक सप्ताह बाद मि वी के मुँह पर चुनौती दे दी। उस रातकी अपनी अन्धश्रद्धा पर मुझे बादमे हँसी भी बहुत आई।

लेकिन उस रातकी उनकी बातोसे मुझे एक बहुत बड़ी सचाई—बडी और कड़वी सचाई—भी मिल गई और वह यह कि मै इस जन्ममे बुद्ध और ईसाके बराबर और उनके जैसे सम्मानका अधिकारी नही हो सकूँगा।

उनकी जिन दस फीसदी बातोको मेरी तर्क और बुद्धिने स्वीकार कर लिया है उनके अनुसार मै मानता हूँ कि आदमी बहुत छोटीसे लेकर बहुत बड़ी हैसियत तककी चीज़ है।

उस ऊँची-से-ऊँची हैसियत तकका अधिकार हर एक आदमीको प्राप्त है और वह बराबर अपनी निजी योग्यताके अनुसार तेज़ या धीमी चालसे उस हैसियतकी तरफ बढ़ रहा है; और एक न एक दिन उस तक ज़रूर पहुँचेगा। अपनी इस यात्रामे वह सचमुच बार-बार मरकर जन्म लेता है। और प्रेम भी एक ऐसी चीज है, जिसकी कोई-कोई रस्सी इतनी मजबूत बट जाती है कि जन्म और मौतकी तेज़-से-तेज छुरियोसे भी नही कटती; और जो दो या अधिक मनुष्य ऐसी रस्सीमे एक बार बँध जाते है उनका अगले कई जन्मो तक किसी-न-किसी रूपमे साथ चलता रहता है। आदमीकी उस यात्राका एक बिलकुल निश्चित मार्ग—मार्ग नही दिशा कह लीजिये—है और उसकी बिल्कुल निश्चित मंजिले या दर्जे है और बिना निचले दर्जेकी योग्यता प्राप्त किये कोई भी अगले दर्जोमे नही जा सकता। मै जानता हूँ कि मि. वी. की सी अच्छाइयाँ, उनका सा दिल और उनकी-सी बुद्धि मेरे पास नही है और मेरी चालकी रफ़्तार उनकी

जितनी तेज हर्गिज नही है । मेरा पूरा विश्वास है कि मैं उनसे आगे कभी नही निकल सकता ।

मि. वी. इस जन्म भर मे महात्मा नही हो सकते, यह उनका अपना ही कहना है । महात्मा होनेके लिए, उनके हिसाबसे, कुछ खास निश्चित गुणो की—जिन्हे वह 'आजादियाँ' कहते हे—जरूरत है ।

ये गुण या आजादियाँ गिनतीमे दस है और मि. वी. को उनमेसे एक भी अभी प्राप्त नही है । उन दस आजादियोकी चर्चा मैं मौका पडा तो कभी आपके सामने करूँगा ।

मि. वी. के क्या, किसीके भी हिसाबसे मैं चूकि किसी घटिया या आसान दर्जेका महात्मा नही होना चाहता और वे दसो आजादियाँ अभी मुझे मेरे वससे बहुत बाहरकी मालूम पडती है, इसीलिए मैने भी इस जन्म मे महात्माई करनेका हौसला छोड दिया है । मि वी. की इस जन्मकी वडी-से-बडी आशा यह है कि वह बाकायदे और बाजाब्ते एक खास महात्मा के चेले बन जायेगे—वैसे, उस महात्मा और उसके कुछ चेलोके साथ उनका एक हल्का-सा सम्पर्क पिछले जन्मोसे ही चला आ रहा है । और मेरी बुद्धिमानी इसीमे है कि मैं उनकी इस आशासे बड़ी आशा अपने लिए न रक्खू । इस पूरे लेखको लिखनेमे मुझे करीब तीन घटे लग गये है और मिसेज चतुर्वेदी मेरे पास अपनी जगह पर अब भी वैसे ही बैठी हुई मेरा लेख पूरा होनेकी राह देख रही है ।

जमना किनारे इस इमारती गुफाकी छतरीकी छायामे भी सूरजकी झौस वढ़ जानेकी वजहसे उनका मुँह कुछ तमतमा आया है और पसीनेकी बूँदे झलक आई है । फिर भी वह उसी धैर्य और उदारताके साथ मेरी और मेरे इस लेखकी प्रतीक्षा कर रही है, जिसका उन्होने मेरे सम्पर्कके प्रारम्भसे ही मेरे लिए प्रयोग किया है ।

मैं नही समझ पाता हूँ कि मिसेज चतुर्वेदीने मेरे ऊपर अभी उपदेश देने और लोगोंको राह दिखानेकी इच्छाका अभियोग क्यो लगाया है ।

मैं समझता हूँ मेरी उम्रके उन्नीसवे सालके, और मिसेज़ चतुर्वेदीसे मेरे परिचयके, पहले मुझ पर यह अभियोग लगाया जाता तो लगाया जा सकता था। मिसेज़ चतुर्वेदी जानती हैं कि मैं न महात्मा हूँ और न इस जन्ममे महात्मा और उपदेशक होनेका दावा रखता हूँ। जब यह मिस अग्रवाल थी, तभीसे उनको मेरा पता है। और उन दिनो इन्होंने मेरे साथ जो कोमल, मिठास भरी लेकिन सदैव सुदृढ उदारता वरती हैं, उनकी गहरी छाप मेरे मन पर अमिट है और मेरा अगला जीवन इनके दिये सहारो-का आभारी है।

मैं बहुत दिनो हैरान रहा हूँ कि यह किस मोम और किस फौलादके मिश्रणकी बनी औरत है।

मिस अग्रवालके मिसेज चतुर्वेदी बननेमे मेरा जो हाथ रहा है उसके लिए मेरे मित्र मि. चतुर्वेदी मेरे एहसानमन्द हैं। मैं समझता हूँ कि आपको भी, जो इन पक्तियोको पढ रहे हैं, मिसेज़ चतुर्वेदीकी इतनी चर्चाके लिए मेरा कुछ एहसानमन्द होना चाहिए और अपने पिछले वादेसे मुकर कर, इस लेखमे मुझे मिसेज़ चतुर्वेदीके आक्षेपोकी वजहसे जो, विषय-परिवर्तन करना पड़ा है, उसके लिए मुझे—मेरी न सही तो मिसेज चतुर्वेदीकी खातिर क्षमा कर देना चाहिए।

मेरे साधन ये हैं !

पिछलेसे पहले लेखमे किये हुए वादेके अनुसार मै अब उन साधनो की बात कहूँगा जो मेरे पास और हरएक आदमीके पास मौजूद है और जिनके जरिये अभीष्ट चीजे प्राप्त की जा सकती है।

उन सावनोमे से जिनको मैने अधिक कारआमद पाया है उनकी सूची इस प्रकार है १-हाथ, २-पैर, ३-आँख, ४-कान, ५ जवान, ६-तन्दुरुस्ती यानी शरीरसे यथासम्भव ठीक काम लेनेकी योग्यता, ७-भावनाएँ, ८-विचार, ९-आदमी यानी लोग, १०-पुस्तके।

मेरी यह सूची सम्भव है, कुछ ढीले तौर पर वनी हो, क्योकि इसमे पेटका, जो कि ज़िन्दगीके लिए हाथसे कही अधिक महत्त्वकी चीज है और आत्माका, जो कि विचारोसे भी कही ऊँची चीज है, नाम नही है, फिर भी मेरे कामोमे उपयोगिताके लिहाजसे मेरे सवसे अधिक कारआमद साधनो की सूची यही है। आपकी और हर आदमीकी ऐसी सूचीमे, नामोमे और चीजोकी सख्याओमे कुछ हेर-फेर भी हो सकता है।

"आपकी यह सूची वहुत दिलचस्प और सार्थक जान पडती है, लेकिन इसमे जो आपने पुस्तकोका नाम रक्खा है वह एक बहुत हल्की-सी चीज जान पड़ती है। पुस्तके तो आखिर कुछ ऊपरी, मोटी-मोटी जानकारी प्राप्त करनेका एक ऊपरी साधन है। अधिक पुस्तके पढनेसे मनुष्य कभी सच्चा ज्ञान नही प्राप्त कर सकता, वल्कि उनसे उसमे विघ्न ही पडता है।" मेरे एक मित्रकी राय है।

"आपके ये दसो साधन नही, बल्कि आपकी असली अभीष्ट-प्राप्ति मे वाधक है, भाई जी।" मेरे एक दूसरे मित्रका, जो हर शनिवारको देहली मे एक वेदान्ती सन्यासीजीके इन्स्टीटयूट मे योगाभ्यास सीखने जाते है, कहना है।

लेकिन मेरी जो सूची है वही है। इन दसो साधनोंको अगर मैं महत्त्व की दृष्टिसे इस तरह तरतीब दूँ कि अधिक महत्त्वपूर्ण साधन पहले और उससे उतरके बादमे लिखा जाय तो उनका क्रम सम्भवत. इस प्रकार होगा।

१-विचार, २-भावनाएँ, ३-तन्दुरुस्ती, ४-कान ५-आँख, ६-आदमी, ७-पुस्तकें, ८-जबान, ९-पैर, १०-हाथ।

आपके, और आमतौर पर हर आदमीके पास ये दसो साधन मौजूद होते है, लेकिन लोग आमतौरपर इन साधनोकी तरफ जितना चाहिए, ध्यान नही देते और उनसे पूरा काम नहीं लेते।

आप लेते है ?

आपकी समझके भीतर, आपके फायदेके लिए जो-जो काम आपके हाथ कर सकते है, जो-जो चीज ले सकते है क्या उन्हे आप अपने हाथोंसे करते ह और लेते हैं ?

क्या आप जानते है कि आपके हाथोके स्पर्शसे, उनकी राह, आपके दिलकी और दिलके भीतरकी बिजलियाँ बहकर किसी-किसी मौंके पर किसीको जला भी सकती है और किसीको जिला भी सकती हैं ?

आपके पैर आपके फायदेकी जिस-जिस जगह आपको ले जा सकते है, क्या वहाँ आप मुस्तैदीके साथ पहुँच जाते हैं ?

अपने लाभके लिए जब जो कुछ आप अच्छी-से-अच्छी बात कह सकते हैं, मुस्तैदी और सावधानीके साथ कहते है ?

क्या आप जानते हैं कि आपकी जबान दूसरोपर कितने बड़े-बडे घाव कर सकती है और कितने बड़े-बड़े घावोका इलाज भी कर सकती है ? आँख और कानकी राहो जो बाते आपके दिल और दिमागकी किन्ही कोठरियोमे जमा हो जानी चाहिएँ वे कभी जबानकी राह बाहर तो नही निकल जाती ? क्या आप जानते हैं कि जबानका काम पेटकी बातको बाहर निकालनेके साथ-साथ किसी-किसी बातको भीतर दबाना भी होता है ? क्या आपको मालूम है कि आपकी ज़बान निष्पाप भावसे केवल असाव-

धानी-वश कुछ ऐसे निरपराध पाप नही कर बैठती, दूसरोको ऐसे गहरे पानीमे नही डुवा देती, जैसे कि कोई कोई लोग साधारण चर्चा या गपशप के नामपर आदमियोको डुबा बैठते है ?

आपकी पहुँच और जानकारीके भीतर जो-जो अच्छी पुस्तके है क्या उन्हे आप ध्यानपूर्वक पढते और उनसे लाभ उठाते हैं ? आपको मालूम है कि बडे-से-बडे रहस्यकी बात जो कि एक ज्ञानी-से-ज्ञानी महापुरुष इन्सानी कानोमे कह सकता है, मीठे-से-मीठे प्यारकी बात जो कि एक प्रेमका उपासक अपने उपास्यके मुखसे सुन सकता है, ऊँचे से ऊँचे विज्ञान, पुराने से पुराने इतिहास, और दूर-से-दूर भविष्यकी बाते जिन्हे आदमीका मस्तिष्क सुन-कर कुछ समझ सकता है, पुस्तकोमे मौजूद हैं ? आपको मालूम है कि ऐसी पुस्तके कागज़ो, पत्तो, पत्थरों और धातुओके पत्रोपर दुनियाकी ज्ञात और भूली हुई भाषाओमे लिखी हुई मौजूद है ? और उनकी लाइब्रेरियाँ कही-कही पहाड़ोकी गुफाओमे धरतीके भीतर सुरक्षित और सुव्यवस्थित मौजूद हैं, और उनमे किसी भी देशके डाक-विभागकी रत्ती-भर भी पहुँच न होने पर भी इस बीसवी सदीकी भी कोई-कोई ख़ूबसूरत गेटअपदार किताबें पहुँच जाती है ? आपको पता है कि भारतके स्वामी दयानन्दने और रूसकी किसी फौजी महिलाने और दर्जनो दुनियाके जाँबाज घुमक्कड़ो ने इस तरहकी किताबो और लाइब्रेरियोकी कही-कही गवाही दी है ?

क्या आप किसी आदमीको जानते हैं ? यह शायद एक हास्यास्पद और बे सिर-पैरका प्रश्न है । तो फिर क्या आप जिन्हे जानते हैं उनकी भलाइयों और बुराइयों, दोस्तियो और दुश्मनियोको ठीक-ठीक समझते हैं ? क्या आप उस आदमी या औरतको जानते है जिसके दिलमे आपके लिए सबसे अधिक जगह है ? क्या ऐसा कोई व्यक्ति आपको मिला है ? या आपको ऐसेकी तलाश है ? क्या आपको किसी ऐसे आदमीका पता है जो आपकी बडी-से-बड़ी गिरावटको समझ कर हमेशा आपसे सहानुभूति रख सकता हो ? अपने मित्रो, परिचितो और सम्बन्धियोके सहयोग और विरोधकी, उनकी समझदारी और नासमझी और गलतफहमीकी सीमाओ

को क्या आप समझते हैं ? आदमीकी नीची-से-नीची हालत और ऊँची-से ऊँची हैसियतका आपको कितना कुछ अनुमान है ? सबसे ऊँचे आदमीकी कल्पना अगर आपके मनमे कुछ है तो वह क्या है ? किसी हिसाबसे आप आदमियोको कुछ निश्चित दर्जोमे बाँट सकते है ? क्या आपको उन ऊँचे दर्जे के कुछ आदमियोका पता है जो आपकी मित्रता और सहयोग पाने और अपनी शक्तिभर आपकी सेवा और सम्मान करनेके लिए तैयार बैठे हैं और जिन तक आपकी पहुँच दूरका रास्ता नही है और जो आपकी और आपकी मित्रताकी कीमतको समझते हैं ? क्या आप जानते हैं कि आदमी आदमी का कौन है ?

क्या आप अपनी आँखसे जब जो-जो कुछ देखना चाहिए मुस्तैदीके साथ देखते हैं ? आँखके कामको कभी आप कानके ऊपर टालकर ही तो नही रह जाते?—जो निश्चय या फैसला किसी बातको आँखसे देखकर करना चाहिए उसे सिर्फ कानसे सुन लेने पर ही तो नही कर डालते ? सामने आये हुए आदमीको गौरकी निगाहसे देखकर उसे आप जितना समझ सकते हैं उसमे लापरवाही तो नही करते ? आँखोकी असावधानीसे आपके पास आई हुई पुस्तको, चिट्ठियो और व्यक्तियोमे कोई बात ऐसी छूट तो नही जाती जो आपके मतलब की हो ? आपकी आँखोकी भूल या अल्हड़पनसे कभी कोई व्यक्ति कुछ दूर ऐसे गलत रास्ते पर तो नही पड जाता, जहाँ पहुँच कर उसे भी कष्ट हो और आपको भी बुरा लगे ? क्या आप जानते हैं कि आपकी आँखोकी निगाह कितनी तरहकी है और वह कितनी और तरहोकी हो सकती है और वह किस हद तक क्या-क्या कर सकती है ? क्या आप जानते हैं कि इन आँखोके बिना भी आप दुनियाके रूपोको किस हद तक देख सकते है ?

अपने कानोंसे क्या आप पूरा और ठीक काम लेते है ? कानोके काम को कभी आप आँखो पर ही तो टालकर नही रह जाते ? किसीको कुछ करते देख लेने पर, उसकी बात सुन लेनेके बाद जो निश्चय या फैसला आपको करना चाहिए उसे सिर्फ आँखसे देखकर ही तो आप नही कर डालते ?

दूसरोकी जो-जो कुछ आप अपने समय और समाईके भीतर सुन सकते है उसे सुननेमे इनकार या आलस तो नहीं करते ? आप अपने कानों पर अधिक या अनुचित शोरगुलका दबाव तो नही डालते ? आप दोपहर वाले रेडियो-प्रोग्रामकी या किसी और संगीतकी कुछ कद्र कर लेते है ? क्या आप जानते है कि आपके कान मनुष्यकी बोलीके बाहर निर्जन जगहोमे भी कभी-कभी कुछ सार्थक बाते सुन सकते है ?

अपनी तन्दुरुस्तीसे क्या आप पूरा-पूरा काम लेते है और उसकी पूरी परवाह करते है ? ऐसा तो नही होता कि जितना ध्यान और जितना खर्च आप उस पर करते है, उतना काम उससे न लेते हो ? आप तन्दुरुस्ती के उपयोगो और दुरुपयोगोका भेद समझते है ? आप अपनी जबानको इतना सुख या पैरोको इतना आराम तो नही दे देते कि उसका बदला आपके पेटको चुकाना पडता हो ? क्या आप जानते है कि अपनी तन्दुरुस्ती के बल पर आप दूसरोका बोझ बटा कर और दूसरो पर बोझ लाद कर किस-किस तरह की कमाई कितनी कीमत तक की, अपने लिए कर सकते है ?

और आपकी भावनाएँ, इच्छाएँ, कामनाएँ, वासनाएँ (अगर आपमे कोई हों तो) दिलकी लगावटें, नफरते, खुशियाँ, बेचैनियाँ, हसरते, उम्मीदे ये सब आप जानते है, क्या है ? ये कहाँसे आती है, कहाँ जाती है, कहाँ रहती है, क्या करती है और क्या-क्या कर सकती है, इनकी औकात क्या है, आपके पास ये कितनी है—इन बातोका आपको पता है ? क्या आप जानते है कि आपके पास ये वो ताकते है जिनसे आप चाहे तो दुनियाको जीत सकते है, पहाड़ोको खिसका सकते है, और नागनियो और शेरनियोको चूम सकते है ? आपने कभी इन पर ध्यान दिया है ? क्या आप जानते है कि आप इनके बिना किसी भी दिन, किसी भी घटे, किसी भी पल कोई काम नही कर सकते और इन्हीकी बदौलत आप इकन्नियोमे हीरे खरीद लेते है और इकन्नियोमे हीरे बेचनेके लिए मजबूर भी हो जाते ह ? आपको दुनिया के इस ज़बरदस्त जादूका, जिससे जानते हुए या अनजानमे, थोड़ा या बहुत काम आप हर समय लेते रहते है, पता है ? क्या आप जानते है कि जो कुछ

आप इन साधनोसे कमा सकते है, आपका धन-दौलतसे कमाया हुआ माल उसका पासग भी नही हो सकता ? इन जादुओके सबधमें क्या आपको मालूम है कि जाननेवालोने कितनी किताबे हमारी आपकी जानकारीके लिए लिख रक्खी है ?

और भावनासे भी आगे, आपके मनमे विचार नामकी जो चीज़ उठा करती है उसे भी क्या आप समझते है ? भावना और विचारका अन्तर क्या आपको मालूम है ? क्या आप जानते है कि तीर चलाने वालेकी ताकत और दोस्तोको बचाकर निशाने पर ही तीर चलानेकी समझ और योग्यतामे क्या अन्तर है ? क्या आप जानते है कि भावनाके तीरोको पैना करनेवाली और उनकी रोक-थाम रख कर, दुरुपयोग और आत्मघात-से बचा कर, उन्हे सदुपयोगमे लाने वाली अगर कोई शक्ति आपके पास है तो वह विचार ही है ? क्या आप जानते है कि भावनाओको सुलाकर, उसके तीरोको तरकसमे लिटाकर भी यह विचार नामकी चीज आपको अपने लक्ष्यका पता देकर आगे बढ़ा सकती है और दुनियाके बाहर-भीतर असली सैर करा सकती है ? क्या आप जानते है कि ज्ञान और पूरी समझ-दारी और पूरे सुखकी कुजी इसीके हाथमे है ?

जो-जो कुछ भी मै पाना चाहूँ उसकी प्राप्तिके ऊपर कहे दस खास साधन मेरे पास है और इन दसोमे 'विचार' का सबसे ऊँचा स्थान, कम-से-कम मेरे लिए है ।

और क्या मै अपने इन दसो साधनोसे ठीक काम लेता हूँ ?

यह मेरे लिए अभी असम्भव है, मै ऐसा करनेका अपनी योग्यता और समझ और सावधानी भर अधिक-से-अधिक प्रयत्न अवश्य करता हूँ ।

अपने पसंदके ज्ञानकी प्राप्तिके सिलसिलेमें मैने उसके तीसरे विभाग—वस्तुओकी प्राप्तिके लिए मेरे पास मौजूद साधनोकी छानबीन और जान-कारी वाले विभाग—को पहले लिया है ।

मेरा अनुमान है कि अगले दो-तीन जन्मोम मै इस विभागकी पूरी जानकारी पा लूँगा । तब ज्ञानके बाकी पाँच विभागोकी छान-बीन मेरे लिए आसान हो जायगी ।

मैंने इस जन्ममे अ से लेकर इन्ट्रन्स तकके बारह दर्जे, बल्कि एफ. ए. का भी एक यानी पूरे तेरह दर्जे पास किये है। इसलिए हर जानकारीको दर्जोंके हिसाबमे ही प्राप्त करनेकी मेरी आदत पड गई है।

जब मै तीसरे दर्जेमे ही था तभी मुझे इन्ट्रन्स यानी दसवे दर्जेका पता लग गया था और मुझे निश्चय हो गया था कि मै दसवाँ दर्जा जरूर पास करूँगा। और चौथे दर्जेमें पहुँचने पर तो मैंने दसवें दर्जेकी एक किताब भी अपने स्कूलके एक बडे विद्यार्थीके पाससे लेकर देख ली थी और उस किताबकी एक कहानी भी मैंने उससे पढ़वाकर सुन ली थी और वह कहानी पूरी तरह समझमें न आने पर भी मुझे बहुत अच्छी लगी थी।

निस्सदेह उन दिनो मै एक बहुत तेज लड़का था।

और क्या आप अपने बचपनके पढ़ाईके दिनोमे इतने तेज नही थे ?

निस्संदेह आप इतने तेज तो जरूर रहे होगे कि आपने तीसरे ही दर्जेमे दसवें दर्जेका नाम सुन लिया होगा।

और उस दर्जे तक पहुँचनेमे आपको पूरा विश्वास भी हो गया होगा।

बल्कि दसवे दर्जेको पास करनेकी नीयतसे ही आप तीसरे दर्जेमे भर्ती हुए होगे।

तो फिर क्या अब आप उतने तेज नही रह गये है ?

अपने जीवनमें—रोजगार-व्यापारमे, नौकरीमे, हुनर-कारीगरीमे, लोगोके साथ व्यवहारमे, सुखमे, दु खमे, परदेशमे, परिवारमे हर कही आप कुछ न कुछ अनुभव प्राप्त कर रहे है, कुछ कामकी बाते सीख रहे है।

क्या यह सम्भव नही कि ये पाठ जो आप इस तरह सीख रहे है इनके भी कुछ सिलसिलेवार दर्जे, इम्तिहान, नतीजे, सनदे और उन सनदोके सहारे किसी सरकार और समाजमे मिलने वाले ओहदे और लाइसेन्स और सम्मान भी होते हो ?

मुझे पता लगा है कि यह ऐसा ही है और इसीलिए मै इस बातकी छान-बीनमे लगा हूँ।

मेरे हिसावसे मैं, आप और हर एक आदमी प्रेम और ज्ञानके कुछ न कुछ पाठ पढ़ रहा है।

मोटे तौर पर जहाँ तक मैं समझता हूँ प्रेमके वाद ज्ञानका दर्जा आता है, लेकिन इन दोनो दर्जोके पाठ आपसमे कुछ ऐसे गुंथे हुए है कि यह दिखाना वहुत कठिन है कि कौन पहले है और कौन वादमे। फिर भी मैं कह रहा हूँ कि पहले आदमी प्रेम सीखता है फिर ज्ञान।

और ज्ञानके वाद ?

ज्ञानके बाद तो फिर शायद मजा ही मज़ा है।

और उसके पहले ?

उसके पहल भी शुरूसे ही प्रेमके साथ और ज्ञानके साथ, इस मजे की —इसे आनन्द कह लीजिए—शुरूआत हो जाती है। व्यवहारमे समझ लीजिए, प्रम, ज्ञान, आनन्द तीनो आपसमे हर कही गुथी हुई चीजे है। इस लेखमे मैंने, अपने विभाजनके हिसावसे ज्ञानके तीसरे विभाग—उन साधनोकी, जिनके द्वारा चीजे प्राप्त की जाती है, कुछ खोज-पड़तालकी चर्चा मुख्य रूपमे की है।

इसे आप याद रखेगे ?

❁

मेरे अट्ठाईस

मैंने अपने पास मौजूद साधनोंके सम्बन्धमे अपनी खोजको काफी आगे बढाया है और उसे एक तरफा-ही नही रहने दिया है।

जहाँ एक तरफ मैंने यह जाननेकी कोशिश की है कि इन साधनोसे मुझे क्या-क्या मिल सकता है वहाँ दूसरी तरफ मैंने यह भी खोज की है कि इन साधनोको मुझसे क्या-क्या मिलना चाहिए—दूसरे शब्दोमे, इन साधनोके लिए मुझे किस-किस चीजकी जरूरत है।

हालाँकि यह मेरी खोजका कोई विशेष आवश्यक पहलू नही है, फिर भी शायद आपकी कुछ दिलचस्पीका हो इसलिए यहाँ नमूनेके तौर पर कुछ आवश्यक चीजोके नाम लिखता हूँ।

१—हाथोके लिए—साबुन या मिट्टी, सर्दियोमे दस्ताने, नाखून काटनेकी कैंची।

२—पैरोके लिए—जूते, नाखून काटनेकी कैंची, सरदियोमे मोजे।

३—जबानके लिए—जीभी, समय समय पर कुछ स्वादिष्ट खानपान, शुद्ध, स्पष्ट एव अलग-अलग स्वरोमे बात कह सकनेका अभ्यास, यथावसर चुप रहनेका अभ्यास।

४—पुस्तकोके लिए—अलमारी, डस्ट कवर।

५—आदमियोके लिए—अपने भीतर उनके लिए कुछ आकर्षण, उपयोगिता, अच्छा स्वभाव, कुछ सेवा कर सकनेकी समाई।

६—आँखोके लिए—कभी-कभी त्रिफलाके छीटे, सुन्दर, रमणीक और तरावट पहुँचाने वाले दृश्य।

७—कानोके लिए—कभी-कभी मीठा-कोमल सगीत, कर्कश शब्दो, शोरगुल और लू-लपटसे बचाव।

८—तन्दुरुस्तीके लिए—पुष्टिकर स्वादिष्ट भोजन, आरामदेह कपडे, मकान और आवश्यकता पडने पर औषधि-उपचार।

६—भावनाके लिए—प्रेम, आदर-सम्मान।

१०—विचारोके लिए—समझदारी, हर सामने या काम मे आनेवाली चीज़ या वातकी उपयोगगिता, कीमत और असलियतकी जानकारी।

हालाँकि साबुन, मिट्टीसे लेकर हर चीजकी असलियतकी जानकारी तक जो अट्ठाईस चीजोकी सूची मैने ऊपर लिखी है, वह मेरी खोजके किसी विशेष आवश्यक पहलूका नतीजा नही है, फिर भी इन सूचीमें मुझे एक वहुत वडी कामकी वात मिल जाती है।

इस सूचीमे मुझे ज्ञानके पहले विभाग —मुझे किस-किस चीज़की ज़रूरत है, इस प्रश्नकी छानवीन का कुछ अस्थाई, काम चलाऊ मसाला मिल जाता है। भले ही ये चीज़े मेरे लक्ष्य या अभीष्ट आवश्यकताकी चीज़े न हो, फिर भी ये मेरी आवश्यकताओके लिए आवश्यक चीजें तो है ही।

और, आप देख रहे है कि इस खोजसे मुझे अपनी छानवीनके एक ओर, यानी तीसरेके साथ-साथ पहले विभागमे भी कुछ 'पहुँच' मिल गई है।

निस्सदेह मेरी सूचीकी उन अट्ठाईस चीजोमे कुछ—जैसे मिट्टी, साबुन आदि—वहुत मामूली है, और कुछ—जैसे प्रेम, सम्मान, स्वभाव, समझदारी आदि-वहुत महत्त्वपूर्ण है।

और अपने उन दसो साधनोको वनाये रखने और उनसे ठीकसे काम लेनेके लिए मुझे जो इन अट्ठाईस चीजोकी जरूरत है उनमेसे मेरा खास ध्यान इन पाँच चीजो पर है—

१. अच्छा स्वभाव

२. दूसरोकी कुछ सेवा कर सकने की समाई।

३. प्रेम।

४. आदर-सम्मान।

५. समझदारी।

और जवतक मुझे अपनी असली आवश्यकता या अभीष्ट का—

ईश्वर, मुक्ति, स्वर्ग, योग-बल, श्मशान भूमि या जो कुछ भी वह हो---पता न लग जाय और उसकी पूरी समझ न आ जाय तबतकके लिए मोटे तौर पर ये पाँच चीजें ही मेरी आवश्यक चीजे है और मेरी अभीष्ट है। और फिलहाल अभीष्टके दर्जे पर रखनेके लिए ये कोई बहुत ओछी चीजे भी नही है। इसपर एक आक्षेप है :

"आपका उद्देश्य ऊँचा जान पड़ता हे और ज्ञान और धर्मकी ओर आप का रुझान भी मालूम होता हे। लेकिन आपका यह छानबीन और खोज-पडताल वाला ढंग बहुत छिछली-सी, बच्चोकी सी बात है। कही ज्ञान और धर्मकी खोज इस तरह की जाती है? हर बातको अपने दिमागसे सोचना, ज्ञान और धर्मके सम्बन्धमे अपने मनमाने विभाग और प्रश्नावलियाँ बनाना, सूचियाँ बनाना और उनमे काट-छाँट करना---यह तो ऐसा ही है जैसा कि किसी चूरन-चटनीके लिए मसालोकी लिस्टे बनाना और उनमे काट-छाँट करके उसे स्वादिष्ट बनानेके लिए प्रयोग करना। लेकिन ज्ञान और धर्म तो और ही चीजे है, इनका रास्ता दिमागसे सोच समझ कर हम और आप नही निकाल सकते। इनके लिए अधिक ठीक रास्ते तो हमारे ऋषियो-महात्माओने अपने ऊँचे आत्म-ज्ञानसे देखकर निश्चित कर रक्खे है और वे हमारे धर्मशास्त्रोमे मौजूद है। आपने ज्ञानके जो विभाग करके हरेकके लिए जो एक एक प्रश्न निश्चित किया है वह सब आपने किसी शास्त्रसे लिया है, या किसी महापुरुषने आपको बताया है? या आप अपने आपको इतना योग्य समझते है कि इस तरह के विभाग और रास्ते अपने और दूसरोके लिए निकाल सके, या इसके लिए किसी खास योग्यताकी जरूरत नही समझते? या आपकी राय यह है कि हर-एक आदमी अपने लिए ज्ञानके रास्ते निकाल कर उनसे लाभ उठा सकता है? मेरा अपना विचार तो यह है कि ज्ञानके लिए शास्त्रोके अध्ययन, पहुँचे हुए गुरुकी खोज और उसकी शरण और उसकी आज्ञानुसार योग-साधनकी आवश्यकता है और यह आपकी जैसी चलती हुई और चुटकुलो वाली बातचीतका विषय नही है।"

ऊपर लिखा आक्षेप मेरे जिन आदरणीय मित्रका है उन्होंने मुझे तीन साल तक प्राइमरी स्कूल में अरिथमेटिक पढ़ाई है और उनके बाद दूसरे मास्टरोंसे मैंने लगातार दसवें दर्जे तक अरिथमेटिक पढ़ी है और ग्यारहवें दर्जेमें मैंने थोड़ीसी लॉजिक (तर्कशास्त्र) भी पढ़ी है।

और मैं मानता हूँ कि अरिथमेटिक और लॉजिक कोई बुरी या गलत चीजें नहीं हैं।

मेरी यह धारणा ग़लत तो नहीं है ?

इसीलिए मैं हर तरहके ज्ञानोपार्जन और जानकारी और छानबीनको, अगर मुमकिन होता है, अरिथमेटिक और लॉजिकके ढंग पर समझने और साबित करनेकी कोशिश करता हूँ ।

मेरे इन आदरणीय मित्रका कहना है कि ईश्वरने मनुष्यको अलग-अलग दर्जोंका ज्ञान लेनेके लिए अलग-अलग साधन दिये हैं—संसारकी स्थूल वस्तुओंका ज्ञान लेनेके लिए दिमाग, सूक्ष्म वस्तुओंका ज्ञान लेनेके लिए बुद्धि और परलोकका ज्ञान लेनेके लिए आत्मा ।

मुझे इनके कथनमें कोई एतराज़ नहीं है और मैंने इसे यों समझा है कि जैसे रेखागणित (ज्योमेटरी) के अनुसार एक नापका ज्ञान होनेसे सिर्फ लम्बाई रखने वाली शक्लों यानी लकीरोंका, दो नापका ज्ञान होनेपर लम्बाई के साथ-साथ चौड़ाई भी रखनेवाली शक्लों जैसे कमरों या मैदानोंके धरातलका, और तीन नापोंका ज्ञान होनेपर लम्बाई और चौड़ाईके साथ-साथ ऊँचाई या मोटाई रखने वाली शक्लों जैसे लकड़ीके तख्तों या सन्दूकोंका ज्ञान हो सकता है; या अरिथमेटिक के हिसाबसे जैसे इकाईके स्थानपर लिखनेसे किसी अंकका जो मान होता है, दहाईके स्थानपर उसी अंकको लिख देनेसे उसका मान बिल्कुल बदल जाता है, [दस गुना हो जाता है]और सैकड़ेके स्थानपर उसे लिख देनेसे उसका मान और भी बदल जाता है [सौ गुना हो जाता है] और जिसे दहाई और सैकड़ेके स्थानोंका ज्ञान नहीं है वह उन स्थानोंपर लिखे हुए अंकोंका अर्थ हरगिज़ नहीं समझ सकता; उसी तरह यह भी बिल्कुल सम्भव है कि दिमागसे सूक्ष्म वस्तुओंका और

वुद्धिसे परमात्मा का और परमात्माके देशका ज्ञान न हो सकता हो और य चीज़े हमारे दिमागकी समझके बाहर होते हुए भी कही न कही मौजूद हो।

और जिस तरह आठवे दर्जेकी अरिथमेटिकमे दशमलवके नियम सीख लेनेपर दूसरे दर्जेके सीखे हुए गुणा भागके नियम गलत नही हो जाते और दशमलवकी असलियतको गुणा भागके नियमोसे किसी तरह का धक्का पहुँचनेका डर नही रहता, उसी तरह मेरा पक्का विश्वास है कि दिमागी छानवीनसे ज्ञान-भक्ति, प्रेम, ईश्वर, आत्मा, योगवल वगैरह चीज़ो को कम से कम कोई धक्का नही पहुँच सकता। दिमाग उन्हे गलत या नामौजूद नही सावित कर सकता और अगर उन चीजो मे कुछ सचाई है तो दिमाग से भी उनकी कुछ न कुछ टोह—दसवे सौवे हजारहवे हिस्सेमे ही सही—मिल ही सकती है।

तो फिर अगर—जब तक मेरे पास दिमागसे वडी कोई चीज या प्रज्ञा छानवीन करनेके लिए नही है तव तक अगर मै दिमागसे ही हर चीजकी छानवीन करता हूँ, ज्ञान और प्रेम और धर्मकी अपनी समझ और आवश्यकता के अनुसार विभाग और परिभाषाएँ स्थिर करता हूँ, तो क्या वुरा करता हूँ? अगर दिमाग भी ईश्वरने ही दिया है और वह ज्ञान और धर्मके मामलो मे भी कुछ सोच सकता है—और आपके सामने ही मै इन वातोको दिमागसे सोच ही रहा हूँ—तो ज़रूर कुछ-न-कुछ सचाई इससे भी निकल आयेगी।

अपने कामकी जो-जो बात आप अपने दिमागसे सोच सकते है उसे दिमागसे न सोचना एक वहुत वडी लापरवाही और नादानी और घाटेकी वात है।

जो लोग ज्ञान और धर्मको शास्त्रोके अध्ययन, गुरुओकी दीक्षा और योगाभ्यासके द्वारा प्राप्त कर रहे है उनके लिए मै ये लेख नही लिख रहा हूँ।

ये लेख तो मै काशीवावू जिनकी सगमरमरकी वडी दूकान है, और हरविलासजी जिनकी कपड़े और गल्लेकी आढ़त है, और वसलजी जिनके

सगमरमरके कारखाने है और जिन्हे मैने अपनी पहली पुस्तक समर्पित की है, और शकरलालजी जिनकी कपडे और कचौडियोकी मशहूर दुकानें होते हुए भी चित्रकलामे अच्छी महारत हो गई है, और वकील साहब हीरालालजी जो वकालतके साथ-साथ दूसरे भी कारवारोमे दखल रखते है, और नागचन्द जी जो कोयलेके व्यापारी होते हुए भी साफ कपडे पहनते है, और श्यामसरन जी जो अपने दिलकी चुलबुली मिठासोको सरलतापूर्वक कलमके रास्ते कागजपर उतार देते है और कुँवर दरवारीलाल जैन जो अपने लोहेके कार-वारके साथ-साथ कानूनी दरवारमे भी एक वाइज्जत दखल रखते है, और रामगोपालजी जो कि शायद योगाभ्यासकी कद्रका हम सबसे अधिक समझते है, और अपने इन मित्रोके अलावा दूसरे दर्जनो दोस्तोके लिए, और उन सैकडो परिचितो-अपरिचितो के लिए जो कि आगे चलकर मेरे परिचित और मित्र बनेगे—उन सबके दिलबहलाव, वातचीत, बहस-मुवाहसे, समय कटाव, दिलदिमागके बढाव और कुछ-न-कुछ लाभके लिए मै ये लेख लिख रहा हूँ। जिनके लिए मै ये लेख लिख रहा हूँ उन्हे शास्त्रके अध्ययन, गुरुओ के सत्संग और योगाभ्याससे कोई विरोध नही है, वल्कि वे इन्हे अच्छी चीजें समझते है और उनमेसे किसी-किसीके दिलमे तो गुरु और भगवान्के लिए बहुत गहरी भक्ति और तडप भी मौजूद है। लेकिन थोडी-सी रुकावट यह है कि उनके पास दूसरे जरूरी कारवारकी वजहसे इन वातोके लिए फुर्सत नही बचती। जिनके लिए मै ये लेख लिख रहा हूँ उनकी तवीयते मेरी तवीयतसे बहुत कुछ मिलती-जुलती है। कितावोमे लिखे हरेक सूरमा, भक्त, देशभक्त और ईमानदार प्रेमी के लिए आदर सहानुभुति, और हरेक दुष्ट और विरोधी के लिए नफरत उनके दिलोमे जाग उठती है। अच्छी मनोरजक पुस्तको को पढ़नेके लिए वे कभी थोडा समय निकाल लेते है। जिन्दा-दिली, सुन्दरता और स्वस्थताकी कदर और जिम्मेदारीका लिहाज़ और अपने आगे पीछेका कुछ ध्यान उनके दिलोमे है। आपसी मेल-मुहव्वत और सग साथकी सैर-तफरीहमे उनकी मेरी ही जैसी दिलचस्पी है। अलवत्ता एक वातमे मै

उनसे कुछ आगे वढा हूँ और उनसे अधिक भाग्यवान हूँ। वह यह कि मेरे पास उनके मुकाबले फुर्सत कुछ ज्यादा है और दुनियाके कारोवारका वोझ कुछ कम है।

इसलिए मे ी भी यह जिम्मेदारी है कि मैं अपनी इस ज्यादा फुर्सतसे कुछ नतीजे निकालकर उनमे अपने इन मित्रोका भी हिस्सा वटाऊँ।

ऊपर मैने जिन मित्रोके नाम लिखे है वे सव आगरेकी स्थायी मित्र समितिके सदस्योमे से है और सौ-सौ और दो-दो सौ रुपये देकर उस समितिके सदस्य वने है। उन्हे सभा-सोसायटीकी कदर है। महीनेमे एक या दो वार ये सव तीन घण्टे के लिए इकट्ठे होनेका समय निकाल सकते है। और हर अच्छे विपय पर वात-चीत करनेके लिए तैयार हो सकते है और वात-चीत कर सकते है और उस वात-चीतसे अपने और अपने मित्रोके लिए नतीजे भी निकाल सकते है और उन्हे सुभीतेके मुताविक अमलमे भी ला सकते है। और अगर इस स्थायी मित्र समितिके प्रेसिडेण्ट हीरालालजी अपनी इस हैसियत पर एक बार भी पूरी निगाह डाल ले और इसके सैक्रेटरी काशीवावू अपनी वादशाहो वाली आलसकी आदत छोड दे तो इस वीसवी सदीके भीतर ही यह समिति अपना काम शुरू कर सकती है, वरना समिति को उस समय तक इन्तजार करना पडेगा जवतक मेरा प्रेसिडेण्ट या सैक्रेटरी होनेका नम्बर न आये। मै यह कोई हँसीमजाक या छोटी-मोटी सस्थाकी वात नही कह रहा हूँ—यह एक गम्भीर और मजवूत चीजकी वात है और आप भी, जो इन पक्तियो को पढ़ रहे है, चाहे तो इस समिति के मेम्वर अभी तक न हो तो अव वन सकते है और बिना सौ दो सौ की फीस दिये भी वन सकते है।

इस समितिके मेम्वर मुझे अपना कर्जदार समझते है और अगर वे नही समझते तो म ही अपने आपको समितिका कर्जदार समझता हूँ।

समितिके मेम्वरोंको छोडकर मै आगे-आगे ज्ञान, भक्ति, मुक्ति, ईश्वर आदि कोई भी चीज अकेले नही पा सकता।

उस कर्ज़की अदायगीमे ही मैं उनके और उन जैसे दूसरे सबोंके लिए ये लेख लिख रहा हूँ और चूकि आमतौर पर उन लोगोकी कहानी-उपन्यास जैसी चीज़ोमे कुछ-न-कुछ दिलचस्पी है इसलिए मैं कहानी-उपन्यासके तौर पर ही ये लेख लिख रहा हूँ ।

मेरे इन महाजनोमे आप भी आसानीसे ही नाम लिखा सकते है--अगर आपकी शास्त्रोंके अध्ययन, गुरुओके सम्पर्क और योगाभ्यासके साधनमे अभी तक कोई खास पैठ न हो पाई हो ।

मेरे उन आक्षेप करने वाले आदरणीय मित्रने भी अब मुझे आज्ञा दे दी है, इसलिए मैं अगले लेखमे अपना सिलसिला जारी करूँगा ।



बड़ा काम

जहाँ बैठकर मैं ये लेख लिखा करता हूँ उस जगह से करीब तीन सौ फीटकी दूरी पर और सौ फीटकी निचाईपर जमनाके पानीमे कुछ धोबी कपडे धोया करते हैं। उनमेंसे एक धोबीकी तरफ, जो मेरा परिचित हो गया है, अक्सर मेरा ध्यान खिच जाया करता है। वह करीब चालीस सालका एक हट्टा-कट्टा आदमी है। बडा खुशमिजाज है, सब धोबियोसे खूब हेल-मेल रखता है। गधेपर लादी भारी हो तो खुद पैदल चलकर ही उसे हाँकता है। किसी मालिकका कपडा दो दिनसे ज्यादा अपने तन पर नही रोकता, और अपनी बीबीको, जोकि पहलीके मर जानेकी वजहसे दूसरी है और बिल्कुल नौजवान और काफी खूबसूरत है, बहुत प्यार करता है और उसपर कभी भी गुस्सा नही करता, और कभी-कभी कुछ एकान्त पाकर या ओट करके उसे घाट पर भी, अगरेजी पढे-लिखोके तरीके पर कान के पास मुह ले जाकर प्यार भी कर लेता है। पहली बीबीसे उसका एक छोटा बच्चा है, जिसे दोनो जने जान-प्राणकी तरह सँभाल कर रखते हैं। घाटपर एक बडी टोकरीको खडी करके उसके सायेमे उस बच्चेको उसकी नई माँ लिटा देती है। और घण्टे-घण्टे बाद उस टोकरीपर पडे हुए गीले कपड़ेको बदलती रहती है। धोबी कपडे धोता है और धोबिन धुले कपडो की और बच्चेकी सँभाल करती है और वह सिर्फ उतनी ही देर कपडे फीचने पानीमे घुसती है जितनी देरके लिए धोबी अपने बच्चेको खिलाने और मन-बहलाव करनेके लिए बाहर आता है।

इस धोबीसे इसी लेखमे आगे मेरा और आपका काम पडना है, इसलिए पहलेही मैंने इसकी चर्चा कर दी है।

इन पंक्तियोको लिखनेसे करीब एक साल पहलेकी बात है जब कि मैं यही बैठा हुआ अपनी पिछली पुस्तकका एक लेख लिख रहा था कि

मि. वी. एक नये सज्जन मि. आर. को लेकर उधर आ निकले और उन्होंने यह कह कर मेरा उनका परिचय कराया कि मि. आर. उनके नये गुरुभाई और गहरे दोस्त हैं। उनका सोने-चांदीका व्यापार है, ज्ञान और वैराग्य की तरफ उनका बहुत ध्यान है, वह हाल ही में अपनी उस ज्ञान और तेज चाहकी वजहसे मि. वी. के एक स्कूलमें भरती हो गये हैं। उस विषय के प्रोफेसरने मि. आर. की पढाईमें मदद करनेका काम मि. वी. को ही सौंपा है। बातों-बातोंमें मि. वी. ने यह भी बताया कि मि. आर. को अपने धन्धेसे भी वैराग्य हो गया है और वह अब दुकानका काम अपने भाइयोंको सौंपकर कोई दूसरा, अधिक ऊँचा और सात्विक ढंगका काम करना चाहते हैं। रुपया कमानेकी अब उन्हें इच्छा और आवश्यकता नहीं है—वह उनके लिए पहले ही काफी है। चूंकि कुछ काम हरेक आदमी को करना चाहिए, इसलिए वह किसी अच्छे कामको हाथमें लेना चाहते हैं।

"मुझे तो आपसे डाह होता है" मि आर ने मुसकराते हुए कहा, "आपका जीवन कितना सुन्दर है! यह पवित्र स्थान, जमुना का किनारा, यहाँ आप स्वच्छन्दताके साथ सोसायटीकी उलझनों और भीड़-भाड और शोर-गुलसे अलग होकर स्वाध्याय करते हैं और सुन्दर-सुन्दर लेख लिखते हैं और इसीसे अपनी रोटी भी कमाते हैं। स्वार्थका स्वार्थ और परमार्थका परमार्थ। मैं भी ऐसा ही जीवन बिताना चाहता हूँ।"

"मैं इस जीवनमें हिस्सा बटानेके लिए आपका खुशीके साथ स्वागत करता हूँ" मैंने अपनी कापी और पेन्सिल उनकी तरफ बढाते हुए कहा, "आप भी बेशक मेरी ही तरह लेख लिखिये, स्वाध्याय कीजिये और जिस घरमें मैं रहता हूँ उसीमें आकर रहिये भी। उसमें आपके भरके लिए काफी जगह बाकी है।"

लेख ही लिखने मुझे आते होते तो फिर क्या बात थी। तब तो शायद आप यहाँ बादमें आते और मैं पहलेसे ही मौजूद होता" मि. आर. ने जवाब दिया।

"यह कोई बडी बात नही, आप चाहेंगे तो मैं आपको सिखा लूँगा' मैंने कहा।

"लेकिन आप जो इन्हे सोसायटीकी भीड़-भाडसे दूर और स्वच्छन्द समझ रहे हैं सो बिल्कुल गलत बात है" मि. बी ने चलनेके लिए मि आर. का हाथ पकडकर उन्हे उठाते हुए कहा, "यहाँ आकर तो यह हज़रत और भी ज्यादा सोसायटीकी भीड-भाड और हलचलोमे घिरे रहने लगे हैं। आप जानते नही, आदमी जितना ही जिन लोगोकी बात सोचता है उतना ही उन लोगोंके बीचमे रहता है। यहाँ आकर यह अपने दोस्तो और परिचितोंकी क्या, सैकडो हजारो अपरिचितोकी बात सोचने और लिखने लगे हैं। अगर आपकी दिव्य दृष्टि जगी होती तो बीस मिनट पहले आप इस जगह पचास आदमियोंकी शक्लें देख लेते।"

यह कहते-कहते वे दोनो नीचे मैदान तक पहुँच गये थे।

उनके आनेके समय करीब बीस मिनट पहले मैं अपने कुछ ऐसे परिचितोकी सूची बना रहा था जिनके लिए मेरा उस समयका लेख उपयोगी और रुचिकर हो सकता था।

उसदिनसे करीब दो महीने बाद मि बी ने मि. आर. के साथ दोबारा मुझे दर्शन दिये। बीचके इतने दिनोके समाचार देते हुए मि बी ने बताया "चूंकि मि. आर इस ऊँचे अध्ययनके नये जीवनमे प्रवेश पाने पर पुराना काम छोडकर कोई अच्छा बडा काम हाथमे लेनेके लिए उत्सुक थे, इसलिए इस मामले पर अपने अध्यापकके साथ हम दोनोंने बैठकर काफी विचार किया और अन्तमे यह तय हुआ कि मि आर पशु-रक्षाके आन्दोलनमे, जिसमे बड़े-बडे राजा-महाराजाओ तकका हाथ था, भाग लें। मि आर ने करीब एक महीने इस आन्दोलनके सिलसिलेमे दौरा किया, इसमे इन्हे जनता और राजाओकी ओरसे सम्मान और सहयोग भी मिला। लेकिन इस एक महीनेकी दौड-धूपमे ही कार्यकर्त्ताओके साथ कुछ अनबनके कारण नका मन इस कामसे फिर गया। अब इन्हे किसी और कामकी तलाश है जिसमें इनका आध्यात्मिक लाभ भी साथ-साथ हो।"

"जिस बातके चुनावमे आपके प्रोफेसर साहबने इतना सहयोग दिया उसके निर्णयमे मुझे उनमे कुछ बेहतर नतीजेकी आशा थी" मैने मि बी. और मि आर के उन प्रोफेसर साहब पर कुछ कटाक्ष-सा करते हुए कहा ।

"तुम समझते नही, उनकी यही शैली है" मि बी ने सधे हुए स्वरमे मुझपर एक पैनी-सी निगाह डालते हुए कहा ।

मुझे अपने उस आक्षेपके लिए कुछ लज्जित होना पडा ।

"आप भी इनके लिए कोई अच्छा काम सोचिये" मि बी ने अपना स्वर बदलते हुए कहा ।

"मै भला क्या काम बताऊँ ? लेख लिखने इन्हे आते नही । यह अगर धोबीका काम करना चाहे तो मै इन्हे उस आदमीके साथ लगा सकता हूँ" मैने उसी धोबीकी ओर, जिसकी मै ऊपर चर्चा कर आया हूँ इशारा करके अपने इस मजाककी हँसीको भीतर ही दबाते हुए कहा । "वह मुझे एक बहुत अच्छा आदमी साबित हुआ है और धोबियोका काम भी मुझे बहुत सतोगुणी मालूम होता है ।"

"आपकी यह दूसरी तजवीज कुछ जानदार मालूम पडती है" मि. बी ने पूरी गम्भीरताके साथ कहा, "आज ही मै इस सुझावपर मि. आर. के साथ विचार करके प्रोफेसर साहबकी इस पर सलाह लूँगा ।"

फिर थोडी-सी बातचीतके बाद दोनो चले गये ।

अगले-ही दिन मेरे आश्चर्यका ठिकाना न रहा जब मेरे इन दोनो दोस्तोने आकर मुझे बताया कि प्रोफेसर साहबने मि आर के लिए धोबी वाले कामको बहुत पसन्द किया है । मि बी ने कहा :

"मि आर ने इस कामको इसलिए स्वीकार कर लिया कि वह बार-बार अपने इरादे नही बदलना चाहते, प्रोफेसर साहबको बार-बार इस सोच-विचारकी तकलीफ नही देना चाहते और अपनी तबीयत पर जोर डालकर चाहते है कि आखिर इस नीच कामसे भी देखे क्या नतीजे निकलते है ।"

उसी समय मैंने अपने दोस्त उस धोबीको बुलाकर अपने नये मित्र को सौंप दिया। बड़ी कठिनाईसे मेरी बातों पर विश्वास करनेके बाद उसने बहुत हिचकके साथ उन्हें रखना स्वीकार कर लिया।

मि आर. तबसे उसके साथ काम कर रहे हैं और उसके मकानके बगलकी ही कोठरीमें रहते हैं। धोबीको यह नहीं बताया गया कि वह कोई बड़े अमीर या ज्यादा पढ़े-लिखे आदमी हैं। वह पूरा समय लगा-कर धोबीके साथ काम करते हैं।

उनके सहारेकी वजहसे धोबीका काम यानी आमदनी ड्योढी हो गई है और कुल आमदनीमें रुपयेमें दो आनेका उनका हिस्सा है। उसके घर तबसे दो गधे भी बढ गये हैं और धोबीको अब कभी पैदल घर नहीं लौटना पडता। धोबीकी नई बीबीको उन्होंने, शायद एहतिहातके खयाल से, अपनी बहन बना लिया है और साढे तीन प्राणियोंका यह एक बडा ही सुखी परिवार बन गया है।

मि आर. की इन दिनों यह एक महान् साधना चल रही है और वह दुनियामें बड़े-बड़े काम कर रहे हैं। क्या इस बातकी आप कल्पना, इस प्रकारका विश्वास कर सकते हैं? इसकी सचाईको आप खुद समझ सकते हैं? मैं इसे कुछ स्पष्ट करनेकी कोशिश करूँगा।

मि. आर. जबसे मेरे मित्र धोबीके साथ काम करने लगे हैं तबसे धुलने के बाद कपडे जिस जमीनपर सुखाये जाते हैं उसके बारेमें यह विशेष ध्यान रक्खा जाता है कि वह साफ-सुथरी हो, कपडोंपर इस्तरी कुछ अधिक नफा-सतके साथ की जाती है और उनकी तह करनेमें शिकनसे बचाव यानी 'क्रीज' और परतोंकी बराबरीका विशेष ध्यान रक्खा जाता है। कपडे ठीक समय पर मालिकोंके घर पहुँचाये जाते हैं और गलत वायदे नहीं किये जाते। धोबी और उसकी पत्नीने मालिकोंके कपडे पहनना धीरे-धीरे बिल्कुल छोड़ दिया है। कपड़े खोते तो पहले भी बहुत कम थे लेकिन उनका खोना करीब-करीब बन्द और फटना भी बहुत कम हो गया है। तेजाबी मसालेका प्रयोग बन्द कर दिया गया है और धोबीकी पत्नी किसी-किसी

मालिकके किसी-किसी हल्के फटे कपडेको कभी-कभी रफू भी कर देने लगी है। इससे उन मालिकोका ध्यान इस धोबीके परिवारकी ओर कुछ अधिकता के साथ आकृष्ट हो गया है।

यह सब मि. आर. की वदौलत ही हुआ है। मि. आर. की वदौलत जो-जो कुछ हुआ हे उसका भीतरी पहलू ऊपर लिखी वातोसे कही अधिक महत्त्वपूर्ण है।

जिन परिवारोंके लोगोके कपड़े मि आर. के हाथोसे निकलते है, उन सवके साथ उनका एक झीना, उन लोगोको अज्ञात, लेकिन स्पष्ट और स्थायी सम्बन्ध जुड़ गया है। उन परिवारोकी सख्या पहले ३६ थी और इन पंक्तियोको लिखते समय ६३ और उन लोगोकी कुल सख्या १६० है। इन १६० व्यक्तियोमेंसे १४२ की शकल अभी तक मि. आर ने नही देखी।

मि. आर. सिर्फ कभी-कभी ही किसी-किसी मालिकके घर कपड़े लेने-देने जाते है। और वह तव, जव किसी वजहसे वादेके समय पर हमारा प्रधान धोवी उनके पास नही पहुँच पाता।

अपने मालिकोके साथ इतने कम परिचयके वावजूद भी मि. आर. के हाथो ज्यो-ज्यो उनके कपड़े निकलते और समय वीतता जाता है त्यो-त्यो उनके साथ उनका उतना ही अधिक सम्पर्क वढता जाता है। मि. आर. के हाथो धुले, इस्तरी किये या तह किये कपड़ोको पहनने वालोके स्वास्थ्य, स्वभाव और समझदारीपर उनका कुछ न कुछ असर पडता है और वह असर हमेशा अच्छा ही होता है।

और मि. आर. का यह कपड़ोका कार्य इसी तरह जारी रहा तो एक समय ऐसा आ जायगा कि उनके हाथो धुले कपडे पहननेपर वीमार एक-दम अच्छा हो जाय और चिडचिडे स्वभाव वालेके मुँहसे फूल झड़ने लगे। आप इसे असम्भव समझते है? लेकिन ऐसी दो घटनाएँ इस समय तक भी हो चुकी है।

एकबार जब वह जरूरत पड़ने पर किसी घरमे कपडे देने गयेतो उस समय उस घरकी सास और बहूमे बडी अशोभन-सी लडाई हो रही थी। वह नौजवान बहू सुन्दर और बहुत मधुर स्वर वाली होती हुई भी बडे कर्कश, कठोर शब्दोमे अपनी साससे लड रही थी। घरकी मालकिन यानी उस सासके बेटे और बहूके पतिने कमरेसे बाहर आकर मि. आर से कपडे लिये और उनके मुँहसे दुखित स्वरसे निकल पडा—

"कैसी मर्दानी औरतसे पाला पडा है !"

"यह साडी जम्पर उन्हे पहनने दीजिये, सब ठीक हो जायगा" मि. आर ने कुछ दबे स्वरमे उडते-से शब्दोमे एकबार बाबूजीको भर आँख देखकर कहा। फिर अपना तौर और स्वर बदलकर कहते गये, "बहूजी को ये दो कपडे आज दस बजे तक पहुँचाने थे, सो लाया हूँ। आपके पडोस वाले वकील साहबकी लडकीको बहूजीके इस जम्परके गलेकी काट बहुत पसंद आ गई सो उसने इसका नमूना कागज पर उतारनेके लिए इसे ले लिया और मुझे घण्टे भर इसी वजहसे उनके घर बैठना पडा, नही तो मै दस बजे ही ये कपडे पहुँचा देता। इसके गलेकी काट है भी बहुत सुन्दर।"

अपने पतिके पीछे-ही-पीछे बहूजी भी काफी पास आ गयी थी। और उन्होने मि आर की करीब-करीब पूरी ही बात सुन ली थी। उनकी बातके शुरूआती हिस्सेपर बाबूजी कुछ चौंके भी थे। लेकिन उसको साफ समझानेके लिए कुछ कहने-पूछनेका निश्चय जबतक करे तबतक मि आर वहाँसे जा चुके थे।

और उस दिनसे काफी तेज रफ्तारीके साथ, उस सुन्दर नौजवान पत्नीका स्वभाव बदलने लगा था। उस सुन्दर कटावके गलेवाले जम्पर को पहननेवाली उस रमणीके सुन्दर गलेसे असुन्दर शब्द निकलने धीरे-धीरे करके समाप्त हो आये है।

अपने जिन मित्रोसे मैने इस घटनाकी चर्चा की उनमेसे एकको छोड कर और किसीने इसपर विश्वास नही किया। मेरे जिस मित्रने इसे सच माना, वह सेक्स और मनोविज्ञानके खासे मर्मज्ञ है। उनका कहना

है कि मि आर खुद सुन्दर, स्वस्थ, सुशिक्षित अभी ३२ सालके युवक हैं और उनकी बातचीतके ढगमे प्रभाव और भावुकता है, और चूँकि सभी का हृदय अपनी भीतरी-बाहरी सुन्दरताकी कदर और प्रशसाका आम तौर पर भूखा होता है, और पुरुष-सौन्दर्यकी ओर स्वाभाविक आकर्षण के साथ साथ वैसे किसी पुरुषके द्वारा अपनी कदर उसे और भी अधिक प्रिय होती है इसलिए उस युवतीका मि आर. से प्रभावित होना स्वाभाविक है। जिससे कोई व्यक्ति प्रभावित होता है उसके 'सजेशन' यानी सकेत को आसानीके साथ ग्रहण कर लेता है। मि आर ने सुन्दर गलेकी बात कहकर मीठे और कोमल शब्द बोलनेका सकेत उस युवतीके प्रति जरूर अपने मनमे उठाया होगा और इसीलिए यह बात उसके मनमे उतर गई होगी और इसका प्रभाव उसके व्यवहार पर पड़ा होगा।

मेरे उक्त मनोविज्ञान-विशारद मित्रकी दलीलसे मेरे दूसरे भी कई मित्र अब इस मामलेमे सहमत है। लेकिन मि बी का कहना है कि इस मामले मे मेरे मनोवैज्ञानिक मित्रका विचार बहुत कम अशमे ही ठीक है।

मि. बी. का कहना है, इस मामलेमे सेक्स और मनोविज्ञानकी प्रेरणा नही बल्कि एक और ही चीज काम करती है। वह एक सूक्ष्म, तरल-सी चीज है जो उनके हाथोकी उँगलियोकी राह बहकर उन सब कपडोमे समा जाती है जिनकी वह तह या इस्तरी करते है। वह चीज उनके भावो और विचारोसे भी सूक्ष्म होती है और उसे शायद एक रूपमे चुम्बकीय शक्ति या 'मैगनेटिज्म' कहा जा सकता है। इस चुम्बकीय शक्तिके साथ मि. आर के जो विचार या भाव मिले हुए होते है उन्हे इन तीन वाक्योमे व्यक्त किया जा सकता है—

१ इस कपड़ेका पहननेवाला मेरा प्रिय और आत्मीय है। वह मेरा परिचित हो या अपरिचित, वह है मेरा अपना ही। इस कपडेके द्वारा मैं अपने मनका यह सदेश उसके पास भेजता हूँ।

२ इस कपडेका पहननेवाला सुखी और प्रसन्न रहे और दूसरोके

अधिकाधिक प्रेमके योग्य बने। इस कपडेके द्वारा मै अपना प्रेम और प्रोत्साहन उसके पास भेजता हूँ।

३. इस कपड़ेका पहननेवाला ईश्वरीय आत्माका अश है और महान् है। भले ही वह इस सचाईको अभी कितना ही कम जानता हो। इस कपड़ेके द्वारा मै उसके पास अपनी श्रद्धा और ईश्वरीय प्रबन्धके सचालक गुरुजनोका आशीर्वाद भेजता हूँ।

और मि. आर. के हाथो निकले हुए प्राय: सभी कपड़ो-द्वारा इन तीन तरहकी भावनाएँ उन पहनने वालोके पास कम या अधिक अशमे पहुँच जाती है। निस्संदेह इनके अलावा कभी कभी किन्ही कपडोके साथ मि. आर. के व्यक्तिगत सदेश भी किसी-किसी पहनने वालेके पास पहुँचते है। और इनमेंसे कोई भी अपना गुप्त या प्रकट प्रभाव किये बिना नही रहता।

अब आप देख सकते है कि मि. आर. कितना काम कर रहे है। यह बिल्कुल सच है कि उहे खुद अपने इन महान् कामोका पूरा पता नही है।

मि आर. के कामोका फल प्राय. जिस तेजीसे होता है वह आश्चर्यजनक है। जिस दूसरी प्रत्यक्ष फलवाली घटनाकी मुझे चर्चा करनी थी, वह इस धोबी परिवारके एक ग्राहकके बीमार बच्चेकी बात थी।

"तुम बच्चेके कपडे धोकर लाये हो, वह तो बेचारा चार दिनसे निमोनियामे बेचैन तडप रहा है—इन कपडोकी अब इतनी जल्दी क्या थी" बच्चेकी माँने आँखोमे आँसू भर कर मि आर से कहा।

बच्चेका खटोला मि आर की आँखोके सामने था, "आप उसके कपडे बदलवाइये, इतनी उदास न होइये। बच्चा जल्द अच्छा हो जायगा" मि. आर ने कहा और उनके स्वरमे बच्चेकी माँने कुछ महसूस किया।

बच्चेको धुले हुए कपडे पहनाये गये। उसी समयसे उसकी हालत सुधर चली और तीसरे दिन वह बिल्कुल अच्छा हो गया।

उस रमणीके स्वभाव-परिवर्तन और इस बच्चेके स्वास्थ्य-लाभमे मि. आर. की शुभ कामनाओका गहरा हाथ था, कुछ अन्य खोजोसे मै इस नतीजेपर पहुचा हूँ।

मि. आर. के ६२ मालिकोंमेंसे ८ अब ठीक समय पर और बिना किसी तरह की काट-छाँट किये उनकी मजदूरी चुका देते हैं। मि आर. का कुछ लिहाज उनके दिलोंमे हो गया है। मि आर. के ही नहीं, दूसरे सभी लेनदारोंके पैसे अब इन घरोंसे ठीक-ठीक मिलने लगे हैं।

मि. आर. के महान् कार्योंकी यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण सफलता है।

आप इसे कोई छोटी बात समझते हैं ?

मेरे एक मित्रने मोटा हिसाब लगाया है कि अगर हिन्दुस्तानके मालिक अपने नौकरोंको और काम करने वालोंको ठीक समय पर पैसे दे दिया करें तो उनकी आमदनी १२॥ फी सदी और उनकी नेकनामी और सुविधाएँ ३३॥ फी सदी बढ जाये और चक्रवृद्धिके किसी फार्मूलेके अनुसार तकाजे और बट्टेखातेकी मदोंमे बरबाद होनेवाली उनकी रकमोंका ७५ प्रतिशत बच जाय।

मौजूदा ज़मानेके एक बहुत बड़े भारतीय गुरुने अध्यात्म-पथके जिज्ञासुओं के लिए जो सार रूपमे सदेश एक बहुत छोटी-सी पुस्तिकामे दिया है उसमे यह भी सकेत किया है कि लोगोंको अपने नौकरोंकी तनख्वाहे ठीक समय पर दे देनी चाहिएँ। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि समय पर तनख्वाहे या मज़दूरियाँ न अदा करना भी कोई बहुत व्यापक बुराई है और इस बुराईसे छुटकारा पाना कोई बड़े महत्त्वकी बात है।

उस पुस्तकका अनुवाद ससारकी प्राय सभी भाषाओंमे हो चुका है और कई भाषाओंमे उसके दर्जनो सस्करण निकल चुके हैं। वह पुस्तक अँगरेज़ी भाषामे लिखी गई है, उसका नाम 'ऐट दि फीट आव् द मास्टर' मूल्य करीब ६ आने है, और जिन महात्माका वह सदेश है उनका नाम महात्मा के. एच है, वह जातिके कश्मीरी ब्राह्मण है और मिस्टर वी. के. विश्वासके अनुसार पिछले एक जन्ममे वह ही यूनानके प्रसिद्ध धर्मगुरु पाइथागोरस थे।

"यह एक मनोरंजक समाचार है। मै आज ही एक कार्ड लिखकर यह पुस्तक मँगा लूँगा। आप यह और बता दीजिए कि आपके वह मित्र

महोदय कौन है जिन्होंने ठीक समय पर तनख्वाहे न मिलनेकी वजहसे होने वाले नुकसानोको फीसदीके हिसावमे निकाला है।"मेरे मित्र मिस्टर सी. कह रहे है।

मिस्टर सी. के इस सवालका जवाव देनेके लिए मै वाध्य नही हूँ। दोस्तो और अपने वरावर वालोकी जो चर्चा मेरे लेखोमे आ जाती है उन सवके नाम और पते-ठिकाने मुझे याद ही वने रहे, यह कोई जरूरी नही है। अलवत्ता एक जिम्मेदार लेखकके रूपमे मै किसी महापुरुष या महान् ग्रन्थके नाम पर कोई ऐसी वात नही कह सकता जिसका हवाला अपने किसी भी पाठकके पूछने पर न दे सकूँ।

इस पगडडीको छोडकर अव आप अपने चौड़े रास्ते पर आइये। मिस्टर आर. ने आठ आदमियोको इस वातके लिए प्रभावित कर लिया है कि वे ठीक समय पर लोगोंके पैसे चुका दिया करे।

उनका यह प्रभाव आठ आदमियो तक ही सीमित न रहकर कम-से-कम आठ लाख आदमियो तक पहुँचेगा।

उन आठ आदमियोके वाद प्रभावित होनेवाला नवाँ आदमी शायद मै हूँ जो कि इन पंक्तियोको लिखनेके लिए आज पहली वार पहली तारीख को ही अपने दूध वालेका (क्योकि नौकर मेरा कोई है ही नही) हिसाव साफ करके ये पंक्तियाँ लिख रहा हूँ; और मेरा अनुमान है कि इस पुस्तकके छप जाने पर कम-से-कम अस्सी आदमियो पर इसका प्रभाव पड जायगा और इसी तरह आदमियोसे आदमियोको यह प्रभाव वरावर लगता रहेगा।

इन सव वातोसे आप देख सकते है कि मिस्टर आर. इस धोवी-परिवारमे काम करते हुए ससारका एक वहुत वडा काम कर रहे है और अव उन्हे मालूम हो गया है कि वह कही भी, किसी भी व्यवसायमे रहकर वहुत वड़े-वड़े काम कर सकते है। वह अव मानते है कि वड़ा काम करनेके लिए किसीको अपना पेशा या स्थान वदलनेकी जरूरत नही है—आदमी जहाँ रहकर जो कुछ करता है, वही, उसी काममे वह वडे और महान् कार्य कर सकता है।

जल्दी ही मि. आर अपनी पुरानी दूकान सम्हालने जाने वाले हैं; वहाँ उनकी जरूरत भी अधिक है। और वहाँ करते हुए वह और भी अधिक लोगोंकी और भी ऊँची सेवाएँ करके मौजूदासे भी अधिक महान् काम कर सकते हैं।

मिस्टर आर. इन दिनों उसी इमारती गुफाकी निचली छत पर बैठकर रोजाना एक घंटा अपनी उपासना और स्वाध्याय करते हैं जिसकी ऊपरी छत पर बैठकर मैं करता हूँ। मिस्टर आर. को लेख लिखने नहीं आते; लेकिन जब कभी मैं निचली छत पर उतर कर, मिस्टर आर की गैरहाजिरी में उनके बैठनेकी जगह पर सिर रखकर लेट रहता हूँ, तब मेरे मनमें अपने लेखोंके लिए बड़े सुन्दर सुन्दर नये विचार उठने लगते हैं!



माला यों फेरिये

एक दिन मैंने अपनी पत्नीको लाल पत्थरका एक छोटा-सा टुकडा लाकर दिया।

"बच्चोका खिलौना !" उसने उसे हाथमे लेते हुए कहा और बरतनो की अलमारीमे एक तरफ डाल दिया।

दूसरे दिन मैंने उतना ही बड़ा लेकिन हरे रंगका और कुछ दूसरी शक्लका एक दूसरा पत्थर उसे दिया।

'बेकारकी चीज़' उसने लापरवाहीसे कहा और उसे लेकर मेज पर मेरी किताबोंके बीच लुढका दिया।

तीसरे, चौथे, पाँचवे, छठे, सातवे और आठवे दिन भी मैंने एक-एक नये रंग और नई शक्लका पत्थर ला-ला कर उसे दिया और उसने किसीको कही और किसीको कही उसी प्रकार फेंक दिया। आठवे दिन उसने झुझलाकर कहा :

"यह भी कोई सयाने आदमीका खेल है ? आप जमना किनारे लिखने-पढने जाते है या कंकर-पत्थर बीननेमे समय बरबाद करते है ?"

नवे दिन मैं नवे रंग और नवी काटछाँटका पत्थर लाया। चुपचाप पिछले आठ पत्थर ढूढ-ढूढ कर इकट्ठे किये और एक थालमे नवोको एक खास सिलसिलेसे सजा कर रख दिया। उन्हे इस तरह रखते ही वे एक दूसरेसे बिलकुल सट कर एक अत्यन्त सुन्दर चन्द्राकार-सी मालाके रूपमे बन गये। पत्नीकी दृष्टि जब उस थाल पर पडी उसने झपट कर वे सब पत्थर समेट लिये और कुछ देरकी कहा-सुनीके बाद यह निर्णय हुआ कि वह मुझे पाँच रुपयेका एक नोट देगी और मैं अगले दिन बाजारसे जैसे भी हो सके उन पत्थरोको मजबूत चादी या रेशमके तागेमे पिरोकर उनकी माला बनवा लाऊँगा।

इस प्रकार मेरी पत्नी नवे दिन यथेष्ट वुद्धिमती वन गई।

लेकिन मेरी आशा है कि आप जो इस पुस्तकके दूसरे खडके आठ लेख अभी तक पढ आये हैं, प्रारभसे ही उतने वुद्धिमान (या वुद्धिमती) अवश्य हैं जितनी मेरी पत्नी नवे दिन हो पाई थी।

पिछले आठ लेखोको एक साथ मिलाकर देखनेसे निस्संदेह एक निश्चित-सी विचारधारा वन जाती है।

उस विचार-धाराकी हैसियत यद्यपि मोतियो या रत्नोकी मालाके वरावर नही है, फिर भी रंग-विरगे पत्थरोकी एक सुन्दर 'डिज़ाइन' की मालाकी तरह सुन्दर अवश्य है।

जमनाकी रेतीमे उस तरहके रग-विरगे और एक ही आभूपणके आकार मे सट कर वैठ सकने वाले पत्थर नही मिल सकते; वास्तवमे वे पत्थर किसी व्यक्तिके मालाके उस जगह टूट कर विखरे हुए टुकड़े ही थे और एक-एक करके मेरे हाथ लग गये थे।

हो सकता है कि मेरे पिछले आठ लेख भी किसी निश्चित विचार-धारा की गति-पूर्ण लहरे निकल सके।

प्रेम हर समय और हर हरे और सूखे मौक़ेकी चीज है—यह इस पुस्तक के दूसरे खडके पहले लेखका अभिप्राय है।

प्रेमका सम्वन्ध जीवनसे है और जीवनका यौवन से; जीवन कभी वूढ़ा या कमजोर नही होता—दूसरे लेखका अभिप्राय है।

प्रेमके कई दर्जे हैं और हर दर्जेका आवश्यक स्थान और उपयोग भी है—तीसरे लेखका अभिप्राय है।

प्रेम और ज्ञान अधिक दूर तक अकेले नही चल सकते। जहाँ एक आता है वहाँ, आगे-पीछे, दूसरेके भी दर्शन अवश्य होते हैं—चौथे लेखका अभिप्राय है।

प्रेम और ज्ञानका मनुष्यकी जीवन-यात्रासे गहरा सम्वन्ध है और अपनी उस यात्रामे एक नियम और नाप-तौलके भीतर ही वह इन दोनो चीज़ोको जगा सकता है और अपनी चाल और पहुँचका

अनाप-शनाप अन्दाज़ा लगानेकी हानिकर भूलसे बच सकता है—पाँचवे लेखका मतलब है।

ज्ञानका सम्बन्ध हमारी मामूली समझ-बूझसे अटूट है। मामूली समझ-बूझके साधनो और क्षमताओकी उपेक्षा करके हम ज्ञानकी ऊँची मंजिलो पर नही पहुँच सकते—छठे लेखका आशय है।

जानकारी (ज्ञान) के अपने साधनो और अपनी क्षमताओका पूरा उपयोग हमे ऊँची जानकारियोकी प्राप्तिके सिलसिलेमे भी करना चाहिए। ज्ञान किसी दूसरेसे प्राप्त होनेकी नही, स्वय अपने आप प्राप्त करनेकी चीज़ है और हमारा छोटा-से-छोटा साधन और विचार उसमे सहायक हो सकता है, अपने साधनोकी उपेक्षा बडे घाटेकी बात है—सातवे लेखका अर्थ है।

ज्ञान या प्रेमकी मजिलो पर बढनेका एकमात्र उपाय क्रिया-शीलता है। कोई भी कार्य छोटा या बडा नही। ठीक भावना और ऊँची जानकारी के साथ किया हुआ छोटे-से-छोटा काम भी बडे-से-बडा फल दे सकता है—आठवें लेखका सन्देश है।

और इन आठो लेखोको मिलाकर तकाजा यह है कि आप स्वतंत्र रूप से, लेकिन बुद्धिमानीके साथ प्रेम करे और दूसरोको करने दे। प्रेम और सहानुभूतिको साथ लेते हुए मन-पसद ज्ञान या जानकारियाँ प्राप्त करे, लेकिन अपनी बुद्धि या साधारण समझ-बूझके विपरीत किसी दूसरेके रोबमे न आये और जो कुछ भी करे उसीमे अपने भरपूर प्रेम या ज्ञानकी रूह फूक दे।

और अब इस नवे लेखमे आपसे क्या कहना चाहिए, मै सोच रहा हूँ।

लेकिन मै रुकूँगा। मेरा अनुमान है कि ससारमे सीख, सँदेसे और तकाज़े ही सबसे अधिक बेकार और बरबाद होनेवाली वस्तुएँ है।

मेरे एक बुद्धिमान मित्रने एक बार एक उलझी हुई, फिर भी पतेकी, बात कही थी। उन्होने कहा था—

"सीख या सँदेसा जितना ही ऊँचा और उपयोगी होता है उतना ही कम सुना-समझा जाता है, और यह जितना ही नीचा और अनुपयोगी होता है उतना ही अदेय—न देने योग्य—होता है।"

इसका बहुत कुछ अर्थ है कि सीख और सँदेसे बेकारकी चीजें हैं ।

कुछ-कुछ इसी आशयकी बात मेरे उन मित्रने पहले किसी और वयोवृद्ध—कहते समय नहीं तो अबतक सही, वह 'वृद्ध' अवश्य हो गये होंगे—बुद्धिमानने कही थी । उन्होंने कहा था—

"पूत कपूत तो क्यों धन-संचय
पूत सपूत तो क्यों धन-संचय"

बेटा यदि कपूत है तो उसके लिए बापका धन जोड़कर रख जाना व्यर्थ है, क्योंकि वह उसे जल्द ही बरबाद करके कंगाल हो जायगा; और बेटा यदि सपूत है तो भी उस के लिए धन जोड़कर रख जानेकी आवश्यकता नही, क्योंकि वह स्वयं ही अपनी योग्यतासे यथेष्ट धन कमा लेगा ।

धन वाली यह बात सीखो और सँदेसों-तकाजों पर भी बहुत कुछ लागू होती है ।

तब फिर पिछले लेखोंमे मैंने जो भी नीचे या ऊँचे सँदेसे देने या तकाजे करनेका प्रयत्न किया है, उन्हे मैं वापस लेता हूँ । आपने पिछले पृष्ठोंमे जो कुछ पढा है उसे अन-पढा कर जाइये । उसमे बहुत कुछ नीचा और 'अदेय' भी तो हो सकता है ।

और मेरे इन लेखोंको ही नहीं, अपनी पिछली पढ़ी और सुनी सभी बातोंको आप अनपढी और अनसुनी कर जायँ, यह मेरी सलाह—नही नही, प्रस्ताव—है !

आप ऐसा कर लेंगे तो अपने मामलोंको स्वयं, केवल अपनी ही बुद्धि से सोचने लगेंगे, और तब आप जो कुछ करेंगे उसमे एक नया बल और नया सुख होगा ।

अपनी इच्छा और अपने निर्णयके अनुसार आप अपने-अपने अभीष्ट प्रेमों और मन-पसद जानकारियोंकी राह पर स्वच्छन्द रूपसे, सुखपूर्वक बढ़ें ।

समाजके बीच रहते हुए सुखपूर्वक बढ़नेके लिए शायद यह आवश्यकता पड़ेगी कि आप अपने विचारोंमे पूरी और समाजके बीच व्यवहारोंमे आंशिक, केवल उतनी स्वच्छन्दताका प्रयोग करें जितनेसे आपके सुखमें बाधा न

पड़े। व्यवहारोमे जिस स्वच्छन्दताके बरतनेसे समाजको और आपको अस्वास्थ्यकर चोट लगे, उसका न बरतना ही बुद्धिमानी भी जान पड़ती है।

"विचारोमे पूर्ण स्वतंत्रता और कर्मोमे समाज द्वारा नियंत्रित"—कुछ इसी आशयका किसी बड़े व्यवस्थाकारका भी कहना है।

अपनी बातोको आप स्वयं ही सोचिये, यह नये समाजकी माँग है। बेशक दूसरोके विचारोका भी भरपूर सहारा लीजिए, लेकिन अपना निर्णय स्वयं कीजिए। केवल वेदो-शास्त्रो, महात्माओं और सुधारकोके कहनेसे ही कुछ करना आपकी प्रगतिके लिए बहुत घातक है।

यह मेरी सीख और सलाह नही, केवल एक सुझाव या प्रस्ताव-सरीखा, सूचना-सरीखा कहना है।

अगर मेरा यह कहना गलत है तो सोचिये, कैसे, ठीक है तो सोचिये, कैसे।

शास्त्रो या बडोका जो कहना आप ठीक मानते हैं वह ठीक है तो सोचिये, कैसे, और अपने मनकी जिन बातोको आप गलत मानते हैं वे गलत है तो सोचिये, कैसे !

ऊँचे-से-ऊँचे ज्ञानकी बात मामूली समझबूझके हिसाबसे गलत नही ठहर सकती; ऊँचे-से-ऊँचे गणितका नतीजा साधारण जोड़-बाकी और गुणा-भागके गणितसे गलत नही ठहर सकता।

मैं आपके सामने पिछले सब पढ़े-सुनेको अनपढ़ा, अनसुना करनेका प्रस्ताव रख रहा हूँ, तो फिर मैंने भी इतना सब लिखा किस उद्देश्य से है ?

इसका उत्तर देनेके लिए मुझे एक बार स्वय आपके सामने आना होगा और मैं आऊँगा भी।

इस पुस्तकका अगला, अंतिम लेख तो आप पढेगे ही !

क्या मैं अन्दर आ सकता हूँ ?

मैंने एक इरादा किया है—जिस समय पाठक इस अन्तिम लेख पर 'पहुँचेंगे और वे इसे पढनेका इरादा करेंगे, उसी समय मैं उनके पास पहुँचकर उनके दरवाज़े पर थपकी देकर कहूँगा—

"क्या मैं अन्दर आ सकता हूँ ?"

और उनमेसे जिन-जिनको अपने स्वभाव, सुविधा या सेक्स[1] के कारण कोई आपत्ति न होगी, उनके पास मैं जा बैठूँगा और उन्हे बताऊँगा कि इन लेखोका लेखक मैं ही हूँ ।

इस तरह मेरे इस लेखको पढनेका इरादा करते ही अपने पाठकोंके पास मेरा जा पहुँचना सम्भव भी है और कुछ विशेप कारणोंसे मेरे लिए आवश्यक भी है ।

सम्भव इस तरह है कि जब किसीके हाथमे किसी दूसरेके हाथ या दिल-दिमागकी निकली हुई कोई चीज़ होती है तो उन दोनोके बीच एक सम्बन्ध—एक तरहका सन्देश और भावनाका वाहक तार-सा—स्थापित हो जाता है। यह मनोनियमका एक प्रारभिक नियम है ।

इस सम्बन्ध स्थापित करने वाले तारसे कौन कितना काम ले सकता है यह बिलकुल अलग बात है । मेस्मरेज़म या हिप्नाटिज़म वाले अक्सर किसी व्यक्तिका रूमाल या अँगूठी अपने 'साधक' के हाथमे देकर उस व्यक्ति के बारे म बहुत-सी बाते मालूम कर लेते है ।

मैं अपने पाठकोंके हाथमे थमी हुई इस लेख वाली पुस्तकके सहारे ऐसा सम्बन्ध उनसे स्थापित कर सकता हूँ और साक्षात्, सशरीर उनके दरवाज़े खटखटाने तकका चमत्कार साध सकता हूँ या नही—यह बताकर मैं उनका

---

१ 'सेक्स' अंग्रेजीका शब्द है, जिसका अर्थ है, लिंग या लिंगभेद । हिन्दीमें इस अर्थका श्रवण-शिष्ट शब्द मुझे अभी नहीं मिला है ।

कुतूहल, सदेह, विश्वास-अविश्वास घटाना या बढ़ाना नही चाहता; लेकिन इतना अवश्य कह देना चाहता हूँ कि मेरे पाँच-सात मित्र—उन्हें अभी केवल अपने कृपालु या भावी मित्र कहना ही अधिक ठीक होगा—ऐसे है जो ऐसा कर सकते हैं, और उनमेसे एक-दो तो अभी भी मेरे साथ इतना अक्सर करते है कि जब कभी मेरे हाथमे उनका कोई लिखित सदेश होता है तब वे, उस लिखित सदेशके अतिरिक्त कुछ और सदेश भी मेरे पास उस कागज़ के सहारे भेज देते है ।

और अपने पाठकोके पास उस समय मेरा जा पहुँचना आवश्यक इसलिए है कि—

१. मैं चाहता हूँ कि मेरे इन लेखोको—और इस प्रकार मुझे भी—समझने-सराहनेमे उन्हे कोई कठिनाई या उदासीनता या अरुचि न हो; मै स्वय पहुँचकर उनके सामने सब बात स्पष्ट कर दूँ; और

२. अपने लेखोका पूरा और ठीक प्रतिभाव या प्रतिदान मुझे मिले और पाठकजन औचित्य और मेरी इच्छाके अनुरूप मुझे उसका बदला दे ।

"मैं अन्दर आ सकता हूँ ?" मैं उनसे आज्ञा माँगूगा ।

हमारे हिन्दी-भाषी भारतमे बहुतसे पाठक जहाँ अपने रूखे या 'बड़प्पन' के स्वभावके कारण या उस समय और मौकेकी किसी असुविधाके कारण मुझे अपने पास आने देनेसे इनकार कर सकते हैं, वहाँ बहुत-सी पाठिकाएँ परदा-प्रथा या लज्जा-प्रथा या सदेह-प्रथाके कारण भी मुझे अपने पास आन-देनेमे हिचकिचा सकती हैं ।

अस्तु, जिनके पास पहुँचनेकी मुझे आज्ञा मिल जायगी उनके पास मैं बैठूँगा और उन्हे बताऊँगा कि इस अन्तिम लेखका, जिसे वे पढ़ने जा रहे हैं, लेखक मैं ही हूँ; और उनसे मेरी बातचीत प्रारभ हो जायगी ।

कुछ लोग कहेगे, "आप कैसे ऐन मौके पर आये, मैं आपका यह लेख पढने ही जा रहा था । आपका इस समय आ पहुँचना एक चमत्कारसे कम नही है ।" कुछ कहेगे, "आप खूब लिखते है मैने आपके ये सभी लेख पढे हैं ।" कुछ कहेंगे "आपके आनेसे मुझे बड़ी खुशी हुई, आइये चाय

पीजिए।" कुछ कहेंगे, "क्या खूब! आप ही इसके लेखक हैं, बैठिये मैं ज़रा इसे पढ़ लूँ तब आपसे और भी बात करूँ।" कुछ कहेंगे, "आइये साहब आपसे तो मुझे बड़ी शिकायत है। आप न जाने क्या लिखते हैं कि उसका कुछ मतलब ही समझमे नही आता।" कुछ कहेंगे, "तशरीफ रखिये; फर्माइए, मैं आपकी क्या खिदमत करूँ?"

और कुछ ऐसी बाते कहेंगे जो मेरे लिए इतनी व्यक्तिगत होंगी कि उनका न लिखना ही विनय और संकोचकी सीमाके भीतर रह पायेगा।

मेरी-उनकी बातचीत किसी भी दिशामे होकर बढ़े, मैं उन्हें घुमा-फिरा कर और एक ठिकाने लाकर उनसे पूछूँगा—

आप कृपया निश्चित रूपसे बताइये कि (अ) आप मेरा यह लेख क्यो—किस लाभके लिए—पढ़ेंगे, और (ब) पढ़नेके बाद आपसे मुझे इस लेखका क्या पुरस्कार मिलेगा।

मिले हुए विविध उत्तर कुछ इस प्रकारके होंगे :

(अ) १—मनोरंजनके लिए। २—कुछ बात सीखनेके लिए। ३—ज़रा हिन्दीकी मश्क बढ़ानेके लिए। ४—आपकी मेरे एक दोस्त बहुत चर्चा कर रहे थे, इसीलिए यह देखनेके लिए कि आप कैसा लिखते है। ५—यो ही ज़रा सोनेके पहले कुछ पढ़ लेता हूँ तभी नीद आती है। ६—एक लेखके लिए कुछ मसाला ढूढ़नेके लिए। ७—शतरंजके साथी अभी तक नही आये, इसीलिए ज़रा वक्त काटनेके लिए।

(ब) १—आपको मैं धन्यवाद दूँगा इतना समय मज़ेमे कटवा देनेके लिए। २—आपकी तारीफ़ करूँगा, कुछ दोस्तोंसे चर्चा करूँगा। ३—आपके दूसरे लेख और किताबे भी खरीद लिया करूँगा। ४—अपनी पत्रिकामें आपके लेख यथेष्ट पुरस्कार देकर मँगवाऊँगा। ५—आपको ? अच्छा, आपको भी क्या कुछ ..? वैसे, यह किताब तो मैंने पैसे देकर ही ली है। ६—अजी साहब, आपको भला मैं क्या पुरस्कार दे सकता हूँ। ७—आपकी याद एक दफ़ा और ताज़ा और पक्की हो जायगी।

ये सब इस शर्तके साथ कि अगर लेख अच्छा हुआ तो !

लेकिन इन उत्तरोमेसे कोई भी मुझे पसन्द नही होगा ।

मै चाहूँगा और उन्हे बताऊँगा कि वे मेरे लेखको मनोरजन या ज्ञान के लिए न पढे । मनोरजनके लिए उसका पढना मेरी अवहेलना करना है; ज्ञान और किसी सीखके लिए उसका पढना भ्रम और मूर्खता है । मेरा लेख उन्हे मेरे साथ मानसिक रूपमे एकाकार होनेके लिए—मेरे साथ एकता, सहानुभूति, सामजस्य स्थापित करनेके लिए, मुझे ठीक-ठीक समझने के लिए पढना चाहिए । लेख पढनेका उद्देश्य कम-से-कम मेरी रुचिके अनुसार, यही है कि आप लेखकके [यहाँ पर मेरे] साथ तद्रूप, तद्भाव हो जाये । लेखमे जिस बातको मैने जिस आशयसे लिखा है उसे ठीक उसी आशयमे उसी भावमे, उतना ही—न कम, न अधिक—समझ ले । मेरे कोई-कोई मित्र मेरी किसी-किसी भावनापूर्ण पक्तिका इतना गहरा और ऊँचा अर्थ निकाल लेते है, जितनेका मुझे लिखते समय या और कभी अनुमान तक नही होता । यह भी मुझे सख्त नापसद है । मेरे ऐसे मित्र तुलसीदास की चौपाई—'**आगे चले बहुरि रघुराई । ऋष्यमूक पर्वत नियराई**' का इतना ूढ और योग-सूत्र-सम्बन्धी अर्थ निकाल देते है कि उससे तुलसीदास-जीकी आत्मा भी लजा जाती होगी . इतना ऊपर जाना भी लक्ष्यसे दूर रह जानेकी बात है । मेरा लिखना और आपका पढ़ना—यह वह साधन है, जिसके द्वारा मै और आप, यानी ससारके दो परिचित या अपरिचित हृदय किसी एक स्थल पर कुछ देरके लिए जा मिलते है । यही मानव-हृदय और मस्तिष्कके लिए वर्तमान युगमे साहित्य-रूपी साधनाकी देन है । यह आपके हृदयको विस्तृत, व्यापक, सबको आपके भीतर समाया हुआ बनानेका साधन है । इस उद्देश्य और इस प्रयासके साथ मेरे लेखको पढने मे आप अपनी चेतनाको व्यापक, सर्वग्राही बनानेका एक परम उपयोगी व्यायाम करेगे ।

मेरे इस लेखके द्वारा मेरे साथ तद्भाव होनेमे आपका बहुत बडा उठान है, चाहे मै आपसे ज्ञान और विकासमे आगे होऊँ, चाहे पीछे । मेरा मतलब समझनेके लिए, जिस समय और जहाँ बैठकर—यह आगरेके समीप

यमुना तटवर्ती कलास-आश्रम है—मैं यह लेख लिख रहा हूँ ज़रा उस पर दृष्टि डालिए। इस समय मध्याह्नकालका एक वजा है। मेरे टीलेके नीचे वहती हुई मदोन्मत्ता यमुना अपने उस दुस्साध्य यौवन पर आई हुई है, जिस पर वह सन् २४ के वाद कभी नही आई थी। जिस ऊँचे टीले पर वनी हुई इमारती गुफा की छतरी पर वैठकर मैं ये पक्तियाँ लिख रहा हूँ, उन टीलेको तीन ओरसे यमुनाने घेर लिया है। यदि पूर्वकी ओरके नाले परके पुलको उसन ोड़ लिया—जैसा कि घंटे आव घंटेकी ऐसी ही उच्छृङ्खल चेष्टाओंसे वह सहज ही कर सकती है—तो भी दक्षिणकी ओरके टीलोकी राह मैं अपने डेरे पर सकुशल पहुँच जाऊँगा; इसीलिए मैं भी निर्द्वन्द्व होकर अपनी लेखनी-क्रीडामे व्यस्त हूँ। पड़ोसके जिस गाँवमें मैं वसा हूँ वह यमुनाके उभरे हुए वक्षके वीच थिरकता हुआ कोई सुन्दर आभूपण-सा दीख रहा है। सव कुछ जलमग्न ही है। वाहरके एक दूसरे टीले पर वने हुए एक पुराने मठमे मैंने अपने कुछ साथी-स्वजनोके साथ अपना डेरा हटा लिया है। हमारा कुछ सामान गाँव वाले पक्के मकानकी ऊपरी मजिलमें, जिस मंज़लको यमुनाकी तरगे अभी नही छू पाई है, कुछ-कुछ यमुनार्पण की भावनाके साथ ही वन्द है। सामनेके खेत, पेड़, गाँव सभी कुछ जलमग्न हैं। यमुनाका दूसरा छोर मेरी दृष्टिकी दौड़के वाहर पहुँच गया है और यमुना सामनेकी ओर नदी न रहकर एक झील-सी दीखती है। उसकी उभरी छाती पर वहते हुए छप्पर, ढोर और मानव-शव अपने साथ अगणित सँदेसे लिये चल रहे हैं। मेरे इस लेखको पढ़ते-पढ़ते उन सँदेसो तक मेरे पाठकोकी चेतनाको पहुँच जाना चाहिए। इसी समय एक औसत दर्जेका खूवसूरत फ़रिश्ता अर्थात् देव मेरे मस्तिष्कसे निकल कर काग़ज़ पर अंकित होने वाले मेरे विचारोको समझनेका प्रयत्न कर रहा है। वह देव चेतनामे मुझसे कुछ ऊपरकी हस्ती है, फिर भी मुझे समझनेके लिए अपनी चेतनाको नीचेकी ओर फैलाकर वह अपना कुछ विस्तार, विकास ही कर रहा है। उसके सम्पर्कसे मानसिक उड़ानकी एक अस्पष्ट-सी प्रेरणा मुझे भी मिल रही है। सामनेकी छोटी-सी घासस्थलीसे आता हुआ एक मोर मुझे

देखकर वही ठिठक गया है। उसे मुझसे कुछ भय है, यद्यपि यह उसकी एक बहुत भद्दी भूल है। लेकिन उसे मनुष्य मात्रसे डरनेका ही अनुभव है, डरनेके उसके पास कारण हैं। मेरी और उस मोरकी चेतनाओंके बीच एक गहरी खाई है, जिसे पार कर एक दूसरेके समीप आनेकी समाई न उसमे है और न अभी मुझमें ही है। इस मोरकी तरह और इन चीटियोंकी तरह (जो न जाने कैसे, मेरे थैलेमें रक्खे हुए मेरे नाश्तेका पता लगाकर उसकी ओर एक जुलूस बनाकर निकल पडी है) इनकी समस्याओंको जब इन्हीके दृष्टिकोणसे, बिलकुल इन्हीकी तरह अनुभव करनेके योग्य हो जाऊँगा, तब मैं एक महात्मा हो जाऊँगा। इस लेखको पढते-पढते आप क्या सोचेंगे, उसे भी आपके ही दृष्टिकोणसे जाननेका मैं प्रयत्न कर रहा हूँ। मैं किस भावनाके साथ, किन अर्थोमे ये शब्द लिख रहा हूँ उसे ठीक मेरी ही तरह अनुभव करनेका आप भी प्रयत्न करें। आप कम-से-कम मेरे लेखको इसीलिए—तद्रूप-तद्भाव और अनुचित न हो तो थोड़ी देर के लिए मेरे साथ एक-हृदय होनेके लिए ही पढ़ें। इसमें ही मेरे लिखने और आपके पढनेकी पूरी सार्थकता है।

और मेरे लिए आपकी ओरसे इस लेखका पुरस्कार ?

आप मेरे इस लेखको—बल्कि पूरी पुस्तकको—पढनेके बाद अपने आपको मेरा या मुझे अपना एक गिलास शर्बत, लस्सी, मठा, दूध या एक प्याला चायका, मौसम और अपनी सत्कार-प्रणालीके अनुसार, ऋणी समझें और उस ऋणकी अदायगीका भी ध्यान रक्खें। मुझे आप अपना एक ऐसा परिचित या अपरिचित मित्र समझें जो—आप कितने ही बडे आदमी हो—आपसे कभी कम नही ठहर सकता, और—आप कितने ही छोटे हो—आपसे अधिक नही बैठ सकता।

इतनी बातचीतके बाद मैं आपसे पूछूँगा—"क्या अब मैं जा सकता हूँ ?"

तब कही ऐसा तो न होगा कि आपको मेरे आने और जानेकी खबर ही न हो ?

●